श्री वीतरागायनमः

जैन तत्व प्रकाश

॥ अथ श्रीनमोक्कार महामन्त्र ॥

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमोआयरियाणं
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए, सव्व साहूणं
एसो पंचणमोक्कारो सव्व पावप्पणासणो मंगलाणं
च सव्वेसिं पढमं हवइ
मंगलं ॥ १ ॥

॥ अथ सवइया घनासरी चालरा लिख्यते॥

चोथे आरे तेरा वर्ष तीन आढ़ी आठ महिना,
वाकी रह्या जदवीर मुगत पधार्या है ।
पीछे जिन शासनमें मोटा मुनिराज थया,
आप तिर्या संसार थी, घणा जीव तार्या है।
सम्वत इग्यारे पनरके साल, चेत सुदि नवम,
शुक्रवार दिन निह्नव निकाल्या है ।

द्वेष करी देव गुरु धर्मतीमें भेद करी,
खोटो मत झाल्यो सठा ज्यांनें गुरु धान्या है
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नामदीनो,
कृपा राम कहै खेवो पार दया पाल्यां हैं ॥१॥
चौवीसमा महावीर देव ज्यांनें चूका कहै,
ज्यांके नाम सेती माथो मुण्डी माग खावै है
गुरु गीतारथ दया देखी काढ्यो संसार थी,
ज्यांकी निन्द्याकर सठ जनम गमावै है
जीवके वचावें मांहे पाप कहै दश आठ,
कां करा मेलीनें बोघा लोकानें वहकावै है
देव गुरु धर्म तीन, तीनांमें वतावै भिन्न,
सिद्ध पावड़ेमें कह्यो न्याय नर्क जावै है
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
कृपाराम कहै दया पुन्यवान पावै है ॥२॥
सात निह्नव आगे हूवा उवाईमें जिन कह्या,
आठमो निह्नव सिद्ध पावड़ियेमें चाल्यो है
वाणियेको सुत ग्राम कंटालेको वासी गुरु,
गीतारथ दया देखी दुखसों निकाल्यो है

अविनीत हुवो गुरांकर दियो जुदो, मोह कर्म
उदय हुवो सठ खोटो मत झाल्यो है ।
चूका कहै देव सत गुरांमें बतावे दोष,
जीव बचायां पाप कहै, बोलै जिम साल्यो है ।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
कृपाराम दया धर्म पुन्यवान झाल्यो है ॥३॥

जीव दया सुत्रां माहि ठाम ठाम कही जिन,
जीवके बचायां पाप कठेही न आणी है ।
दशमें अंगरे मांह ज्ञानी दीनो फुरमाय,
सब जीव दया काज कही जिन वाणी है ।
सूत्र आगम टीकाचूर्णी पयन्ना मांह,
जिहां तिहां जोवो जीव दया ही बखाणी है ।
दया रुचै कोई पुन्यवानरे घट मांह,
निह्नव कसाई मांस खावें जिणां ताणी है ।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
ज्ञानीका वचन सत्य हिरदेमें आणी है ॥४॥

श्रेणिक राजारे सुत हाथी भव दया पाली,
मगरथ राजा दया काज धार्यो मरणो ।

धर्म रुचि दया धार कर गया खेवो पार,
श्रेणिक पड़हो वजायो सूत्रोंमें निरणो ।
नेम जिन दया पाली छोड़ दी राजुल नारी,
मेतारज दयापाली मेट दियो मरणो ।
तेवीसमां जिनराय तापसके पासे जाय,
जीवाने वचाय दियो नवकारको सरणो ।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
जीव दया धर्म पालो जोथे चाहो तिरणो ॥५॥
आज्ञामें आलस मत करो जिन वयण सुणी,
आज्ञा वाहिर उद्यमतूं कदे मति कीजिये ।
आज्ञा तीन प्रकार केरी कही जिनवर ज्ञान,
समकित चारित्र चित्त दीजिये ।
धर्म दोय प्रकार सूत्र चारित्र सार,
मिथ्यात्वीरी करणी कहो किण मांहि लीजिये ।
आहार तणो इधकार उत्तराध्यन मंझार,
छकारण छोडिये छकारण कर लीजिये ।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नामदीनो,
[illegible] लीजिये ॥६॥

निह्नव निकल इण भांत अधिकाइ कीनी,

आरज्यांनें पास बैठी राखे सारो दिन रे ।

छेद उत्तराध्ययन माहिं ज्ञानी दीनो फुरमाय,

वाडमांहें दोप नहीं वस रहे मन रे ।

थाप रूप दोप नहीं लगावां इम कही जुदो ।

क्षेत्रवताय नित्तरोज वहिरे अन्नरे ।

दया दान पूछ्यां कपटाइ सहित जुवाव देवें,

जहर जहर वटकेतु मिल्या अन्यो अन्यरे ।

सवइयो सवायो कीनो घनाखरी नाम दीनो,

कृपाराम दया धर्म धारे सोई धन्य रे ॥७॥

श्रावकरो खाणो पीणो गहणो अव्रृत कहे,

उवाईसूत्र सुयगडांगजी वतावे है ।

गहणा कपडाने आव्रृत कहे ज्यांने कहणो,

गृही लिंगी केवल पाय मुगत क्यों जावे है ।

श्रावकने तीर्थ सुमती कह्या जिन मुख्य,

अराधक सेतीकी अव्रृत वधावें है ।

व्रत अव्रत पर नामा केरी कही जिन,

चौफरसी पुद्गल नजर न आवे है ।

सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
निह्नव कपट कर बोघानें वहकावै है ॥८॥
पड़िमा धारी श्रावकने दान दियां पाप कहै।
किसो पाप हुवे कहो निह्नवांनें कैवणो ॥
तीन करण तीन जोग पाप रातो त्याग हुवा।
जिनजी बतायो पडिमामें माग लेवणों।
निह्नव कपट करी बोघा आगे इम कहै।
साधूके जो आहार बचे वानें क्यों नहीं देवणो ॥
कल्प संभोग मिल्यां विना लेवे देवे नहीं।
कपट क्या करो सठ कित रोक रैवणो ॥
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो।
पारख्यातो करो बहते लारे नहीं वैवणो ॥ ९ ॥
श्रावकरे तीन करण तीन जोग त्याग हुआ।
भगवती सूत्रमांहे वीरजी वतायो है।
अंबडजी श्रावकरा सातसे ही शिष्यलारे।
तीन करण तीन जोग पाप वोसरायो है॥
श्रावकने दशा श्रुत स्कन्धमें श्रमणा भूत कह्यो।
उवाईमें जिन सुसाहु वुलायो है॥

ज्ञाताजी सूत्र मांह ज्ञानी दियो फुरमान ।
श्रावकनी समाप्रत श्रावक नाम पायो है ॥
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो ।
श्रावकने जहर बटको कहणो कठे आयो है ॥१०॥
कवाड़ देहेडी जिणमांह नहीं साधपणो ।
उत्तराध्ययन अध्ययन पैंतीसमां बतावे है ॥
जिहां नहीं कवाड़ देहेडी पहलो नाम जिहां ।
मनोहर इत्यादिक रह्यां दोष थावे है ॥
बृहद्कल्प मांहिं रहणो साधुने अभङ्ग दुवार ।
आरज्यांनें रहणो जठे पडदो बंधावे है ॥
गोचरीकी पटी करो नाम ले निखेधे ज्यांने ।
कहणो गोचरीमें साधु आरज्यांजी जावे है ।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो ।
कवाड़ निखेधीचटा कवाड्या जमावें है ॥ ११ ॥
भगवती शतक पनरमें केरो नाम लेई ।
चोवीसमां महावीर ज्यांनें चूका कैवे है ॥
अणुकम्पा करी जिन आपरो बचायो शिक्ष ।
अछता ओगण बोली माथे आल देवे है ॥

समणा समणी कोई नदी मांहें बहता होवै ।
आज्ञाने उल्लङ्घ साधु आप काढ़ लेवे है ॥
अनुकम्पा कीजै जिनपारको मिटायो दुःख ।
उत्तराध्ययन अध्ययन पनरमें जोवै है ॥
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो ।
ज्यांको खेवो पार जिन वचनामेंरैवै है ॥ १२ ॥
कालादिक वार करो मरण बतायो वीर ।
सोमल मरण जिन नेमजी बतायो है ॥
तिल छोड़ मांहें तिल वीरजी वताया अर ।
मरण गोसालेकेरो वीरजी जनायो है ॥
दवार कारो दाहनेम जिण भाख्योंसें मुख ।
नाग श्रीरी हीला निन्द्या ज्ञाता मांही आयो है ॥
महा शतक श्रावक रेवतीको मरण कह्यो ।
गौतमजी मूंकी जिन प्रायच्छित्त दिरायो है ॥
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो ।
आगम विहारी देख्यो जिम फुरमायो है ॥ १३ ॥
पुन्य पाप आज्ञामें नहीं आज्ञावार नहीं ।
छन्दवारो कियो तेरे दुवारसें युं गावै है ॥
मनमें नो [illegible] गम लोकां [illegible] कहै केम ।

आज्ञा माहें पुन्य आज्ञा बाहिर पाप थावे है ।
उवाई सूत्र माहिं ज्ञानी दीनो फुरमाय ।
आज्ञा बाहिर पुन्य बंधे देवतामें जावे है ॥
गोसालो जमाली जाण तापसादि तज प्राण ।
देव हुवें आराधक पद नहिं पावें है ॥
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो ।
आज्ञाका अराधक सुख सुगतीको पावें है ॥ १४ ॥
साधु आरज्यांरे महाव्रत नववाड माहिं ।
ओछे अध केरो पाठ कठेही न आयो है ॥
आरज्यांनें पहलो व्रत भांग चोथो राखणेको ।
वीतराग देव ऐसो धर्म न वतायो है ॥
आरज्यांने कवाड देवण खोलणको नाम ।
साधु विनां न्यारो सठ मूंढे सुं उठायो है ॥
कवाड़ देवण खोलणेको नाम आयो जठे ।
साधु आरज्यांरो पाठ भेलोइ वोलायो है ॥
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नामदीनो ।
वृहत्कल्पमें आरज्यांनें पडदो वंधायो है ॥ १५ ॥
थाप दोष लगावे जिणांमें नहीं साधपणो ।

कपट सु' बोले सठ ज्यांनैं इम कैवणो ॥
आडम्बर काज इण भांत पच्चक्खाण देवे।
दरशन विना थे आश्रव नहीं सेवणो ॥
केई गांम जावै इम सोगन करावै।
दुपच्चक्खाण उपदेश साधूने नहीं देवणो ॥
दरशण आवे केई आरम्भ करावे आय।
भाव नाहीं भावे यूं साधूनें नहीं लेवणो ॥
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो।
पारख्या तो करो वहते लारे नहीं वैवणो ॥ १६ ॥
राय प्रसेणी मैं परदेशी राजा मुनीपासे,
समझ्यांनें व्रत लिया पीछे दान दियो है।
आरम्भ सहित दानादिक प्रश्न पूछै,
सुयगडांग मांहे मुनिराज मून लियो है।
दशमें अङ्गमें दान देवणो निषेधे जैनें,
वीतरागदेव झूठा बोलो चोर कह्यो है।
दान दया सूत्रां मांहि ठांम ठाम कही जिन,
दान दया निषेधे जिणको फूटो हियो है।
सवइयो सावायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
दान दया रसकेई पुन्यवान पियो है ॥१७॥

केसी समणनें चित्र प्रधान कह्यो,

परदेशी धर्म सुण्यां घणी दया पालसी।

समण भिखारी सुख हंड कर थोड़ो लेसी,

दोपद चोपद घणा जीवानें उबारसी।

आगम विहारी चित्र परधान सेती कह्यो,

जाके हाथे धर्म आवें चार बोल धारसी।

उपायसु राजानें प्रधान लायो मुनिपासे,

वाणी सुणी राजा जांण्यो येही गुरु तारसी।

सवइयो सवायो कीनो घनाखरी नाम दीनो,

राजनें असार जाण्यो देखी ज्ञान आरसी ॥१८॥

अनन्त चौवीसी सब दान दे संजमलीधो,

देवे देसी अनन्ती चौवीसी जिन कयो है।

दान दियो वीर ज्यानें परीसह उपना,

कहै सठ ज्यांने कहणो दान भली जिन दियो है।

पहर छदमस्त रही केवल ज्ञान लही,

आठू ही करम दही शिव सुख लियो है।

चौदह प्रकार दान पड़ी लाभ कयो जिन,

नव भांत पुन्य न्यारो समुच्चयमें रयो है।

सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
निह्नव गाडर जेम भइये लारे भइयो है ॥१९॥
बालकनीं बोली बोल बारी शुद्ध नहीं जिम,
निन्हवने वेस्या भांड़ तीनूं लज्या रहितरे।
भांड़ बोले विकल वेश्याके नहीं शील शर्म,
निन्हव कहै चूका देव गुरुमांहे केहतरे।
चोरादिक सुतने सिखावै चोरी तरवानो,
जिम निह्नवाके दया रहित बाण देतरे।
मूजी पणो कपटपन दया रहित हुवै कुसङ्ग,
निन्हवाको मत झाले एता बोले सहितरे।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
निन्हव कोयल जिम नहीं हुवै स्वेतरे ॥२०॥
अभिग्रहो धारी मुनिराज काया वोसराई,
आगको परी सहो हुवे तोही नहीं निकलणो।
कोई काढ़वांने आय मुनीतणोतन सहाय,
सागारी निकाल वंछै उनींको उबरणो।
जीवको बचावणो निशीथ मांहे दूजे पद,
बारमे सतरमें उद्देसे मांहे निरणो।

ठाणांग मांहे कलह मिटायां फोलाभ कह्यो,
जीवणो वंछणो कह्यो भगवतीमें वरणो ।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
जींको खेवो पार दया धरमको सरणो ॥२१॥
कपट करीने सठ सुत्रोंको नाम लेवे,
जीवणो मरणो नहीं वंछणो बतावो है ।
आहारादिक लाय आछी तरे पोखे शरीरने,
ढांढादिक देखी झटकेसुं टल जावे है ।
इम कह्यां कहे हमे संजम जीवण वछा
कपट की कही जड़ आगे पल्टावे है ।
कोई अनारज आय साधांने परी सहो देवे
श्रावाक वचावे जीनें पापकिम थावे है !
सवइवो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
संथारेको नाम गोपी वोपाने वहकावे है ॥२२॥
साधुने छकारणां सुं आहार करणो छोड़नों कह्यो
उत्तराध्ययन अध्ययन छत्रीसमें वखाणिये ।
आहार करवाको न्याय ज्ञानी दिया फुरमाय
ज्ञाता अध्ययन दुजेअठारेमें जाणिये ।

दशमी कालक बत्तीस बंध आजीवकानो
आहार कन्या धर्म कैवे सूत्र अणजानिये।
धर्मक्षयोपशम भाव माहे कह्यौ जिनमुख
आहारादिक उदय भाव हिरदेमें आणिये
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
ममता उतारी जीयां शिव सुख माणिये ॥ २३॥
दुजे अंग जिन कह्यो प्राक्रमनो इधकार
अज्ञानीको अशुद्ध ज्ञानीको शुद्ध भाखीयो
तेवीशमी गाथा पद चौथेमाहे टीकावाले
पुन्य बंधकयो निर्जराको नहीं दाखियो।
सुयगड़ागमें कह्यो मिथ्या कर मास मास
संसारमें रूले कपटाइ सल्य राखीयो।
निह्नव कपटक बोधां आगे इमकहे
मिथ्यात्वी आज्ञाके बारे करणीमें नाखियो
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
मिथ्यात्वी मिथ्यात एक अनुयोगद्वार साखियो ॥२४॥
सूत्र सिद्धान्त सार चाह हृदयमें धार
निह्नवांको मत जाणो झूठ कपटाई हैं।

छोड़ निह्नवांको संग ज्ञान रूप लागो रंग
दयादान रुचि जांकी बड़ी ही पुन्याई है।
गुरु गीतारथ भेटी मिथ्यामत दियो मेटी
क्षमाको सागर भेटया सुखदाई है।
छत्ती ऋद्धि छिटकाय संजमसु मनलाय
सुगणा मगन मुनि बड़ा गुरु भाई है।
सवइवो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
कृपा राम दयावान कीरत सवाई है ॥२५॥
उगणीसे साल बत्तीस सवइया कीना
छत्तीस सुणमति कीजो रीस हृदेमें धारजो
चारबोले नरके जाय कह्यो ठाणा अंगमांय
ओरही सिद्धान्त सुण हृदय विचारजो
जीवके बचाया मांही ज्ञानी पाप कह्यो नांही
अज्ञानीके वचेनांने दूरांइ निवार जो।
अनन्ते चोवीसे जिनधर्म कह्यो भिन्न भिन्न
इम नहीं कह्यो मत जीवाने उबार जो।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
कृपाराम कहे जीव दया नित पालजो ॥२६॥

* इति *

अथ कुण्डलिया लिख्यते ।

गृहस्थीके घर साधने, बैठण वरज्यो वीर ।
कार लोप बैठे कदा, वधे पापकी सीर ॥
वधे पापकी सीर, भ्रष्ट संजम सुं भाख्यो ।
दशमी काल अध्ययन, छट्ठे में जिनवर दाख्यो ॥
सुद्ध संजम आराधतां, पहुंचे भवजल तीर ।
गृहस्थीके घर साधने, बैठण वरज्यो वीर ॥ १ ॥
जरा रोग तपस्या करी, दुरबल थयो शरीर ।
तिण कारण बैठणतणी, आज्ञा दी महावीर ॥
आज्ञा दी महावीर, मान तज सूत्र देखो ।
विन कारण नहीं कह्यो, बैठणो सूत्र पेखो ॥
मदवावी से जिण तणा, कल्पातीत गुण धीर ।
जरा रोग तपस्या करी, दुरबल थयो शरीर
तिण कारण बैठण तणी, आज्ञा दी महावीर ॥२॥
निन्हव काढी भावना, बोला वांने आय
लीधा झोली पातरा, लारे चाल्या जाय
लारे चाल्या जाय, पूठ दो नारी ऊठी
पूछ्यांकहैं निरदोष, कपटसूं बोले झूंठी

रसनारा गृद्धी थका, जिहां लावे तिहां त्याग
निन्हव फाडी भावना, घोला घांने आग ॥३॥
दोप बतावे पारका, पोते घोर अँधार
रोगान सपेतो हींगलू, चित्राम बहुत प्रकार
चित्राम बहुत प्रकार, थाप बोघा भरमावे
पूछ्यां नहीं दे जवाब, नहीं सिद्धान्त बतावे
बोघा गुर चेला मिल्या, नहीं पूछे निरधार
दोप बतावे पारका, पोते घोर अँध्यार ॥४॥
गृहस्थीके घर जायनें, निन्हव कथा सुणाय
वृहत्कल्पमें वरजियो, तीजे उद्देशामांय
तीजे उद्देशे मांह एक गाथाको भाख्यो
वहां नहीं विस्तार वही कारण सुं दाख्यो
कथा भट्ट ज्यूं मांडियो, नहीं सूत्रको न्याय
बड़े घरांमें जायने, निन्हव कथा सुणाय ॥५॥
निन्हव महा सत्यांकहें, बैठी राखे पास
उत्तराध्ययनमें जिन कह्यो, होवे शील विनाश
होवे शील विनाश, लोकमें अपजस थावे
विन भायां वह पास राखता लाज न आवे

बोघा गुरु चेला मिल्या, नहीं पूछनें त्रास
निह्नव कैवे महा सत्यां, बैठी राखे पास ॥६॥
जिन कल्पीनें वरजिया, चार बोल जिन आप
निन्हव तीन छिपायनें देवै वाड़ उथाप
देवै वाड उथाप, कपट बोघा भरमावै
समझ्या करै पिछान, अजाण्यां गोता खावै
निह्नव करता कपट सूं, एक बोल उत्थाप
जिन कल्पीने वरजिया, चार बोल जिन आप ॥७॥
जङ्गलमें लै आतापना, नहिं समणी आचार
उपासरे मैं रैवणो, कपड़ो बांधी वार
कपड़ो बाधी वार, बृहत्कल्पमें आयो
पांचमें उद्देशे मांहिं, श्रीमुख आप बतायो
कबाड़ जड़ बोना कह्यो, लो हिरदैमें धार
आरज्यांने रहवणो, कपड़ो बांधी वार ॥८॥
महा सत्यांनाम धरायनें, संजाव पटली देव
दो झोल्यां ले हाथमें, धव धव करती वेव
धव धव करती वेव सीखले भेला जावे
साधू स्वांग वणाय, जिणांको लायो खावै

व्यवहार सूत्रमें वरजियो, विन कारण नहि देख
महा सत्यां नाम भरायनें, संजाव पटली देख ॥९॥
निह्नवाकूं पहुंचाइवा, गृहस्थी जावें लार
आगे जाय त्यारी करें, भोजन वहुत प्रकार
भोजन वहोत प्रकार, त्यार कर भावना भावें
बोलावाने जाय, तुरत पातर लै आवें
रसनारा गृद्धि थका, जिहां लोवें जिहां खाय ।
निह्नवाकूं पोहचायवा, गृहस्थी लारें जाय ॥१०॥
भट्टारक भ्रामर कहै, जती खमासण वोल ।
निह्नव कै वें भावना, ये तीनों सम तोल ।
ये तीनूं सम तोल, वुलायां तीनूं जावें ।
निह्नव साध केवाय सांग लेइ भेख लजावें ।
बोघा गुरु चेला मिला, नहिं आचारको तोल ।
भट्टारक भ्रामर कहै, जती खमासण वोल ॥११॥
गोसालांने देखिया, अन्यमत वध्या अनेक ।
जमालीने क्यों दियो ज्ञानी प्रत्यक्ष देख ।
ज्ञानी प्रत्यक्ष देख, तिलांको छोड़ वतायो ।
बोघाने इम कहै, इणीमें सव गुण थायो ।

जिन सोमल ब्राह्मण तणो, मरणो कह्यो विशेष।
जो जो कारण जिन कह्या, आगम ज्ञानी देख ॥१२॥
आहार देवै भावसूं, थांनैं पासे आण।
रजी-आदिक देखनें, देवै फूंक अजाण।
देवे फूंक अजाण, देख पाछा चिर जावो।
आडा फिर कहैं लो, तुरत अशुद्ध बतावो।
मारगादि करे कारणे, बतलाओ बहु बार।
था कारण हिंसा हुई, केम रहे आचार ॥१३॥
काठा बंधन बाधिया, भात करी अंतराय।
इत्यादि करियां कह्या, अतीचार जिनराय।
अतीचार जिन राय, भात अधिके रोदीयो।
गाढ़ा वन्धन देख, तेह ढीला कर लीयो।
अतीचार लागो किसो, थे निरखधो किस न्याय।
काठा बन्धन वांधिया, भात करी अन्तराय ॥१४॥
कह्यो लगाणे पातरे, तीन पसल्ली तेल।
चंदरस देनो किहां, कह्यो कहो मानकूं मेल।
कहो मानकूं मेल, रात राखन किहां आयो।
दशमी काल अध्ययन छठे; गृहस्थी समो बतायो।

निह्नव घोघा आगले, गूंद्धी चलावे फैल।
कह्यो लगाणो पातरे, तीन पसल्ली तेल ॥१५॥
जनम गांठ आदिक करी, महोच्छव मांड्यो धूड़।
निह्नव साध केहवाय कर, करें जमारो धूड़।
करें जमारो धूड़, वीरने चूका भाखे।
पोताको निरदोष, पणों घोघाने दाखे।
झूठ कपट निह्नव तणो, जांणी रह ज्यों दूर।
जनम गांठ आदिक करी; महोच्छवमांड्यो धूड़ ॥१६॥
वारी पाणी आहारकी, बांधी भर भर लाय।
निह्नव साधकेवायने, आधा कर्मी खाय।
आधा कर्मी खाय, हियेमें इतनी आणे।
निरदोपण लै आहार, जिणांसु झूठी ताणे।
रसनारा गृद्धी थका, आहारादिकने जाय।
वारी पाणी आहारकी, बांधी भर भर लाय ॥१७॥
वाहर दिशा अरु गोचरी, गृहस्थी राखे लार।
आचारांग निशीथमें, वरज्यो ते दिलधार।
वरज्यो ते दिलधार, तइयादिक माहे वैहरै।
जो सूत्र मांहि निपेध, करे ते आपणे महरै।

वोघा गुरु चेला मिला, नहिं पूछे निरधार ।
वाहर दिशा अरु गोचरी, गृहस्थी राखै लार ॥१८॥
करे जाब तो घर तणो, खोली देखो चीत ।
लेख करावे हाजरी, या तो कूडी रीत ।
आतो कूडी रीत, केम परतीत न आवै ।
जो हीवे परतीत नित्त क्यूं लेख करावै ।
आगे जिन कीधी नहीं, नहीं वताई रीत ।
करे जावतो घरतणो, खोली देखो चीत ॥ १९ ॥
आधा कर्मी आहारको, परतिख दीसे दोष ।
हिया फूट भेला हुवै, पूजै वोघा लोक ॥
पूजै वोघा लोक, हिये एती नहिं आणे ।
निरदोषण जल आहार, किणी तरे लेतो जाणे ॥
मीठो पाणी राखनो, आहारादिक दै लोक ।
आधा कर्मी आहारको, परतक्ष दीषै दोष ॥ २० ॥
वोघानें भर मायवा, निह मांडी जार ।
कह कोडी कह कांकरा, पाटी रीगट कार ॥
पाटी रीगट कार, लेख ऊंधाही वचावे ।
जो देखणनें जाय, राग रंग करीं रिझावै ॥

अण समझो भरमी पडे, नामदू करे विचार ।
षोघानें भरमावक्षा, निडर मांडी जार ॥ २९ ॥
विन कारण नहिं सुधपणो, निर्ग्रंथी साथ विहार ।
तुच्छ पलेवण नहिं राखणो, नहीं उद्देशादिक आहार
नहीं उद्देशादिक आहार, भलोका सूं दोगेन ।
दोय घड़ी दिन रह्यां, ज्यागदिकनें पडिलेहे ॥
साध आरज्यां साथ रहे, नहीं निशीन अधिकार ।
विन कारण नहीं सुधपणो, निर्ग्रंथी साथ विहार ॥३०॥
नित लावे जो एकण घरने, वारामें एक आहार जी ।
दशमी कालिक तीजेमें कह्यो, साधु नहीं अणाचारजी
गाथा ॥

श्रीवीर जिनन्द अनुकम्पा कीधी, फोरी, लब्धि गोसालो
बचायो ।
छलेश्या छद्मस्थके होती, मोह कर्मवस राग आयो ॥१॥
जीव उठाय छांयां मेले तो, जाय महाव्रत पांचू ही
भागी या गाथा १९ मी बोल ४९ मा ॥

ब्राहमन जिमायां तमतमा पोंहचावे साख उत्तराध्य-
यन १४ में संजतीरी वेयावच्च लागियां अणुकम्पा साध

करे ३, पहला महाव्रत पूरा पड़िया आडा जड़ै किवाड़ जी, कूंटा आगल होडा अटकावे, ते निश्चय नहीं अणागारजी १ निह्नवारा लेख है ।

॥ जवाब ॥

मोलमें जो दाम देई, जोर सुं बचायो कोई
उपदेश दै समझाय जीव बचावियो
कारण चारमें सुं एक कारज कियो
किणमांहे नफो किण मांहे दोष थावियो
इम कह्यां कहै एक उपदेश माहीं धर्म
तीन मांहे पाप इम उत्तर बतावियो
इम कहे ज्यांने केणो कारणमें पाप हैंके
कारजमें पाप हेके दोनों मांहें आवियो
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
उपदेश आसरो ले वोघाने बहकावियो ॥२७॥
भगवती शतक पहले उद्देसे दूजामें कह्यो
साधुजीमें तीन भली लेश्याका उचारजी
आचारांग श्रुत स्कन्द दूजे अध्ययन पनरमें
भली लेश्या आयां जिन हुवै अणगारजी

भगवती शतक नवमे उद्देशे छत्तीसमाहें
भली तीन लेस्या आगममें अधिकारजी
ठाणा अंगठाणे तीजे दूजे उद्देशमें घणा
पन्नवणापद उत्तराध्ययन विस्तार जी
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
लेस्याका लक्षण सुण हिरदे विचारजी ॥२८॥

गोसालाने वीरजी बचायो जी सु चूका केवै
कुहेत लगावै सठ झूठा देवै आलजी
निह्नव कपट कर बोधा आगे इम कहे
उवार्‌यां हो लाभ क्यों नीराख्या अणगारजी
इम कहे ज्यांने केणो केवली त्रिकाल जाणे
सावत्थी क्यों आया कर जावता विहारजी
आउखो निमित्त आयो जांणी लियो जिनराज
मेल्या नहीं दूर वर्ज्या राखियो व्यवहारजी
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
वीरजीने चूका कहै डूबा कालीधार जी ॥२९॥
निशीथ उद्देशे ग्यारमांमें वीर भांगा चार कह्या
साधु ओर आरज्यांने भेला नहीं रैवणो

व्यवहार उद्देशे पांचमांमें साधु छतां मुनिः
आरज्यां कै पास वचन प्रायश्चित्त नही लेवणो
निशीथ उद्देशे चौथे साधु संज्ञा कियां बिना
आरज्यां रे उपासरे प्रवेश न कैवणो
साधु आरज्यांने एक उपासरे आहारादिक मने
वृहत कल्पमें उद्देशे तीजे केवणो
सवइयो सवायो कीनो घणासरी नाम दीनो
कारण सुं आहारादिक लेवणो न देवणो ॥३०॥
निह्नव कपट कर बोधाने बतावे पाठ
साधु आरज्यांने भेलो भोगणोनै रैवणो
व्यवहार उद्देसे सातमांमें एसो पाठ नाहीं दीखै
कठे किम वोलो पाठ देखावो यूं कैंवणो
उत्तराध्ययन सोलमें अध्ययन तीजी वाडमां है
स्त्री वैठे घड़ी दोय जहां नहीं ठैवणो
उत्तराध्ययन निशीथ व्यवहार वृहत्कल्प आदि
स्त्रीको परचो वरज्यो पाठ देख लेवणो
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
स्त्रीको कर फरसे ज्यांने डंड कांई कैवणो ॥३१॥

अचित्त द्रव्यादिक संती कोई पुन्यवान आप
आपको तो पाप टारे दूजाको टरायो है
अशुभ योग आश्रव मांहि लियो कयो
शुभ योग संवरमें ईमें किन्यो पायो है
सनतकुमार तीजे देवलोक ऋद्धि पाई
चारों ही तीरथने सुख शाता उपजायो है
नेमि जिन बागमें विराज्या तिण अवसर
किसन सहाय दे संजम दिरायो है
सवइया सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो
ज्ञाता अन्तगड़ मांहे एसो पाठ आयो है ॥३२॥
अनुकम्पा निरवद्य सावद्य कहीने सठ,
पोगलांके घट्ट घोचों झूठो ही फसायो है ॥
अनुकम्पा निरवद्य सावद्य हुंवाथी सठ
धरम दलाली मांहे पिण फेर थायो है
नन्दिपेण उपदेश देइने दीक्षा दराई
चित्र परदेशी केशी स्वामि समजायो है
कोई मुख जयणा करी मारग वतायो शुद्ध
कोई अजयणासुं मारग दिखायो है

सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो

मारग सावद्य निरवद्य किम थायो है ॥३३॥

भगवती सतक सोलमें उद्देसे छठा मांही ,

रतनांकी माला जोड़ा देख्यो जगन्नाथजी ।

चोथा सुपनारे मांहे छोटी बड़ी कही नहीं,

झूठी ढाला जोड़सठ बोधाने वहकातजी ।

समकित रतन आवश्यकमें जिन कह्यो ,

सम्यक्त रत्न ज्ञाता सूत्र मांहे बातजी ।

सम्यक्त रत्न ले दोई धर्म सम कह्या,

व्रत रतनाको जो बहुत पखपातजी ।

सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो ।

समकित पायां निश्चै मुगतीमें जातजी ॥३४॥

अन्न वस्त्रादिक दियां अव्रत सेवाइ कहे,

अव्रत तो दीधी लीधी आवै नहिपारकी ।

निह्नवाके श्रद्धाएम अव्रतअरूपी जीव,

खावै देवै पुद्गलरूपी बात ये विचारकी ।

भगवती शतक पहले उद्देशे नवमेमें कह्यो,

अव्रतकी क्रिया क्षत्री राजा रङ्क सारखी ।

चोरादिक वित्त ग्रह्यो आकुल व्याकुल थयो,

थोड़ी क्रिया लाधां या है वाणी अणगारकी

सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,

पारखातो करो सठ खवर न पारकी ॥ ३५ ।

मूल दृष्टान्त कुण आत्माजीव अरूपी,

निरवद्य भाव द्रव्य गुण पर्यायी है

द्रव्यादि अज्ञान ज्ञान तलावतेमें कियो,

हिसाव निह्नवाकी आखुणो कपटाई है

मूल नव नाम कहेय दूजो दृष्टान्त देय,

आश्रव जीव एक जुगल मिलाई है

तलावने नालो एक उत्तर यूं देणो देख,

पुद्गल तलाव नालो एक कहवाई है

सवइयो सवायों कीनो घनासरी नाम दीनो,

यूं नांम हवेलीको उत्तर देखाई है ॥ ३६ ।

तीन करण तीन योग अठारे पापरा,

त्याग किया वर्णता गिणती भगवतीमें जाणीयो

तीन करण तीन योग अठारे पापरा त्याग किया,

अंवडजीका चेला उवाई पिछाणीयो

तीन करण तीन योग अठारे पापरा त्याग किया,
आनन्दादि श्रावग उपासक दसा जाणियो।
तीन करण तीन योग अठारा पापरा,
त्याग किया संखादिक भगवती माहिजिन वाणियो।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
अन्नतरी किसी देखो तेज पखताणियो ॥ ३७ ॥
श्रावकरो खाणो पीणो कपड़ो आदि सबांने,
अव्रतमें गिणेज्यांनें इण भांत कैवणो।
राख्यां पाप दियां पाप भलो जाणै तैमैं पाप,
तीना मांहे जिन साधूनें क्या सेवणो।
कोई तो आगेड़ा लेवै कोई पाड़ीहारा सेवै,
इत्यादि पाप केवो थानें कलपे नहीं रैवणो।
भगवती सतक बारमें उद्देसे पांचमामें,
पापनें चोफरसी कह्यो पाठ देख लेवणो ॥
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
पारख्या तो करो वहते लारे नहीं वैवणो ॥ ३८ ॥
भगवती सतक वीसमें उद्देसे आठमांसें,
श्रावकने तीरथमें लीनों या जिन वाणी है।

पाल्तजी श्रावकने महात्मा कह्या,
जिन सीक्ष कह्या उत्राध्ययन इकीसमें जाणी है ॥
धम्मिया धम्माणुया धर्म इष्ट आद देई,
सुसील सुव्वया गुण उवाई पिछाणी है ।
सुयगडांग मांहे धर्माधर्म पक्ष दोय,
तीहां धर्म पक्षमां है साधु श्रावक दो आणी है ।
सवइयो सवायो कीनो धनासरी नाम दीनो,
साधुनें श्रावक गुण व्रतांसु वखाणी है ॥ ३९ ॥
दशमी कालिक छठे अध्ययन आठमी गाथा
अठारे थांनक जुदा जुदा किया जाणजी ।
सोलमा थानक मांहे गृहस्थी घर वैठे ताकूं,
अनाचार मिथ्यात अब्रह्म प्राण हाणजी ।
आधा कर्मी दोष थाय जाचकादि अन्तराय,
क्रोधवधे अपूठी कुशील व्रतहाणजी ।
इत्यादिक दोष घणा वैठा कह्या तीन जणा,
तपसी जरानें रोगादी हुसुर ठाणजी ।
सवइयो सवायो कीनो धनासरी नाम दीनो,
दशमी कालिक देखो तज पखताणजी ॥ ४० ॥

बृहत्कल्प कह्यो तीजे उद्देसे अन्तर घर मांही,
सतरे बोल करना बीतराग पालीया।
अन्तर घरको खोटो अर्थ करीनें निह्नव सठ,
रसोडादिक घर कह वोघांने बहका लिया।
अन्तर घरमें तपसीनें ज़रा रोगीयां ने,
सतरे बोल करणा कह्या ईंमें आगे चालीया।
दशमी कालिक सुयगडांग बृहत्कल्प,
ओर सुत्रांमें वरज्यो पिण देखे नहीं वालीया।
सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,
अज्ञानमें खूताजिणा अज्ञानी सरणा लिया ॥ ४१ ॥
छठे गुण ठाणे मनपर जव कषाय कुशील,
छदमस्त रागसहित करी चूका कैवै है।
चारित्र नियंठा योग हेतु आदिक केता पावै,
भवकेता करे संसारमें केता रैवै है।
लारे पांचे ते तो भगवन्तमें बताओ सब,
इम पूछ्यां मूढ सफा जुवाब नहीं देवै है।
भगवन्त जीव दया ऊपरें अध्ययन देख,
परिक्षा तो करे नांहीं वहतां लारे वैवै है।

सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,

कल्पातीत जिनकी अगवणी लेवै है ॥ ४२॥

जानु परिमांण नदी उतरे धर्म कहै,

पाणी संघट्टासुं आहार देतां टल जावै है।

कमाड निश्रेणी अने किमाडियां जडावैमठ,

जिनके ऊपर पगी कुगुरान मिलावै है।

लड़की वाणकी कैई गर्भवन्तीको नाम लेय,

पट्मासवर्ष्यां उरयां बैठां दोष थावै है।

इम कहै ज्यांनें केणो याको परमाण किसो,

किवाड किमाड़ी केता हाथको कहवावै है।

सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,

निह्नव कपट करी चोघांने वहकावै है ॥ ४३ ॥

इसाभद्र श्रावकानें श्रावकां वन्दनाकीनी,

भगवन्त अरु वरु जिन नहीं पालिया।

पोष्कलीजी संखजीरी हवेलीमें आया,

जिहां उपलाजी वन्दनाकीनी आसणादिदियालिया।

संखजीने पुष्कलीजी पोसामांह वन्दना कीनी

कह्यो चालो आहार करो संखजी नहीं हालिया।

भगवतीमें बहुभाव ज्ञानी दिया फुरमाय,

बन्दना करी लियां पछे अपराध खमालिया।

सवईयो सवायो कीनो धनासरी नाम दीनो,

अंबडने सिष्यां बन्दना कीनी उवाईमें चालिया॥४४॥

उतराध्ययन अध्यन छावीसमें छकारणसुं,

आहार करणो कह्यो नाम न्यारा न्यारा धारजी।

वेदना वेयावच्च चैत्य इरज्यांने,

संजमठाए जीतवनें अर्थ छठी धर्मनो विस्तारजी।

छकारण छोडना बतायो वीतराग देव,

ज्यांरा न्यारा २ नाम करत उच्चारजी।

रोग परीषह जीव दया ब्रह्मचर्य अर्थ,

तपहेत शरीर त्याग कर दे संथारजी।

सवइयो सवायो कीनो घनासरी नाम दीनो,

खाणेमें धर्म हो तो क्यों तजे अणगारजी॥ ४५॥

॥ इति ऋषि कृपारामजी कृत सवाइया सम्पूर्णम्॥

गौ माताकी पुकार

सुणो सुणो अंग्रेज बहादुर, गऊ अरजी करती ।
मुझ में क्या तकसीर आज में, येहनाक मरती ॥१॥
मेरा दूध सब दुनिया पीवे, मैं जगकी माता ।
ऐसी बात विचार देख, क्यों मुझको मरवाता ॥२॥
नर दुनियामें ज्ञान जो पाया, नजर नहीं आता ।
मुझे मारकर पाप न जाणे, क्या गुरू सिखलाता ॥३॥
वेदरदी तू दरद न जाणे, जुलम हुआ जाता ।
महां अनारज कसाइयांसे, मुझको मरवाता ॥४॥
सभी समझके देखो साहिब, गऊ बहुत डरती ।
गरीब और लाचार दीन मैं, दूध पिलाके सुख करती ॥५॥
मेरा दुख मैं कहूं किसी पै, कौण सुणै अरजी ।
ज्ञानी होय तो ज्ञानसे समझे, और सभी गरजी ॥६॥
दूध पिलाती पुत्र जनमती, दुनिया पालन कूं ।
जमींदारका करूं गुजारा, हासिल राजा कूं ॥७॥
वैद्यक ग्रंथ पढ़ा जो पूरा, मेरी कदर जाणै ।
शोथ संग्रहणी अजीर्ण खोवे, मेरी छाछ स्याणै ॥८॥
रक्त पित्त दही सिखरन सेती, अतीसार जावै ।

नेत्र रोग सब और रतोंधी, घीसैं नास पावैं ॥९॥
सभी रोगपर दवा घृतकी, दवा संग बणती ।
वादी पित्त सब रोग मिटावे, ऐसा मैं सुणती ॥१०॥
दवा शुद्ध गोबरसें केई, गोमूत्र सें होती ।
पांडू शोथ गोमूत्रसे मिटता, जहर केई खोती ॥११॥
दूध दही घृत छाछ बिगर नर, किसीकै नहीं सरता ।
मुझसैं पलै और मुझको मारै ऐसा जुलुम करता ॥१२॥
दूध दही घृत घरमें वरतै, छाछज वैटन कूं ।
इतने सुख मेरे संघ रहते, लष्ट पुष्ट तन कूं ॥१३॥
गाड़ी रथके पुत्र जोतते, खेती करनन कूं ।
ईंधन और घरकी करै शोभा, गोवर नीपन कूं ॥१४॥
नृपतीके शिर चमर ढोलावै, शोभा बहुत करती ।
मैं अबला लाचार होयकर, सरणा हिए धरती ॥१५॥
॥ इति गौअरजी पदं ॥

॥ अथ साधु करणी, शिक्षा ढाल ॥

खुशामदी करै दातारनी रमावै बाल, जाणै आहा
आपे आछी तरै, बांधे पेटनी पाल, ओ मारग नहीं सा
रो (आंकड़ी) बेटा वहू मां बापना, असत्रीनै भरतार

सासू वहू सगातणा, कहै समाचार ॥ ओं० ॥ २ ॥ लाभ अलाभ भाखे वले, ज्योतिषने जोय । जनम मरण वताय दै, दोष तीसरो होय ॥ ओं० ॥ ३ ॥ जात जणावे आ-परी, दीन दया मणो थाय । आहारन आवे पातरें, मूढ़ो दै कुमलाय ॥ ओं० ॥ ४ ॥ ओषध भेषज, करे वले देवै सराप । क्रोध करी लड़ विध लिये, ज्ञानी कह्यो पाप॥ ओं० ॥ ५ ॥ मान माया लोभकरी, हूवा दोषण दश । पहिला पछेनें साथे करै घणोजस ॥ ओं ॥ ६ ॥ चारण दे विरदावली, भोजगने भाट । अणदीधां ओगुण करे, थो-थो वैठो पाट ॥ ओं ॥ ७ ॥ विद्या फोर कामण करे, वले मन्त्रने चूर्न । संजोग मेले सर्वथा, इसड़ा करे खून ॥ओं ॥ ८ ॥ उसासणारा दोषए गलावे गर्भ । उत्तम ए नहीं आदरै, साधू टाले सर्व ॥ ओं० ॥ ९ ॥ रसनाना लंपटी थका, मेलै आहार संजोग, आछो मिलियां राजी हुवे भूंडो मिलियां सोग ॥ओं०॥१०॥ ताक २ जावे गोचरी लावे ताजा माल । उवास व्रत करै नहीं कुन्दा वन रह्या लाल ॥ओं०॥११॥ रसनारा गिरधी थका, आरामें जाय । लघुता लागे लोकमें; निंदा धर्मनी थाय ॥ओं॥१२॥ उण

दिन जाय सके नहीं, रहै रातरा ध्यान। प्रभाते जावे तेड़ीयो, स्यूं पायो ज्ञान ।।ओं०।।१३।। भारी आहार भली तरे, खावे ठंढोठार। भागेवाड तोल्याथका, पीछै हुवै भांड़ ।।ओं०।।१४।। वेसवार भला घालिया, भलो दीयो वघार। तीवण आछी तरे कियो, वले कहै छमकार ।। ओं०।।१५।। चावल दालमें घी घणो सरायने खाय। चा-रित्रने करै कोयलो, कह्यो सूत्तर मांय ।।ओं०।।१६।। नि-रसो आहार तीवण वले, नहीं मिरचने लूण। चारित्रमें निकले धुओं, खावे माथो धूण ।।ओं०।।१७।। एकण घर-सुं वहरता, दश दश जणनो आहार। बाई असन करै मोकलो, भावना भागै तिवार ।।ओं०।।१८।। कोई पंथी पूछे क्यूं खड़ा, देखूं साधारी वाट। रस गिरधाने वो जाय कहे, दोड्या जाय गहगाट ।।ओं०।।१९।। माटे पाणी मा-यने, नाखै मठी राख, वहरावणरे कारणै, वहरे साधपणो नाख ।।ओं०।।२०।। आधा करमी आहार लै, वाजै मोटा साध। जिन पंथने तेरे तीन कियो, सेवै सुख अगाध ।। ओं०।।२१।। लाखां कीडारी घातसुं, वणै रेशमी वस्त्र। सो पहिरे निरदई थका, वाजै पूज पवित्र ।।ओं०।।२२।।

दूसरे गाम पोहचाइवा, जाणै गृहस्थी लार। भाव भेल आरम्भ करें, वहरी खावें वो आहार ॥ओं०॥२३॥ जागा नीपावे आपणी, कवेलू देवें फिराय। आगना जतावे आपरी, साधपणो उठ जाय ॥ओं॥२४॥ वस्त्र पात्र थानक वलै, अनै चोथो आहार। साधू जो सूझता भोगवै ज्यांरी हू वलिहार ॥ओं०॥२५॥ आरजा जीमावे हाथसु वांटकर देवै आहार। पासै वैठी रहे आरज्या, चौथो व्रत गयो हार ॥ओं०॥२६॥ सुगडांग सूत्रमें कह्यो, तिरंसो तारणहार। डूवे जिकै किम तारसी, जोवो हिरदै विचार ॥ओं०॥२७॥

॥ इति पदं ॥

श्रीवीतरागाय नमः

श्री सुखविपाक-सूत्रम्

॥ अर्हं ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सोहम्मे समोसढे जंबू जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—जइणं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्ते णं दुहविवागाणं अयमट्ठे पण्णत्ते सुहविवागाणं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते? तते. णं से सुहम्मे अणगारे जंबू अणगारं एवं वयासी-एवं खलु जंबू! समणेणं

भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता। तंजहा-सुबाहू १ भद्दनंदीय २, सुजाए य ३, सुवासवे ४, तहेव जिणदासे ५, धणपती य ६, महब्बले ७॥१॥ भद्दनंदी ८, महचंदे ९ वरदत्ते १०॥

जइणं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स सुहविवागाणं जाव के अट्ठे पण्णत्ते? तते णं से सुहम्मे अणगारे जंबू अणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं हत्थिसीसे णामं णयरे होत्था रिद्धित्थिमियस-

मिच्छे, तस्स णं हत्थिसीसस्स णगरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए एत्थणं पुप्फकरंडए णामं उज्जाणे होत्था सव्वो उय० तत्थणं कयवण मालपियस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था दिव्वे० तत्थणं हत्थिसीसे णयरे अदीणसत्तू णामं राया होत्था महया० वण्णओ, तस्स णं अदीणसत्तुस्स रण्णो धारिणीपामुक्खं देवीसहस्सं ओरोहेयावि होत्था। तत्तेणं सा धारिणी देवी अण्णया कयाइ तंसि तारिसगंसि वास घरंसि जाव सीहं सुमिणे पासइ जहा मेहस्स जम्मणं तहा भाणियव्वं। सुवाहुकुमारे जाव अलं भोग समत्थे यावि

जाणंति, जाणित्ता अम्मापियरो पंच पासायवडिंसगसयाइं करावेंति, अब्भु-ग्गय० भवणं एवं जहामहावलस्स रण्णो, णवरं पुप्फचूलापामोक्खाणं पंचण्हं रायवरकण्णयसयाणं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हावेंति तहेव पंचसइओ दाओ जाव उप्पिं पासायवरगए फुट्ट-माणेहिं मुइंगमत्थएहिं जाव विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसढे. परिसा निग्गया, अदीणसत्तू जहाकूणिओ तहेव निग्गओ सुबाहू वि-जहा जमाली तहा रहेणं नि-ग्गए जाव धम्मो कहिओ राया परिसा पडिगया। तएणं से सुबाहुकुमारे सम-

णस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ तुट्ठ० उट्ठाए उट्ठेति जाव एवं वयासि-सद्दहामिणं भंते ! णिग्गंथं पावयणं० जहाणं देवाणुप्पियाणं अंतिए बहवे राईसर जाव सत्थवाहप्पभिइओ मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया नो खलु अहणं तहा संचाएमि मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए अहणं देवाणुप्पियाणं अंतिए पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामि, अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह । तणंसे सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ

महावीरस्स अंतिए पंचाणुव्वइयं सत्त-
सिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं
पडिवज्जति पडिवजित्ता तमेव चाउग्घंटं
आसरहं दुरूहति जामेव दिसं पाउब्भूए
तामेवदिसं पडिगए। ते णं कालेणं
तेणं समएणं समणस्स भगवओ महा-
वीरस्स जट्ठे अंतेवासी इंदभूई नामं
अणगारे जाव एवं वयासी-अहो णं
भंते! सुवाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे कंते २
पिए २ मणुणे २ मणामे २ सोमे सु-
भगे पियदंसणे सुरूवे बहुजणस्सवियणं
भंते! सुवाहुकुमारे इट्ठे ५ सोमे ४
साहुजणस्सवियणं भंते! सुवाहुकु-
मारे इट्ठे ५ जाव सुरूवे। सुबाहुणा

भंते ! कुमारेणं इमा एयारूवा उराला माणुस्सरिद्धी किरणा लद्धा ? किरणा पत्ता ? किरणा अभिसमन्नागया ? के वा एस आसी पुव्वभवे ? एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे हत्थि-णाउरे णामं णगरे होत्था रिद्धित्थि-मिय समिद्धे तत्थाणं हत्थिणाउरे णगरे सुमुहे नामं गाहावई परि-वसइ अड्ढे० तेणं कालेणं तेणं समए णं धम्मघोसा णामं थेरा जाति सं-पन्ना जाव पंचहिं समणसएहिं सद्धिं संपरिवुडा पुव्वाणुपुव्विं चरमाणा गामा णुगामं दूइज्जमाणा जेणेव हत्थिणाउरे

णगरे जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे ते-
णेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अहाप-
डिरूवं उग्गहं उग्गिएिहत्ता संजमेणं त-
वसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति । ते-
णं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसाणं
थेराणं अन्तेवासी सुदत्ते णामं अण-
गारे उराले जाव लेस्से मासं मासेणं
खममाणे विहरति । तए णं से सुदत्ते
अणगारे मासक्खमणपारणगंसि पढ-
माये पोरिसीये सज्झायं करेति जहा
गोयमसामी तहेव धम्मघोसे (सुधम्मे)
थेरे आपुच्छति जाव अडमाणेउच्च-
नीय मज्झिमाइं कुलाइं सुमुहस्स गाहा-
वतिस्स गेहे अणुप्पविट्ठे तएणं से

सुमुहे गाहावती सुदत्तं अणगारं एज-
माणं पासति २ त्ता हट्ठतुट्ठे चितमाणं
दिया आसणातो अब्भुट्ठेति २ त्ता
पायपीढाओ पच्चोरुहति २ त्ता पाउ-
याओ ओमुयति २ त्ता एगसाडियं उ-
त्तरासंगं करेति २ त्ता सुदत्तं अणगारं
सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छति २ त्ता ति-
क्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २ त्ता
वंदति णमंसति २ त्ता जेणेव भत्तघरे
तेणेव उवागच्छति २ त्ता सयहत्थेणं
विउलेणं असणपाणखाइम साइमेणं
पडिलाभेस्सामीति तुट्ठे पडिलाभे मा-
णेवि तुट्ठे पडिलाभिएवि तुट्ठे । तते
णं तस्स सुमुहस्स गाहावइस्स तेणं

दव्वसुद्धेणं दायगसुद्धेणं पडिगाहग-
सुद्धेणं तिविहेणं तिकरणसुद्धेणं सुदत्ते
अणगारे पडिलाभिए समाणे संसारे
परित्तीकए मणुस्साउए निबद्धे गेहंसि
य से इमाइ पंच दिव्वाइं पाउब्भूयाइं
तंजहा-वसुहारा वुट्ठा १ दसद्धवन्ने कु-
सुमे निवातिते २ चेलुक्खेवे कए ३
आहयाओ देवदुंदुहीओ ४ अंतरावि-
यणं आगासंसि अहो दाणं महोदाणं
घुट्ठे य ५। हत्थिणाउरे नयरे सिंघा-
डग जाव पहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स
एवमाइक्खइ ४-धणो णं देवाणुप्पिया!
सुमुहे गाहावई सुकयपुन्ने कयलक्खणे
सलद्धे णं मणुस्सजम्मे सकयरिद्धी य

जाव तं धन्ने णं देवाणुप्पिया ! सुमुहे गाहावई । तत्तेणंसे
सुमुहे गाहावई वहूइं वाससयाइं आउयं पालइत्ता काल-
मासे कालं किच्चा इहेव हत्थि- सीसे णगरे अदीण-
सत्तुस्स रन्नो धारिणीएदेवीए कुच्छिंसि पुत्तताए उव-
वन्ने । ततेणं साधारिणी देवी सयणिज्जंसि सुत्तजा-
गरा ओहीरमाणी २ सीहं पासति सेसं तं चेव जाव उप्पिं
पासाए विहरति तं एयं खलु गोयमा । सुबाहुणा इमा
एयारूवा माणुस्सरिद्धी लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया । पभू
णं भंते ! सुबाहुकुमारे देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता
अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ? हंता पभू । तते णं
से भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २
त्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति । तते णं
से समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइं हत्थिसीसाओ
णगराओ पुप्फकरंडाओ उज्जाणाओ कयवणमालपियस्स
जक्खस्स जक्खायणाओ पडिणिक्खमति २ त्ता वहिया
जणवयविहारं विहरति । तते णं से सुबाहुकुमारे समणो
वासये जाते अभिगयजीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे विह-
रति । तते णं से सुबाहुकुमारे अन्नया कयाइं चाउद्दस-
ट्ठमुदिट्ठपुण्णमासिणीसु जेणेव पोसहसाला तेणेव उवाग-

च्छति २ त्ता पोसहसालं पमज्जति २ त्ता उच्चारपासवण-
भूमिं पडिलेहति २ त्ता दब्भ संथारं संथरेइ २ त्ता दब्भ-
संथारं दुरूहइ २ त्ता अट्ठमभत्तं पगिण्हइ २ त्ता पोसह-
सालाए पोसहिए अट्ठमभत्तिए पोसहं पडिजागरमाणे
विहरति । तए णं तस्स सुबाहुस्स कुमारस्स पुव्वर
त्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमे
एयारूवे अज्झत्थिए चिंतीए पत्थीए मणोगए संकप्पे
समुप्पन्ने धण्णा णं ते गामागर णगर जाव सन्निवेसा
जत्थणं समणे भगवं महावीरे जाव विहरति, धन्नाण
तेराईसरतलवर० जेणं समणस्स भगवओ महावीरस्स
अंतिए मुंडा जाव पव्वयंति, धन्ना णं ते राईसरतलवर०
जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए पंचाणु-
व्वइयं जाव गिहिधम्मं पडिवज्जंति, धन्ना णं ते राईसर
जाव जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्म
सुणेंति तं जत्तिणं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणु पुव्वि
चरमाणे गामा णुगामं दूइज्जमाणे इहमा गच्छिज्जा जाव
विहरिज्जा ततेणं अहं समणस्स भगवओ महावीरस्स
अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वएज्जा । ततेणं समणे भगव

महावीरे सुवाहुस्स कुमारस्स इमं एयारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणु गामं दूइज्जमाणे जेणेव हत्थिसीसे णगरे जेणेव पुप्फकरंडे उज्जाणे जेणेव कयवणमालपियरस्स जक्खस्स जक्खायतणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता अहापडिरूवं उग्गहं उगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति परिसा राया निग्गया ततेणं तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स तं महया जहा पढमं तहा निग्गओ धम्मो कहिओ परिसा राया पडगिया। तते णं से सुवाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ तुट्ठ जहा मेहे तहा अम्मापियरो आपुच्छति, णिक्खमणाभिसेओ तहेव जाव अणगारे जाते ईरियासमिए जाव वंभयारी, ततेणं से सुवाहू अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जति २ त्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम० तवोविहाणेहिं अप्पाणं भावित्ता वहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे

कप्पे देवत्ताए उववन्ने, से णं ततो देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति २ त्ता केवलं बोहिं बुज्झिहिति २ त्ता तहारूवाणं थेराणं अंतिए मुंडे जाव पव्वइस्सति, से णं तत्थ बहूइं वासाइं सामण्णं परियागं पाउणिहिति आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालं करिहिति सणंकुमारे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओ देवलोगाओ माणुस्सं पव्वज्जा बंभलोए ततो माणुस्सं महासुक्के ततो माणुस्सं आणते देवे ततो माणुस्सं ततो आरणे देवे ततो माणुस्सं सव्वट्ठसिद्धे, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता महाविदेहे वासे जाव अड्ढाइं जहा दढपइन्ने सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परीनिव्वाहिति सव्व दुक्खाण मन्तं करेहिति एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते ॥ पढमं अज्झयणं समत्तं ॥१॥

वितियस्स णं उक्खेवो—एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभपुरे णगरे थूभकरंड उज्जाणे धन्नो जक्खो धणावहो राया सरस्सई देवी सुमिणदंसणं कहणं

जम्मणं वालत्तणं कलाओ य जुव्वणे पाणिग्गहणं दाओ पासाद० भोगाय जहा सुवाहुस्स, नवरं भद्दनंदी कुमारे सिरिदेवी पामोक्खा णं पञ्चसया सामी समोसरणं साव गधम्मं पुव्वभवपुच्छा महाविदेहे वासे पुण्डरीकिणी णगरी विजयते कुमारे जुगवाहू तित्थियरे पडिलाभिए माणुस्सा- उए निबद्धे इहं उप्पन्ने, सेसं जहा सुबाहुस्स जाव महा- विदेहे वासे सिज्झिहित वुज्झिहिति मुच्चिहिति परिनिव्वा- हिति सव्वदुक्खाणमंतं करेहिति ॥ वितियं अज्झयणं समत्तं ॥ २ ॥

तच्चस्स उक्खेवो—वीरपुरं णगरं मणोरमं उज्जाणं वीरकण्हे जक्खे मित्ते राया सिरी देवी सुजाए कुमारे वलसिरिपामोक्खा पञ्चसयकन्ना सामी समोसरणं पुव्व- भवपुच्छा उसुयारे नयरे उसभदत्ते गाहावई पुप्फदत्ते अण- गारे पडिलाभिए मणुस्साउए निबद्धे इहं उप्पन्ने जाव महा विदेहे वासे सिज्झिहिति वुज्झिहिति मुच्चिहिति परीनिव्वाहिति सव्व दुक्खाण मन्तं करेहिति ॥ तइयं अज्झयणं समत्तं ॥३॥

चोत्थस्स उक्खेवो—विजयपुरं णगरं णंदणवण

(मणोरमं) उज्जाणं असोगो जक्खो वासवदत्ते राया कण्हा देवी सुवासवे कुमारे भद्दापामोक्खा णं पंचसया जाव पुव्वभवे कोसंबी णगरी धणपाले राया वेसमणभद्दे अणगारे पडिलाभिए इह जाव सिद्धे ॥ चोत्थं अज्झयणं समत्तं ॥४॥

पञ्चमस्स उक्खेवओ—सोगंधिया णगरी नीलासोए उज्जाणे सुकालो जक्खो अप्पडिहओ राया सुकन्ना देवी महचंदे कुमारे तस्स अरहदत्ता भारिया जिणदासो पुत्तो तित्थयरागमणं जिणदासपुव्वभवो मज्झमिया णगरी मेहरहो राया सुधम्मे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥ पञ्चमं अज्झयणं समत्तं ॥५॥

छट्ठस्स उक्खेवओ—कणगपुरं णगरं सेयासोयं उज्जाणं वीरभद्दो जक्खो पियचन्दो राया सुभद्दा देवी वेसमणे कुमारे जुवराया सिरिदेवी पामोक्खा पञ्चसया कन्ना पाणिग्गहणं तित्थयरागमणं धनवती जुवरायपुत्ते जाव पुव्वभवो मणिवया नगरी मित्तो राया संभूतिविजए अणगारे पडिलाभिते जाव सिद्धे ॥ छट्ठं अज्झयणं समत्तं ॥ ६ ॥

सत्तमस्स उक्खेवो—महापुरं णगरं रत्तासोगं उज्जाणं रत्तपाओ जक्खो वले राया सुभद्दा देवी महब्बले कुमारे रत्तवईपामोक्खाओ पञ्चसया कन्ना पाणिग्गहणं तित्थयरागमणं जाव पुव्वभवो मणिपुरं णगरं णागदत्ते गाहावती इन्ददत्ते अणगारे पडिलाभिते जाव सिद्धे ॥ सत्तमं अज्झयणं समत्तं ॥ ७ ॥

अट्ठमस्स उक्खेवो—सुघोसं णगरं देवरमणं उज्जाणं वीरसेणो जक्खो अज्जुण्णो राया तत्तवती देवी भद्दनन्दी कुमारे सिरिदेवीपामोक्खा पञ्चसयाजाव पुव्वभवे महाघोसे णगरे धम्मघोसे गाहावती धम्मसीहे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥ अट्ठमं अज्झयणं समत्तं ॥८॥

णवमस्स उक्खेवो—चंपा णगरी पुन्नभद्दे उज्जाणे पुन्नभद्दो जक्खोदत्ते राया रत्तवई देवी महचंदे कुमारे जुवराया सिरिकंतापामोक्खा णं पञ्चसयाकन्नाजाव पुव्वभवो तिगिच्छी णगरी जियसत्तू राया धम्मवीरिए अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥ नवमं अज्झयणं समत्तं ॥ ९ ॥

जति णं दसमस्स उक्खेवो—एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं साएय नामं नयरं होत्था उत्तरकुरु

उज्जाणे पासमिओ जक्खो मित्तनंदी राया सिरिकंता देवी वरदत्ते कुमारे वरसेणापामोक्खा णं पञ्चदेवीसया तित्थयरागमणं सावगधम्मं पुव्वभवो पुच्छा सत्तदुवारे नगरे विमलवाहणे राया धम्मरुई अणगारं पडिलाभिए संसारे परित्तीकए मणुस्साउए निबद्धे इहं उप्पन्ने सेसं जहा सुबाहुस्स कुमारस्स चिंता जाव पव्वज्जा कप्पंतरिओ जाव सव्वट्ठसिद्धे ततो महाविदेहे जहा दढपइन्नो जाव सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिनिव्वाहिति सव्वदुक्खाणमंतं करेहिति ॥ एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं सुहविवागाणं दसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, सेवं भंते ! सेवं भंते ! सुहविवागा ॥ दसमं अज्झयणं समत्तं ॥ १० ॥

नमो सुयदेवयाए—विवागसुयस्स दो सुयक्खंधा दुहविवागो य सुहविवागो य, तत्थ दुहविवागे दस अज्झयणा एक्कसरगा दससुचेव दिवसेसु उदिसिज्जन्ति, एवं सुहविवागो वि सेसं जहा आयारस्स ॥ इति एक्कारसमं अंगं समत्तं ॥ ॥ श्रीरस्तु ॥

इअ सुखविपाकसुत्तं समत्ताम् ॥

हितोपदेश

चालो २ मुगत गढ़ माहीं, थांने सतगुरु रह्या समझाई रे ॥टेर॥ थांने मानवको भव पायो, चिन्तामणि हाथज आयोरे ॥चा०॥ काया दीसै रंगी चंगी दया धर्म करो नवरंगी रे ॥चा०॥२॥ मात पिता लाड़ लड़ावे स्वार्थ विना अलगा जावो रे चा०॥३॥ तू परणीने लाग्यो लाड़ी, बापण नहिं आसी आड़ी रे ॥ चा० ॥४॥ सूरी कंता नारी देखो, सूतर मे चाल्यो ईंको लेखो रे ॥चा०॥ ॥५॥ धन दौलत माया जोड़ी, भेली कर मेली कोडी कोडी ॥चा०॥६॥ सागर सेठ थो धनको लोभी, समुद्र में गयो ते डूबी रे ॥चा०॥७॥ मायाजालकी माया मेटो, सतगुरु जीने लेवो भेटी रे ॥चा०॥८॥ दया दान कमाई कीजे, नरभवको लाहो लीजे रे ॥चा०॥९॥ उगणीसे बासठ माहीं रामपुर रह्या सुख पाहिरे ॥चा०॥१०॥ कहै हीरा लाल गुणवन्ता जिन धर्म करो पुन्यवन्ता रे ॥चा०॥११॥

अथ चौबीसी लिख्यते

लावणी—अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु

समरणा, तीर्थङ्कर रतनारी माला, सुमरण नित्य करणा ॥ समरीये माला, मेरी जान समरीयें माला ॥ ज्युं कटे करमका जाला, ये जीव तणा रखवाला, ध्यान तीर्थंकर-का धरणा रे ॥ ध्या० ॥ पाच पद चोवीस जिणंदका नित्य लीजे सरणा ॥१॥ ए आंकणी ॥ श्री रिषभ अजित संभव अभिनन्दन, अति अनन्द करना ॥ सुमति पदम सु पार्श्व चन्दप्रभ, दास रहुं चरणा ॥ चरण नित्य वन्दु, मेरी जान चरण नित्य वन्दु ॥ ज्युं कटे करमका फन्दा, तुम तजो जगतका धन्धा, दीठा होये नयन अमितो ठर-णारे ॥दीठ॥ पाच पद ॥२॥ सुविधि शीतल श्रेयांस वासु पूज्य हिरदय मांहे धरणा ॥ विमल अनंत धर्मनाथ शांति जी, दास रहुं चरणा ॥ जिणंद मोहे तारो, मेरी जान जिनंद मोहे तारो ॥ संसार लगे मोहे खारो, वैराग्य लगे मोहे प्यारो, मैं सदा दास चरणारो नाथ जी, अव कृपा करणारे ॥नाथ०॥ पांच पद० ॥३॥ कुंथुं अर मल्लि मुनि सुव्रतजी, प्रभु तारण तारणा ॥ नमि नेम पार्श्व महा-वीरजी, पाप परा हरणा ॥ तरे भव्य प्राणी, मेरी जान तरे भव्य प्राणी ॥ संसार समुद्र जाणी, सूणों सूत्र सिद्धांत

स्तवन

दरशन करवादे रे पूजका दरशन करवादे । आज दरशन करवादे रे पूजका दरशन करवा दे ॥ मारे आनन्द उछबको दिन पूजका दरशन करवा दे ॥ टेर ।

सागर जिम गंभीर पुज्यजी ।
शीतल चन्द्र समान ॥
कल्पवृक्ष सम आप सोवता ।
महा गुणोंकी खान ॥ पु० ॥१॥
सुरज सम उद्योत धर्मको ।
करता वरतो आप ॥
ग्यान ध्यान वैराग तपस्या ।
करता प्रभुका जाप ॥ पु० ॥ २ ॥
मीठी वाणी आपकी सरे ।
जैसे इमरत धार ॥
सुणता रिद्ध सिद्ध सम्पदा पामें ।
वरते मङ्गलाचार ॥ पु० ॥ ३ ॥
पञ्च महाव्रत पालतासारे ।
पांच मेरु समान ॥

दोष वयालिस टाल मुनीश्वर ।
निरमल जाको ज्ञान ॥ पु० ॥४॥
पांच प्रमादमें गुमीयो सगे ।
रात दिवसके मांय ॥
तेरेकाठीया चित्त वल्लभ सा ।
क्योंकर दरशन पाय ॥ पु० ॥५॥
काम क्रोध मद लोभमें सरे ।
करता जै जै कार ॥
धर्म रतन पल्ले नहीं बांध्यो ।
क्योंकर उतरे पार ॥ पु० ॥६॥
विषे भोगमें भम रयोसरे ।
खान पान सुखकार ॥
वेट्टा वेट्टी कुटुम्ब कबीलो ।
इणसे इधको प्यार ॥ पु० ॥७॥
राग धेस मोह जालमें सरे ।
भम रयो जीव अपार ॥
माया ममता मांही राच्यो ।
याको वड़ो विचार ॥ पु० ॥८॥

मारा ओगण गावता सरे ।
केहताने आवे पार ॥
सब ओगणमें पेलो लम्बर ।
खुले न मोक्ष दुवार ॥ पु० ॥९॥
पुज २ श्री जुहारीलालजी ।
जग वच्छल महाराज ॥
राधालाल चरणोंका चाकर ।
भव २ सारो काज ॥ पु० ॥१०॥
उनीसे सीतन्तर सालमें ।
बीकानेर चौमास ।
चार तीरथमें नित सुख वरते ।
पूरो मनकी आश ॥ पु० ॥ ११ ॥

(इति सम्पूर्ण)

समाधि बोध.

આત્મ જ્ઞાનને આપશે, કરી સત્યનો શોધ;
માનવ જન્મ સફળ થવા, સમજ સમાધિ બોધ.

પવિત્ર ક્રિયા માર્ગમાં રૂચિવંત ભવ્યાત્માઓને
વાંચવા વિચારવા માટે.

ખક:-મહેતા ફુલચંદ હીરાચંદ મુ. મોરબી.

પ્રકાશક:-અમરચંદ કાનજી મોરબીવાળા
હાલ—મુ. કુસુંન્ડા-(માનભુમ).

ં. ૧૯૮૩] [સને ૧૯૨૭

પ્રસ્તાવના.

આખી દુનિયામાં જેટલી મનુષ્યની વસ્તી છે તેમાંની તદન જંગલી લોકોની સંખ્યા બાદ કરતાં, બાકીના તમામ લોકો ધર્મને જીવ સાટે ગણી ધર્મ માટે જાન આપવા તૈયાર થાય છે. પણ તેમાં અનેક મતમતાંતરોના ફાંટા પડી સૌ પોત પોતાને મોક્ષના અભિલાષી માને છે, છતાં આચરણ એક બીજાથી તદન ઉલટાં હોય છે; વળી દરેક પંથનું મૂળ તપાસીશું તો ઘણાખરામાં અહિંસા, સત્ય, અદત્ત, બ્રહ્મચર્ય, દાન, તપ અને ભાવ છે. એ બધું શાને માટે? સંસારથી મુક્ત થવા માટેજ.

મનુષ્ય ભવ મળવો ઘણો દુર્લભ છે, છતાં આજે તે આપણે મેળવવાને શક્તિવાન થયા છીએ, તે

આત્માનું સાર્થક કરવા માટેજ છે, નહિ કે અધમ આચરણ આચરી પાછું અધોગતિની શ્રેણીએ ઉતરવા.

જ્ઞાનીઓ પરમાર્થ ખાતર અતિ પરિશ્રમ વેઠી, સૂત્ર સિદ્ધાંતોથી સમજ આપવાનું કાંઇ બાકી રાખી ગયા નથી, તો તે રસ્તે ચાલી આત્માનો ઉદ્ધાર કરવાનું મનુષ્ય કર્ત્તવ્ય ભૂલી અધોગતિમાં જવાનું કોણ ઇચ્છશે?

મોક્ષ માર્ગને અનુસરવાને મુમુક્ષુ જીવો રાત દિવસ મચ્યા રહ્યા છે. મુનિ મહારાજો પોતાના આત્માનું સાર્થક કરવા સાથે, મુમુક્ષુઓને મુક્તિ માર્ગમાં દોરે છે, છતાં પણ બધો કાળ બધે સ્થળે તેવા મહાત્માઓની હાજરી હોતી નથી. તેઓની ગેરહાજરીમાં વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન કરી તેમાં જોડી રાખે,

એવાં સરળ પુસ્તકો ચાલતી ભાષામાં રચાવાની જરૂર છે, તે સજ્જનો સમજે છે.

જૈનદર્શનના ત્રણ ફીરકા કે તેમાંથી ઉત્પન્ન થયેલ ગચ્છ ગચ્છાંતરને વાંચતાં જરા પણ વિરોધ ન જણાય અને અન્ય દર્શનીઓ પણ જૈનધર્મનું રહસ્ય વિના અપવાદે વાંચી બોધ લઇ શકે, તેવી શૈલીમાં આ " समाधि बोध " નામનું નાનું પુસ્તક જ્ઞાનીઓની ગિર્વાણ ભાષામાંથી, દોહરા રૂપે દોહન કરી સજ્જનો સમક્ષ મૂકું છું, અને તે આવકારદાયક નીવડશે એમ ઈચ્છું છું.

પ્રસ્તાવનામાં લંબાણ કરવા કરતાં આ પુસ્તકમાં લખેલા દરેક વિષય ધ્યાનપૂર્વક વાંચ્યાથી ખાત્રી થશે કે, તેમાં આત્મજ્ઞાન સાથે વૈરાગ્ય ઉભરાઇ જતાં, સંસાર ઉપરનો મોહ ઓછો થઇ આખર વખતે

સમાધિ મરણ કરાવે એવી શક્તિ હોવાથીજ આ ગ્રંથનું નામ "સમાધિ બોધ" રાખવામાં આવ્યું છે.

આ પુસ્તકમાં આવેલા વિષયોની ટુંક હકીકત નીચે મુજબ છે.

(૧) સ્તુતિ. (૨) અનિત્યાદિ બાર અને મૈત્રી આદિ ચાર મળી સોળ ભાવના દોહરામાં હોવાથી મુખપાઠે કરવા ની સુગમતા સાથ આત્મજ્ઞાન પણ થશે. (૩) ચોવીસ જીન સ્તુતિ સાથ અઢાર પાપ સ્થાનક અને આઠ કર્મ નિવારણ ભાવના પચીસી. (૪) સંક્ષિપ્ત ધ્યાન સ્વરૂપના પેટામાં (अ) દર્શન (ब) જ્ઞાન (क) ચારિત્ર–જેમાં અહિંસા, સત્ય, અસ્તેય, બ્રહ્મચર્ય, અકિંચનતાનું વર્ણન છે, તેમ તેમાં શ્રાવકના બાર વ્રત્તોનો પણ સંક્ષિપ્ત સમાવેશ કરેલ છે. એટલે સર્વ વિરતિ અને દેશ વિરતિ ચારિત્રનો

સમાવેશ થાય છે. વળી તેમાં અતિક્રમાનુ આશય પછી છેવટ જે મોક્ષનુ સાધન સમાધિ મરણ અથવા પંડિત મરણ નીપજાવવાને માટે આત્માને કેમ સ્થિર કરવો તેને માટે સમાધિ શતકના પેટામાં સંલેખના અને મૃત્યુ મહોત્સવ દોહરા રૂપે દાખલ કરેલ છે, જે મનન કરવાથી અંત સમય પંડિત મરણ કરાવવાને બહુ ઉપયોગી છે. (૫) કર્મની વિચિત્રતા સંબંધી કેટલાક ઉપદેશી દોહરા છે. (૬) ઉપદેશી દોહરા છે.

પરિચય:—મેં ૪૨ વર્ષ સુધી એજન્સી તેમજ મોરબી સ્ટેટ કેળવણી ખાતામાં જુદી જુદી જગોએ નોકરી કરી ૬૦ વર્ષની ઉમરે મોરબી સ્ટેટ તરફથી પેન્શન મેળવી ૧૬ વર્ષ થયાં નિવૃતિમાં રહી ધર્મ ધ્યાન કરતાં જે કાંઇ ગ્રંથો વાંચવામાં આવ્યા તેમાંથી મને જે કાંઇ તત્ત્વ ગ્રહણ કરવા લાયક લાગ્યું તે દોહરા રૂપે જુદે જુદે વખતે ટાંચણ

કરેલું તે વિષયો અનુક્રમે ગોઠવી આ "સમાધિ બોધ" નામે પુસ્તક તૈયાર કરેલું છે, એટલે તેમાં ત્રૂટિઓ રહેવાનો સંભવ તો છે, પણ એકંદરે જન-સમાજને કાંઈ ઉપયોગી થાય એમ જાણી છપાવવાને લલચાઉં છું.

શ્રી શ્વે. સ્થાનકવાસી જૈન કોન્ફરન્સ પ્રકાશનાં ગ્રાહકોને વિનામૂલ્ય ભેટ આપવા માટે આ આવૃત્તિ છપાવવામાં આવી છે. અને તેના ખર્ચ પેટે રૂ. ૧૦૦) અંકે એકસો **શ્રી અભેચંદ એન્ડ બ્રધર્સ** (કુસુંદા) માનભૂમ તરફથી મદદ રૂપે મળેલા છે. બાકીનું ખર્ચ "પ્રકાશ" ઓફિસે આપવા સ્વીકાર્યું જેથી આ અમૂલ્ય પુસ્તકનું પ્રકાશન અને પ્રચાર થવા પામેલ છે.

ફુલચંદ હીરાચંદ મહેતા.

समाधि बोध.

સ્તુતિ.

અરિહંત સિદ્ધ આચાર્યજી, ઉવઝાય સૌ સાધ;
ગુરૂ ગણધરને પ્રણમતાં, પ્રજળે પાપ અગાધ.

અષ્ટ કર્મ અરિને હણી, પામ્યા કેવળ જ્ઞાન;
બાર ગુણે બીરાજતા, અરિહંત ભગવાન.

સકળ કાર્ય સિદ્ધિ કરી, પામ્યા શિવ સુખ વાસ;
અષ્ટ ગુણ આરાધીએ, પહોંચે મનની આશ.

પાળી પદ્ધતિ શીખવે, અણગારી આચાર;
સમ દ્રષ્ટિ સહુ શિષ્ય પર, નમું છત્રીશ ગુણધાર.

ભણે ભણાવે ભાવથી, સૌ સિદ્ધાંત સમુદાય;
પચ્ચીસ ગુણ ધારી સદા, નમું પ્રભુ ઉવઝાય.

પાંચ મહાવૃત પાળતા, છે છકાયના પીર;
ગુણ સત્યાવીશ શોભતા, નમું સાધ ગણ ધીર.

ગુણ એકસો આઠ એ, ભજ જીવ આણી ભાવ;
મારગ મોક્ષ દ્વારનો, ભવ દધિ તરવા નાવ

પ્રથમ આત્માને ધ્યાન સન્મુખ કરવા માટે સંસાર દેહ ભોગાદિથી વૈરાગ્ય ઉપજાવવા સારૂ બાર ભાવના કહે છે.

જ્ઞાનાર્ણવ આદિકથી, શોધી સબળ સહાય;
બાર ભાવના ભાવવા, પુષ્પચંદ ચિત્ત ચહાય. ૧
સુત્ર રહસ્ય સમજું નહિ, સમજું ન કવિતા ન્યાય;
શૈલી વિરૂદ્ધ વદાયતો, સુચવી થશો સહાય. ૨
બાર ભાવના ભાવતાં, ચિત્ત વરતે સમભાવ;
વિરાગતા વધતી થતાં, મળે ધ્યાનનો લાવ. ૩
મોક્ષ મહેલમાં પહોંચવા, કરશો શુભ વિચાર;
ચઢતે ભાવે પગ ધરો, સીડી ભાવના બાર. ૪
અનિત્ય[૧] અસરણ[૨] ભાવના, ત્રીજી[૩] તે સંસાર;
એકત્વ[૪] અન્યત્વ[૫] ને, અશૂચી[૬] ઊર ધાર. ૫
આશ્રવ[૭] સંવર[૮] નિર્જરા[૯], ધર્મ[૧૦] ભાવના ભાવ;
લોક[૧૧] બોધિ[૧૨] દુર્લભ સહુ, ભવ તરવાનાં નાવ. ૬

૧ પહેલી અનિત્ય ભાવના.

પંચ વિષય સુખ ક્ષણીક છે, ક્ષણીક છે સૌ લોક;
અવિચળ ગણી ન આદરો, અનિત્ય જાણો ફોક. ૧
ધન ધાન્ય કુટુંબ ત્રીયા, આદિ પરિગ્રહ પાપ;
કાયા ભાજન રોગનું, છતાં મુંઝાણો આપ. ૨
શરીર વ્યાધિનું ધામ છે, જોબન થકે જરાય;
સંપદા વિરૂદ્ધ વિનાશ છે, જીવન લે જમરાય. ૩
સંબંધ કર્યા સંસારમાં, ગણી સારમાં સાર;
બંધાઇ કરમ બંધને, થયો અંત ખુવાર. ૪
પલ પલમાં પલટે દશા, વિરૂદ્ધ સાંજ સવાર;
નિત્ય ન કાંઇ દેખીએ, અનિત્ય સુખ સંસાર. ૫
વિવેકથી વિચારતાં, સુખથી દુઃખ અનંત;
છતાં દુઃખને સુખ ગણી, સુખને દુઃખ કહંત. ૬
કુટુંબ પરિગ્રહ કાંઇ ગયો, વળી જાય છે જોય;
બાકી પણ નિશ્ચે જશે, તો જીવ શાને રોય? ૭
તન ધન પુત્ર પરિવારને, અનિત્ય આ સંસાર;
નિત્યશું પ્રીત લાગી નહિ, એળે ગયો અવતાર. ૮

અહો આશ્ચર્ય આ કેટલું ? જાતું જગત જણાય;
તોય ન ચેત્યો આત્મા, ગણે અમર નિજ કાય. ૯
સગાં સંબંધી સ્નેહીઓ, સ્ત્રી પુત્ર પરિવાર;
સ્વારથ સાધી સર્વ તે, કરે અંત ખુવાર. ૧૦
કોઇ શત્રુ પરભવ તણા, આ ભવનો પરિવાર;
વેર વાળવા કારણે, લે અવતાર નિજ દ્વાર. ૧૧
વાળે વેર અતિ આકરાં, પ્રેરી વચન પ્રહાર;
કર સહન સમ ભાવથી, આણી કર્મ વિચાર. ૧૨
બંધુ શત્રુ પરભવ તણા, શત્રુ બંધુ છે આજ;
ભૂલી ભાન પરવશ પડયો, એથી કર્યું અકાજ. ૧૩
સ્વજન બંધુ નહિ સમજવાં, પ્રેરે પાપ અપાર;
મધ્યસ્થ સદ્‌ગુરૂ મિત્ર તે, ભવ તરવા આધાર. ૧૪
વસ્તુ સમુહ સંસારના, પર્યાએ પલટાય;
અવિચળ કાંઇ ન દેખીએ, નહિ અમર આ કાય. ૧૫
ભવ ભ્રમણના પંથીઓ, વિષય સ્થળ રહી વિશ્રામ;
દુર્ધ્યાન ધ્યાતા મરી, પામે દુર્ગતિ ઠામ. ૧૬
ભવમાં ભમતા પંથીઓ, પામી માનવ દ્વાર;
વિષયાદિકને વશ પડી, મેળવે ભવ ઘટમાળ. ૧૭

પર પુદ્ગળ પરિગ્રહ મળ્યો, પલમાં પરનો થાય;
બાળે અંતર આપણું, છતાં જીવ લોભાય. ૧૮
ઇંદ્રિય જનીત સુખ સુખ નહિ, દુઃખ દુઃખ છે દુઃખ;
શીતળ શાતા પામવા, પડવું અગની મુખ. ૧૯
પાપે વિત્ત પેદા કરી, પોષ્યો નિજ પરિવાર;
નિચ ગતિ નિજ એકને, સહાય કોણ થનાર? ૨૦
હીંસક શાસ્ત્ર તેં સંચીયાં, વાપરે વંશ વિસ્તાર;
નીચ ગતિ નિજ એકને, સાહ્ય ન કોઇ થનાર. ૨૧
આથી આતમ ચેતીને, જો હેય ઉપાદેય;
સરલ શુદ્ધ વ્યવહારથી, ભવ સુધરશે બેય. ૨૨
પામી દુર્લભ મનુષ્ય ભવ, હીતા હીત સમજાય;
છતાં અહિત આદર કરી, વિષય વિખ ફળ ખાય. ૨૩
કૂળને વૃક્ષની ઉપમા, આપે જ્ઞાની કોય;
મનુષ્ય પક્ષી આવી મળે, ઉડી જાતાં જોય. ૨૪
પ્રભાતે વાજાં વાગતાં, ગાતાં મંગળ ગીત;
મધ્યાને મોં ઢાંકીયાં, રૂદન શુણ્યાં ભયભીત. ૨૫
પરમાણુંથી જે થયા, પ્રાણી માત્રના દેહ;
પરમાણુંમાં જઇ મળે, તેમાં શો સંદેહ? ૨૬

પરમાણુ' સૌ વિશ્વના, ગણતાં નહિ ગણાય;
એથી અનંત ગણા કર્યા, જીવે ભવ ઘણાય. ૨૭
એકેક યોનીમાં ઉપજ્યો, અનંતાનંતી વાર;
શુદ્ધ સમકીત અભાવથી, આવ્યો ન ભવનો પાર. ૨૮
એક પરમાણું એહવો, રહ્યો નથી અવશેષ;
શરીર રચના અહારમાં, વપરાયા વિણ લેશ. ૨૯
ઇંદ્ર ધનુષ્યની ઉપમા, તન ધન ને અધિકાર;
અત્યંત સુંદરતાં છતાં, વિલય થતાં શી વાર? ૩૦
જળ પ્રવાહી પ્રૌઢો જતો, વળે ન પાછો જેમ;
આયુ ધન જોબન ગયાં, ફરી ન આવે તેમ. ૩૧
જળ પ્રવાહી પાછો કદી, વળવા સંભવ હોય;
આયુ યૌવન સુંદર્યતા, પાછાં ન પામે કોય. ૩૨
આયુ બળ જળ અંજળી, યૌવન મદ પણ એમ;
વૃદ્ધિપણું વિકટ અતી, તોપણુ દેહસું પ્રેમ. ૩૩
મન વાંછિત વિષયો મળ્યા, સંયોગ સ્વપ્ન સમાન;
બાજી બાજીગર તણી, અંત નહિ નિશાન. ૩૪
માલ ધન કુટુંબ કીરતિ, રિદ્ધિ રાજ ભંડાર;
બાદળ સમ વિખરાય છે, ધન જોબન અધિકાર. ૩૫

વૃક્ષ નીરજીવ થાય તો, મળે કાષ્ઠ સુલદાર;
અસાર મનુષ્યા દેહ આ, આપે છેવટ છાર. ૩૬
ચંદ્ર સુર્ય રૂતુ ગ્રહો, ફરી ફરી દેખાય;
ગયું શરીર ન સાંપડે, તેની શી મમતાય. ૩૭
સુખ દુઃખ આદિ અંત સદા, જોતાં નહિ જણાય;
સુખીઆ દુખમાં ડુબતા, દુખી જીવ સુખી થાય. ૩૮
આતમ પ્રબળ છે મોહનું, ભૂલ્યો આપને આપ;
પરને પ્રભુતાથી ભજું, માની મહદ પ્રતાપ. ૩૯
તન ધન યૌવન બાંધવો, પ્રિયા પુત્ર પરિવાર;
અનિત્ય અવસ્થા જગતની, વીજળીનો ચમકાર. ૪૦
ક્ષણ ક્ષણમાં ક્ષય પામતા, જડને ચૈતન્ય દોય;
ભ્રમથી ભુલી ભાનને, ગણે નિત્ય સહુ કોય. ૪
ખટ દ્રવ્ય નિત્ય સ્વભાવથી, અનિત્ય દ્રવ્ય પર્યાય;
નિત્ય અનિત્ય ત્યાગે ગ્રહે, એ અજ્ઞાને થાય. ૪
ત્રીલોક ખટ દ્રવ્ય મયી, નિજ નિજ રૂપે નિત્ય;
પર્યાય સ્વભાવ વિભાવથી, ઉપજે વિણસે અનિત્ય; ૪
નિત્ય ભજી અનિત્ય તજી, ધરીએ આતમ ધ્યાન;
અનિત્ય ભાવના ભાવતાં, અંતર ઉપજે જ્ઞાન.

પર્યાય બુદ્ધિ પાલટી, દ્રવ્ય દષ્ટિએ જોય;
નિશ્ચય નિત્ય સ્વરૂપનું, ધરો ધ્યાન સહુ કોય. ૪૫
અનિત્ય ભાવના ભાવતાં, ગણો અનિત્ય સંસાર;
દેહાદિક સર્વ અનિત્યછે, નિત્ય આત્મ આધાર. ૪૬
અનિત્ય ભાવના ભાવતાં, તર્યા અનંતા જીવ;
ભાવો પુષ્પ એ ભાવથી, મળશે મારગ શીવ. ૪૭

---

૨ બીજી અશરણ ભાવના.

અશરણ ભાવના એહ છે, શરણ ન જીવને કોય;
શરણ એક નિજ આત્મને, પંચ પરમેષ્ઠી હોય. ૧
કોઇ શરણ ન જીવને, દાનવ માનવ રાય;
તે પણ કાળના કોળીયા, શું કરશે તુજ સાંય? ૨
સ્ત્રી પુત્ર પિતુ માતકે, બેની બંધવ મિત્ર;
તે પણ ટગમગ જોઇ રૂવે, કાળનું કામ વિચીત્ર. ૩
દુર્નિવાર્ય ગતિ કાળની, શરણ ન રાખે કોય;
મંત્ર જંત્ર કે ઔષધી, મિત્ર કાળનાં હોય. ૪
મળ્યો કુટુંબી કારમો, રૂદન કરે નરનાર;
પોતે કાળની ઝાળમાં, તેનો નહિ વિચાર, ૫

કંઈક રાણા રાજીઆ, કેશવ, ચક્રી રામ;
કાળે કીધા કોળીઆ, શો શોચ આ ઠામ. ૬
ડાકટર વૈદ્ય હકીમ કે, જોશી ડાશી સોય;
પરિવાર લઇ ચાલીઆ, કાળે ન મૂક્યા કોય. ૭
કાળ ન પહોંચ્યો ત્યાં લગી, ઉપાય અનુકુળ થાય;
તુટીની બુટી થવા, શરણુ ન કોઇ ઉપાય. ૮
આયુષ્ય કર્મ જનમ થકી, પ્રેરે મૃત્યુ પાય
વરસ ગાંઠની મંજલે, કાળ ધર્મ નિત્ય સ ૯
પેખી પુત્ર વરસે વધે, માતા મન મલકાય;
નથી વાસ્તવિક જાણતી, મરણ નજીકે જાય.૧૦
ઘડી માસ વર્ષ ગાંઠને, નિમિતે આયુષ્ય કર્મ;
રંજીત કરી કરમાં ગ્રહી, બજવે કાળના ધર્મ.૧૧
કાળ લાંચ લેતો નથી, નથી રાણાનો પક્ષ;
સમભાવે ગૃહે સર્વને, સહુ પર સરખો લક્ષ.૧૨
વૃદ્ધ જુવાન કે બાળકો, ગરીબ સંત ધનવાન;
પક્ષપાત નહિ કાળને, સરવે ગૃહે સમાન.૧૩
બાળ વૃદ્ધ રંકીક ધની, સુરા કાયર કોય;
ન્યુનાધિક કોએ નહિ, નામ સંવર્તિ હોય.૧૪

આણી સહીત વન પરજળે, વચલે વૃક્ષ ચઢી કોય;
નિજને સુરક્ષિત ગણી, બેઠો કૌતક જોય.૧૫
તેમજ જીવ જગવન વિષે, મરતાં દેખું નીત;
છતાં અમર નિજને ગણું, એજ મતિ વિપરીત.૧૬
સજ સેના હય ગય તણી, સજી બખ્તર તરવાર;
ચોકીની વચમાં રહે, તોય ન મુકે કાળ.૧૭
વિષય મોહ મદિરા થકી, મુરછાયો સંસાર;
ગ્રસ્યો કાળની દાઢમાં, ઉગે ન એકે વિચાર.૧૮
વિપરીત મતિ વિશ્વની, નહિ વિવેક વિચાર;
સેવી વિષય કષાયને, કરે અફળ અવતાર.૧૯
શરણ ન કોઇ સંસારમાં, શોધ્યાં સરવે સ્થાન;
પરમપરા વ્યવહારથી, શરણ પંચ ભગવાન.૨૦
નિશ્ચય નયથી તો લહે, શરણ આતમા એક;
પુષ્પચંદ એ શરણથી, ઉદ્ધર્યા જીવ અનેક.૨૧

---

૩ ત્રીજી સંસાર ભાવના.

ચક્રાવો ગતિ ચારનો, સુખ દુઃખનાં ધામ;
અપેલ નિજનાં માનતાં, રાચે જીવ બેભાન. ૧

નિજ નિજ કર્મવત જોડીઓ, ત્રસ સ્થાવર મળીકાય;
બંધાઇ તે બંધને, ઉપજી મરે સંદાય. ૨
કદી પુર્વ પુન્ય ઉદયથી, સ્વર્ગે સુખ પમાય;
શુભ ઉદય એ ભોગવી, અવર ઉદય ત્યાં જાય. ૩
ગતાગતિ ઘટમાળમાં, ફર્યો અનંતી વાર;
દાવાનળ દુઃખ ભોગવ્યાં, સાતા નહિ લગાર. ૪
ભોગવાય ભાળો હજુ, ભોગવે આગમ કાળ;
સ્વરૂપ ભાન ભુલ્યા થકા, સુખી દુઃખી ત્રીકાળ. ૫
ખટ દ્રવ્ય ખેલ ખરેખરો, અચળ નિયમ આધાર;
કર્મ સંયોગ સાથે ગણી, જગ રચના નિરધાર. ૬
સમય માત્રને આંતરે, જીવ સમુહ સંસાર;
પર્યાયથી પાલટે, વેષ વિચિત્ર પ્રકાર. ૭
લડે સમુહ પરસ્પરે, ઉલસે વેર અભિમાન;
પ્રાણ પર્યાય લુંટી લડે, વિશ્વ યુદ્ધનું સ્થાન. ૮
જીવની રાસ જબરી બહુ, ત્રસ સ્થાવર સમુદાય;
અનંતાનંત કોટી લહો, પાર ન કદી પમાય. ૯
ચેતન તે જડ સંગમાં, મળી થયો સંસાર;
કરમાનુસારે કરે, ગતાગતી જે વાર.૧૦

ગતાગતીમાં બહુ કર્યા, સંબંધ વિચિત્ર પ્રકાર;
વરણવ્યે પાર ન પામીએ, કહું સંક્ષેપે સાર.૧૧
સંબંધ સરવે પરસ્પરે, કર્યા સર્વ જીવ સંગ;
અનંતવાર એમજ બન્યું, મળતાં કર્મ પ્રસંગ.૧૨
માત પિતા પુત્ર પુત્રી ત્રિયા, બેની બંધુ અનેક;
ઉલટ સુલટ ભવ આદર્યા, વાર અનંત પ્રત્યેક.૧૩
અહો! સંબંધ શા શોચના, પુત્ર પતિ ત્રિયા માય;
બાપ બેટો જનમે કદી, પિતા પુત્રિ પતિ થાય.૧૪
મોહ મદિરા ઘેનમાં, સમજ્યો નહિ સંબંધ;
આ અવસર અનુકુળ છે, ચેતી છોડવા બંધ.૧૫
સંસાર રંગભૂમિ કહો, નટી સંસારી જીવ;
વેષ પાલટે નવ નવા, ભુલી ભાન સદૈવ.૧૬
યોનિ દેશ કુળ રૂપ કે, સુખ દુઃખ પર્યાય;
વાર અનંતી ભ્રમણમાં, ભોગવ્યાં કર્મ નિકાય.૧૭
બંધુ શત્રુ ભવાંતરે, શત્રુ બાંધવ હોય;
ઉલટ સુલટ ભવ ચક્રમાં, નહિ આપણું કોય.૧૮
રાજા કીટમાં ઉપજે, કીડો ક્રમથી રાય;
ઉંચ નીચ નીચ ઉંચમાં, ગતાગતી જણાય.૧૯

અસહ્ય દુઃખ છે નર્કમાં, સહે તિર્યંચ દુઃખ;
અતુલ્ય દુઃખ માનવ ભવે, નહિ દેવ ગતિ સુખ.૨૦
કારણ આ સંસારનું, મુખ્ય ભાવ અજ્ઞાન;
કાર્ય કર્મ ફળે ભવ ભમે, ચતુર્ગતિ વિણુ ભાન.૨૧
અજ્ઞાન ભાવથી ઉપજે, પર દ્રવ્ય પર મોહ;
રાગ દ્વેષ વર્તન થતાં, નિજ આત્માશું દ્રોહ.૨૨
કરમ બંધ એ દ્વંદથી, કર્મ બંધે ગતિ ચાર;
આત્મા દેહ નિત્યા નિત્યનો, ઉગ્યો ન અંશ વિચાર.૨૩
પર દ્રવ્યની પ્રીતથી, કર્મ બંધ સંસાર;
ફળ તેનું ગતિ ચારમાં, ભમવું વારમવાર. ૨૪
નિજ સ્વરૂપ ગણ નિજનું, પર ગણ પરિગ્રહ દેહ;
ભાવે નિજ નિજને ભજી, છોડ દેહસું નેહ.૨૫
વિશ્વ રચના વિચારતાં, થાય સ્વરૂપ સમ્પૂર્ણ;
પુષ્પચંદ એથી મળે, શીવ મંદીરમાં સુખ.૨૬

૪ ચોથી એકત્વ ભાવના.

સર્વ અવસ્થામાં સદા, જીવ એકલો જોય;
ગહન પંથ ગતિ ચારનો, સાથી ન મળે કોય. ૬

પ્રત્યેક ભવમાં એકલો, જનમે મરે સદાય;
કર્મ એકલો ભોગવે, થાય ન કોઇ સહાય. ૨
કરમ કરી જીવ એકલે, પોષ્યો પિંડ પરિવાર;
ખાનારાં સૌ ખસી ગયાં, કરતા ભોગવનાર. ૩
અત્યંત દુઃખ જે નર્કનાં, અસહ્ય સહ્યાં ન જાય;
તે ભોગવે જીવ એકલો, પાપ ઉદય જો થાય. ૪
સુખ સમૃદ્ધિ સ્વર્ગનાં, અનુપમ જે કહેવાય;
તે પણ ભોગવે એકલો, પુન્ય ઉદય જો થાય. ૫
જન્મ મરણ સુખ દુઃખમાં, સગાં ન સાથી કોય;
કર્યાં કર્મ પ્રત્યેકને, ભોગવતાં તું જોય. ૬
પરિવારને પોષવા, કર્યાં કલંકિત કામ;
ભોગવવા જીવ એકલો, ભમે નર્કાદિ ઠામ. ૭
કુડ કપટે ધન મેળવ્યું, તે ખાંતે ખાનાર;
અરે વખત ખસી જશે, રહ્યો તું ભોગવનાર. ૮
પ્રત્યક્ષ આજ નિહાળીએ, જન્મ મરણ જે થાય;
જન્મે તે મરે એકલો, સાથે કોઇ ન જાય. ૯
અજ્ઞાન દશાએ જીવ આ, સમજ્યો ન નિજ સ્વરૂપ;
પરને નિજ માની રહ્યો, જાણી આતમ રૂપ.૧૦

જડ ચૈતન્યથી એકતા, માને મોહથી કોય;
કર્મ બંધ નિજ ભાવથી, કર્યા કરે છે જોય.૧૧
સ્વ સ્વરૂપથી સર્વથા, ન્યારાં ગણે અનિત્ય;
અંતર ભાવ શુદ્ધિ થતાં, થાય મુકત બચીત.૧૨
શુદ્ધ સ્વરૂપ ન નિજ ગણ્યું, ઉદય મોહ અજ્ઞાન;
પરને નિજની એકતા. કર્મબંધનું સ્થાન.૧૩
શુદ્ધ સ્વરૂપ નિજ એકતા, પર તે પર પરખાય;
થાય નિર્જરા અનુક્રમે, મોહ નજીક જવાય.૧૪
મોહ રહિત આત્મા, ચિંતવે એકતા એક;
છુટે સંબંધ સંસારથી, કર્મ ન વળગે છેક.૧૫
નિશ્ચય નયથી આત્મા, નિર્મળ જ્ઞાન સ્વરૂપ;
પર સંગે સંસારમાં, સંગ તજ્યે શીવ રૂપ.૧૬
નિસંગ છે નિજ આતમા, પર સંગે પીડાય;
પુષ્પચંદ તજ સંગ તો, પંચમ ગતી પમાય.૧૭

---

૫ પાંચમી અન્યત્વ ભાવના.

નિશ્ચય નયથી આતમા, ચિદાનંદ સ્વરૂપ;
કર્મ બંધની દ્રષ્ટિએ, દેખાએ દેહ રૂપ. ૧

આત્મા ચૈતન્ય નિત્ય છે, છે જડ દેહ અનિત્ય;
અનાદિ કાળ અભ્યાસથી, થઇ એકતા પ્રતિત. ૨
મેલ ખાણુમાં મળી રહ્યો, સુવર્ણ શોધ્યે ભીન;
દેહ આત્માની એકતા, કર્મ મેલ આધીન. ૩
અમૂર્તિક ચૈતન્ય જીવ છે, મોહથી ચલન સ્વભાવ;
અચેતન મુર્તિક દેહને, નહિ ચલનનો દાવ. ૪
જીવ એ મૃત્યુક દેહનો, શિર ઉપાડી ભાર;
હલન ચલન શકિત કરે, એ છે જુદો ધાર. ૫
પુદ્‌ગળ રચના દેહ આ, અનિત્ય જડ આકાર;
ચેતન નિત્ય નિજ ભાવથી, નિરંજન નિરાકાર. ૬
વસતાં ગર્ભાવાસમાં, હતું ન સાથ શરીર;
મૂકી દેહ મૃત્યુ સમે, પામ્યો અન્ય શરીર. ૭
ક્ષીર નીર તલ તેલને, પુષ્પે જેમ સુવાસ;
તેમજ દેહમાં આતમા, દેહ જેવડો ખાસ. ૮
તલ તેલ ક્ષીર નીર સમ, આત્મા વ્યાપી દેહ;
પણ નિશ્ચય છે જુજવાં, નથી તેમાં સંદેહ. ૯
લુણ પાણીમાં ઓગળી, જણાય નિર્મળ નીર;
અગન આંચ દેખાડતાં, લુણથી ન્યારૂં નીર.૧૦

આત્મ દેહ અન્યત્વનાં, આ સરવે એંધાણ;
આત્માર્થી વિચારતાં, પામે આતમ ભાન.૧૧

(દેહ આત્મા એક દેખાય છે છતાં ભિન્ન છે તો પછી અન્ય સ્વજન પરિવાર પરિગ્રહાદિના ભિન્નપણામાં સંદેહ શો? તે કહે છે).

દેહ આત્માની ભિન્નતા, પામ્યો જેહ પ્રવીણ;
કુટુંબ પરિગ્રહ તો પછી, સહજ જણાયે ભિન્ન.૧૨
જડ ચેતન સહવાસમાં, આવ્યા આવે કોય;
સૌ સ્વતંત્ર નિજ રૂપથી, ભિન્ન ભિન્નતા જોય.૧૩
પુત્ર મિત્ર પરિવારને, અન્ય પરિગ્રહ કોય;
સરવે તુજથી ભિન્ન તે, નિજપણે કેમ હોય.૧૪
પિતુ માતા સ્ત્રી પુત્રનો, જુજવેથી અવતાર;
પરમાં નિજપણ નવિ ઘટે, મળ્યાં કર્મ અનુસાર.૧૫
પદાર્થ સહુ ત્રીલોકના, તુજ સ્વરૂપથી ભિન્ન;
સ્વ સ્વરૂપે સૌ જુજવા, નહિ તારે સ્વાધીન.૧૬
કાળ અનાદિથી થઇ, પર પુદ્ગળથી પ્રીત;
આવરતન ગતિ ચારનું, કારણ એજ ખચીત.૧૭

ચૈતન્ય નિજ સ્વરૂપ જે, પર ભાવથી ભિન્ન;
ભવ ભ્રમણને ટાળવા, ધરો ધ્યાન થઇ લીન.૧૮
સર્વ દ્રવ્ય સંસારના, નિજ નિજ સત્તાધીન;
ભિન્ન ભિન્ન એક એકથી, મળે નહિ કો દીન.૧૯
પરમાં હું મારાપણું, ભ્રમથી ભુલચે થાય;
નિજપણું નિજમાં જડયે, કર્મ સંબંધ કપાય.૨૦
અન્યત્વ ભાવના ભાવતાં, સ્વ પર થાય પિછાન;
પુષ્પચંદ એથી મળે, અંતે કેવળ જ્ઞાન.૨૧

---

૬ છઠ્ઠી અશુચી ભાવના.

રજ શુક્ર સંયોગથી, સંચર્યો ગર્ભાવાસ;
અશુચી સ્થાન મળ મુત્રમાં, કર્યો વાસ નવ માસ.
ખરડાયો મળ મુત્રથી, કર્યો રૂધિર અહાર;
જનમ્યો ઊંધે મસ્તકે, મળ મુત્રને દ્વાર.
રજ શુક્રના બીજથી, બંધાયો આ દેહ;
નવનીક દુરગંધી વહે, ધાતુ ઉપધાતુ ગેહ.

લોહી માંસ મજા ભર્યું, અસ્તિ પીંજર જેહ;
નાડી બંધ બાંધ્યા બહુ, મઢ્યું ચામથી તેહ. ૪
દુર્ગંધમય આ દેહમાં, કશી વસ્તુ નહિ સાર;
સડતી પડતી વિનસતી, તોપણ મોહ અપાર. ૫
કૃમિ જીવની કોથળી, વાત પીતાદી દોષ;
કોપી કષ્ટ આપે ઘણું, દેહ દરદનો કોષ. ૬
મહા મલીન આ દેહની, શુદ્ધિ કદી ન થાય;
નિર્મળ જળ સાગર તણું, ધોએ મલિન જણાય. ૭
સુગંધી ખટ રસ ભલા, ઉદરમાં ઓરાય;
રૂપ રસ ગંધ પાલટી, મળ રૂપે ગંધાય. ૮
ત્વચા મઢેલ ન હોય તો, આવે કેવો ખ્યાલ;
હાડપીંજર માંસે ભર્યું, બિહામણું વિકરાળ. ૯
શરીર રૂપી પીંજરૂં, સદા રોગનું ધામ;
પોષણ માગે નિત નવું, નહિ કદીએ વિશ્રામ. ૧૦
અવગુણ એવા દેહમાં, છતાં એક છે લાવ;
સમ્યક્ જ્ઞાન ચારિત્રથી, ભવ તરવાનું નાવ. ૧૧
અનાદિ કાળથી અનુક્રમે, દેહ સાથ સંબંધ;
દારૂણ દુઃખ પણ એ થકી, કરમે બાંધ્યા બંધ. ૧૨

અંતિત થાય સ્વ પરતણી, મનાય દેહને ભિન્ન;
સ્વ સ્વરૂપ ન્યારૂં થતાં, નહિ કરમ આધિન.૧૩
સ્વ સ્વરૂપ નિશ્ચય થયે, મટે રાગ ને દ્વેષ;
સમભાવ વરતાય ત્યાં, નહિ કરમ લવલેશ.૧૪

કવિત–મનહર.

હાડ માંસ મઢયું ચામ, મળ મુત્ર તણું ઠામ,
કૃમિ જીવ તણું ધામ, શુચી શોધી શું જડે?
રોગનું છતાં નિધાન, માગે નિત્ય ખાનપાન,
સંતોષ્યે ન સમાધાન, વિષયો ચિતે ચડે.
ભોગવીને ભોગ ચોરી, લાવે નવ નવા રોગ,
કરમ સંજોગે કષ્ટ, આકરાં આવી પડે.
તજી મોહ ન્યારી ગણી, વાળો તપશ્ચર્યા ભણી,
મનુષ્ય દેહ તો મણી, શીવ સુખ સાંપડે.૧૫

દોહરો.

નિર્મળ નિજ આતમા, દેહ અશુચી ગેહ;
ગણી ભજું નિજ ભાવને, છોડી દેહસું નેહ.૧૬

અશુચી ભાવના ભાવતાં, મળે સમાધિ લાવ;
પુષ્પચંદ એ અંતમાં, ભવ તરવાનું નાવ.૧૭

૭ સાતમી આશ્રવ ભાવના.

મન વચન કાયા તણી, ક્રિયા શુભાશુભ યોગ;
આશ્રવ તે પણ એજ છે, નિશ્ચય તજવા જોગ. ૧
જેમ નાવના છીદ્રથી, આવે નીરની નીક;
જીવ શુભાશુભ યોગથી, બાંધે કરમ અધીક. ૨
યમ[1] પ્રશમ[2] નિર્વેદતા[3], તત્વ અવલંબન સાર;
શુભ આશ્રવ શુભ કર્મનો, છે સંચય કરનાર. ૩
મૈત્રી પ્રમોદ કારૂણ્યને, માધ્યસ્થ એ ચાર;
ભાવે ભાવના જીવ તો, શુભ સંચય હિતકાર. ૪
ક્રોધ માન માયા અને, ચોથો લોભ કષાય;
વિષયમાં વ્યાકુળપણે, અશુભ સંચય થાય. ૫
વિષયમાં વ્યાકુળ રહી, કષાય સેવી ચાર;
આર્ત રૌદ્ર ધ્યાને કરી, વધારવો સંસાર. ૬

---

૧ અણુવ્રત, મહાવ્રત, ૨ કષાયોની મંદતા.
૩ સંસારથી વિરકતતા અથવા ધર્માનુરાગ.

વિષય કષાય કરી પરા, જીતે રાગ ને દ્વેષ;
વરતે સરલ સ્વભાવથી, સંચે શુભ વિશેષ. ૭
વ્યાપાર જીવ વિરાધના, આરંભકારી કામ;
અશુભ કર્મ ત્રિયોગથી, અશુભ આશ્રવ નામ. ૮
મિથ્યાત્વ અવિરતિ પ્રમાદને, અશુભ જોગ કષાય;
પાપ સ્થાન અઢારથી, અશુભ આશ્રવ થાય. ૯
સમ્યક્ત્વ અપ્રમાદ વિરતિ, શુભ જોગ અકષાય;
સેવે ન પાપ સ્થાન તો, શુભ આશ્રવ લેવાય. ૧૦
નિશ્ચય નયથી નિશ્ચયે, આત્મા જ્ઞાન સ્વરૂપ;
આશ્રવથી અળગા થએ, છે શુદ્ધ નિજ સ્વરૂપ. ૧૧
આશ્રવને અળગા કરી, ધરીએ સંવર ભાવ;
પુણ્યચંદ તપસ્યા વડે, ભવ તરવાનું નાવ. ૧૨

---

૮ આઠમી સંવર ભાવના.

સરવે આશ્રવ દ્વારને, રોકી મન વચ કાય;
સંવર દ્રવ્ય કે ભાવથી, અનુસરીએ તો થાય. ૧

મન વચન કાયા થકી, રોકો આશ્રવ દ્વાર;
દ્રવ્ય સંવર થાએ સદા, એ તો નય વ્યવહાર. ૨
કર્મ ગ્રહણ ક્રિયા સહુ, તજે અભ્યંતર શુદ્ધ;
ભાવ સંવર પ્રભાવથી, નિર્મળ આત્મા બુદ્ધ. ૩
સર્વ કલ્પના જાળને, મેલી મનથી દૂર;
સ્વ સ્વરૂપ સ્થિર થાય તો, નથી મોક્ષ કંઇ દૂર ૪
સમિતિ ભાવ વિશુદ્ધતા, ક્ષમા આદિ દશ ધર્મ;
દ્વાદશ ભાવના ભાવવી, એ સંવરનો મર્મ. ૫
આત્મા કાળ અનાદિથી, આશ્રવને સહવાસ;
ભૂલ્યો ભાન સ્વરૂપ તે, બન્યો કર્મનો દાસ. ૬
જ્યારે જાણી સ્વરૂપ ને, થાય તેહમાં લીન;
સંવર રૂપ થઇ સર્વથા, કરે કર્મને ભિન્ન. ૭
આશ્રવ ભરતી આવતી, સંવરથી રોકાય;
પુરવ કરમની નિરજરા, થાતાં મોક્ષ જવાય. ૮
નિજ સ્વરૂપમાં લીનતા, નિશ્ચય સંવર એહ;
સંયમ શુદ્ધ ચારિત્રથી, આશ્રવ પામે છેહ. ૯
લીન થવું નિજ સ્વરૂપમાં, નિશ્ચય સંવર ભાવ;
પુષ્પચંદ એ ધ્યાન છે, ભવ દધિ તરવા નાવ. ૧૦

---

૯ નવમી નિર્જરા ભાવના.

આવક અટકી આવતી, આવ્યો સંવર ભાવ;
શેષ રહ્યાં તે ટાળવા, સાધ નિર્જરા દાવ. ૧
સકામ અકામ બે ભેદથી, કર નિર્જરા વિચાર;
તપથી કર્મને ટાળવા, સકામ નિર્જરા ધાર. ૨

શુદ્ધ ચારિત્રથી આદરે, તપસ્યા બાર પ્રકાર;
ચુકવી કર્મ લે ભોગવી, સકામ નિર્જરા ધાર. ૩
ત્યાગી થઇ તપસ્યા વડે, આણિ ઉદયમાં કર્મ;
કરે નિર્જરા સર્વથા, એ કેવળી પદ મર્મ. ૪

ફળ પકવવા કારણે, આદરીએ ઉપાય;
કર્મ ફળ તપસ્યા તાપથી, પાકી ખરે સદાય. ૫
સંસારી સહુ જીવને, અકામ નિર્જરા થાય;
પાકીને ફળઝાડથી, ખરશે વિણ ઉપાય. ૬

કરમ ઉદય ફળ આપીને, ખરતાં રહે સદાય;
ખુલ્લા આશ્રવ દ્વારથી, નિત નિત સંચય થાય. ૭
સદોષ સોનું તાપથી, શોધ્યો થાય વિશુદ્ધ;
કર્મ કલંકિત જીવ તે, તપથી થાય સ્વશુદ્ધ. ૮

અનાદિ આવરતન અતી, કરમે બાંધ્યો જીવ;
છતાં તપસ્યા ધ્યાનથી, થાય નિર્જરી શીવ. ૯
બાહ્ય અભ્યંતર તપ તપી, ધરે ધ્યાન મુનિરાય;
પાપ પ્રલય કરી આદિનાં, કેવળ જ્ઞાની થાય.૧૦
જાણી નિજ સ્વરૂપને, કર્મ ન નવાં કરાય;
જુના તપસ્યા ધ્યાનથી, બાળી મોક્ષ જવાય.૧૧
બાહ્ય અભ્યંતર તપ કરે, નીરારંભ નીર આશ;
સંચીત બાળી મેળવે, શુભ ગતિનો પાસ.૧૨
બાહ્ય અભ્યંતર તપ કરે, નીરારંભ નીર આશ;
સંચીત બાળી મેળવે, આત્મજ્ઞાન પ્રકાશ.૧૩
સંવરમય આ આતમા, કરમ મેલ કપાય;
પુષ્પ સ્વરૂપ નિહાળતાં, સહેજ મોક્ષ જવાય.૧૪

૧૦ દશમી ધર્મ ભાવના.

ક્ષમા, માર્દવ[૧] શૌચ[૨] ને, આર્જવ[૩] સંયમ સત્ય;
બ્રહ્મચર્ય તપ ત્યાગ છે, અકિંચન ધર્મ કૃત્ય. ૧

૧ કોમળતા, મૃદુતા, નમ્રતા, નિરાભિમાનતા, ૨ પવિત્રતા, નિર્મળતા, ૩ સિધાપણું, નિઃકપટપણું; અવક્રપણું.

દશ લક્ષણ એ ધર્મનાં, દેખો જેની પાસ;
શરણ ગ્રહણ કર તેહનું, રાખી મન ઉલ્લાસ. ૨
વિપરીત લક્ષણ દેખતાં, વરતે દીલ ઉદાસ;
અધર્મ જાણી એહની, તજવી સોબત ખાસ. ૩
ષટ દર્શન ખોળી જુઓ, વળી અનેક અનાર્ય;
કોઇક નામ દઇ ધર્મનાં, કરે અત્યંત અકાર્ય. ૪
ધરમ ધરમ મુખથી વદે, નહિ ધર્મનો લક્ષ;
જાણ્યા છતાં ન આદરે, તાણી રહે નિજ પક્ષ. ૫
ધરમ માર્ગ ત્રીકાળમાં, હોએ એકજ રૂપ;
મત મતાંતર માનથી, પલટયાં ધર્મ સ્વરૂપ. ૬
અન્ય પંથ મત સંપ્રદા, ઉપજી સમે ખચીત;
ધર્મ અવીચળ એક છે, સત્ય સ્વરૂપી નિત્ય. ૭
દુરગતી જાતાં જીવ ને, ધરી રાખે તે ધર્મ;
રખડાવે ગતિ ચારમાં, ધર્મ નહિ પણ કર્મ. ૮
શરણ ગ્રહી સત્ય ધર્મનું, ભાવો ભાવના બાર;
સીડી મોક્ષ દુવારની, ચઢવાનો આધાર. ૯
કોય જીવિકા કારણે, કોય પુજાવા કાજ;
કોઇક મત મમત્વથી, પંથ નિકળ્યા આજ.૧૦

સુધર્મ દશ અંગે કહ્યો, વળી ઉપાંગ અનેક;
ઉણુપ જેટલા અંશથી, આંકો કીંમત છેક.૧૧
ઘટે ન ઉપમા ધરમને, ધર્મ સમોવડ ધર્મ;
પ્રત્યક્ષ પ્રભા જો ધર્મની, જીવન મુકત નિઃકર્મ.૧૨
આત્મા ધર્મ અનાદિના, કર્પે દોષિત જીવ;
ધરમ રૂપ નવિ પાલટે, જેમ અચળ શ્રી શીવ.૧૩
કરે રૂપાંતર કોય તો, તુરત ભેદ જણાય;
ધર્મ ધ્રુવ સત્ય નિત્ય તે, રહે સ્વરૂપી સદાય.૧૪
કલ્પવૃક્ષની ઉપમા, આપે જ્ઞાની કોય;
ઇચ્છિત ફળ આવી મળે, ધર્મ ધ્યાનથી જોય.૧૫
નર્ક નિગોદ ગતી ટળી, મળે સ્વર્ગ વિમાન;
ધરમે દુર્લભ છે નહિ, પદવી જ્ઞાન નિધાન.૧૬
કલ્પવૃક્ષ ચીંતામણી, કામ ધેન નવ નિધ;
સેવક એ સહુ ધર્મનાં, સેવો ધર્મ સુવિધ.૧૭
જગવાસી સહુ જીવને, ધરમ એજ આધાર;
સિંચી જળ અમૃત સુખનું, અંત ઉતારે પાર.૧૮
મેઘ પવન રવિ ચંદ્રમા, સમુદ્ર પૃથ્વિ કોય;
થાય ઉપકારી ધર્મથી, અધર્મે વિપરીત હોય.૧૯

સર્પ હસ્તિ વિષ વ્યાઘ્ર કે, અગ્ની રાક્ષસ કોય;
સિંહ સહિત રક્ષણ કરે, શરણ ધરમનું હોય.૨૦
ધર્મ સહાયે સાંપડે, મન વંછિત ઉપભોગ;
ધન ધાન્ય પરીવારનો, મળે સગળ સંયોગ.૨૧
ગુરૂ બાંધવ સ્વામી સખા, હેતૂ રક્ષક મીત્ર;
શરણ અવલંબન જીવનું, સેવો ધર્મ પવિત્ર.૨૨
દશ અંગે પણ ધર્મ છે, બીજો વસ્તુ સ્વરૂપ;
રત્ન ત્રય ત્રીજો ધર્મ જો, દયામય ચોથું રૂપ.૨૩
વસ્તુ રૂપ મહિમા ફળ થકી, ધર્મ અનેક પ્રકાર;
અભ્યંતર આરાધતા, મુક્તિ પદ દાતાર.૨૪
ધર્મ ભવાંતરને વિષે, ચાલે જીવની સાથ;
રક્ષિત થઇ ગતિ ઉંચમાં, સ્થાપે ઝાલી હાથ.૨૫
અભ્યુદય સર્વ પ્રકારનો, મન વાંછિત દાતાર;
આનંદ કંદ આ જગતમાં, ધરમ એક આધાર.૨૬
પુણ્ય ધર્મ પસાયથી, મળ્યો મનુષ્યા દેહ;
કર નિશ્ચય નિજ રૂપનો, ધરી ધર્મસું નેહ.૨૭

૧૧ અગિયારમી લોક સ્વરૂપ ભાવના.

જ્ઞાનીની દષ્ટી થકી, જડ ચૈતન્ય દેખાય;
તે તો લોકાકાસ છે, બાકી અલોક સદાય. ૧
ત્રણ ભુવન તે લોકમાં, તાડ વૃક્ષ આકાર;
પહોળો મધ્ય અંતમાં, લહો અધિક વિસ્તાર. ૨
નીચે નર્કાદિક છે, મધ્યે મૃત્યુ લોક;
અંત સ્વર્ગ શોભે સદા, એ રચના ત્રિલોક. ૩
સદા સાસ્વતો લોક છે, આદિ અંત રહીત;
કરતાની કૃતિ ગણે, હોય મતિ વિપરીત, ૪
કચ્છપ શેષની ફેણનો, માને કોઇ આધાર;
અધર લોક આકાશમાં, નહિ આધાર લગાર. ૫
સ્વયં સિદ્ધ અનાદિ છે, અવિનાશી આ લોક;
કરતા હરતા કો નથી, ભર્યો જીવાદિક થોક. ૬
સહુ પ્રાણી ત્રીલોકમાં, જન્મે મરે સદાય;
કર્મ પ્રમાણે ભોગવે, સુખ દુઃખ આયુષ્ય કાય. ૭
જીવાદિક ખટ દ્રવ્યની, રચના તે ત્રીલોક;
છએ સ્વ સ્વભાવથી, જુજવે જુજવે થોક. ૮

તેમાં આ નિજ આતમા, જીવ દ્રવ્ય છે એક;
મોહથી મુંઝાણો થકો, પામ્યો ન છેડો છેક. ૯
લોક સ્વરૂપ વિચારીને, પામી આતમ રૂપ;
મુખ્ય સ્વરૂપ રમણ થતાં, અવિચળ સુખ અનુપ. ૧૦

૧૨ બારમી બોધી દુર્લભ ભાવના.

(જેમાં નીગોદથી નીકળી ઉત્તરોત્તર સમ્યક્ દર્શનની પ્રાપ્તિ પર્યંત ધર્મ પામવાની દુર્લભતા બતાવે છે.)

નર્ક અને નીગોદમાં, વસ્યો કાળ અનંત;
સ્થાવરમાં પણ આવિયો, થતાં ઉદય અત્યંત. ૧
અનંત ઉદયથી નિકળ્યો, મળી તહાં ત્રસ કાય;
દુર્લભ પંચેંદ્રિયપણું, સાથ નિરોગી કાય. ૨
મનુષ્ય ભવ મુશ્કેલીએ, પામ્યો પુન્યે કોય;
દેશ કૂળ અનુકૂળતા, દુર્લભ દુર્લભ જોય. ૩
પાંચે ઈંદ્રિ પુરી નહિ, અપુર્ણ આયુષ્ય કર્મ;
કે આવર્ણ અજ્ઞાનનું, દુર્લભ પામવો ધર્મ.

કદિ પુન્ય પ્રતાપથી, મળ્યાં અનુકુળ એહ;
વિષય વાસના વાધતાં, દુર્લભ ધર્મ સ્નેહ. ૫
તત્વ નિર્ણય દુર્લભ અતી, સરે ન એ વિણુ અર્થ;
સમ્યગ્ મારગ દોહીલો, પામે કોઇક સમર્થ. ૬
કદી મહા પુન્ય પ્રભાવથી, મળ્યા સર્વ સંજોગ;
પ્રમાદ વશ થઇ પરવર્યો, કામ અર્થ પ્રયોગ. ૭
સમ્યક્ રત્નત્રય માર્ગથી, પડે મિથ્યાત્વ પ્રસંગ;
દુરલભ દિલમાં સ્થાપવો, ધરમ સાથ સુરંગ. ૮
બોધિ રત્ન પામ્યા પછી, ખોયું ભવ દધિ માંય;
મળવું મુસ્કેલ થઇ પડે, શોધ્યું મળે ન ક્યાંય. ૯
સર્વે દ્રવ્ય સમુહ તે, મેળવવાનું સહેલ;
બોધી રત્ન સંસારમાં, સાંપડવું મુસ્કેલ.૧૦
સમ્યક્ જ્ઞાન દર્શન અને, ચારીત્ર એ ત્રી રત્ન;
બોધી રત્નત્રય મેળવી, સાચવવું કરી યત્ન.૧૧
વાસ્તવિક વિચારતાં, સ્વાધિન મળે સહેલ;
વસ્તુ પરાધીન પામવી, એ તો મહા મુશ્કેલ.૧૨
આત્મ સ્વભાવ ત્રી રત્ન છે, છે નિજનાંજ સદાય;
આવરણો આડાં કર્મનાં, ભ્રાંતિમય દેખાય.૧૩

એ આવરણો તોડવા, આદરીએ ઉપાય;
બોધી સ્વરૂપ નિજ આતમા, સુરલભપણે જણાય.૧૪
બોધી સ્વરૂપ નિજ આતમા, બોધી રત્ન પર્યંત;
ઉત્તરોત્તર પર્યાય સહુ, કરો સાચવવા યત્ન.૧૫
મહા મહેનતે મેળવી, છે નિશ્ચય નિજ પાસ;
બોધી નિજ સ્વભાવ છે, શુદ્ધ ભાવે ભવ નાશ.૧૬
પ્રમાદથી પ્રાપ્તિ નથી,

ઉપસંહાર.

અનુપ્રેક્ષા દ્વાદશ ભલી, અંતર આરોપાય;
રંગ રંગે રંગ લાગતાં, જીવન મુક્ત જણાય. ૧

છપય.

ભાવો ભાવના બાર, નિરંતર રહી નિજ ધ્યાને;
કષાય રાગ ને દ્વેષ, જાય અંતર અજ્ઞાને.
થાયે જ્ઞાન પ્રકાશ, સ્વ પર દ્રવ્ય જણાએ;
ઉર ઉપજે વૈરાગ્ય, કર્મની નિર્જરા થાએ.
ઉત્કૃષ્ટ વૈરાગ્યથી, ધ્યાની ધ્યાન સ્થિર થાય છે;
સ્વ સ્વરૂપ રમણ થકી, અંતે મોક્ષ જવાય છે. ૨

દોહરો.

સર્વ સુત્રનો સાર આ, આત્મજ્ઞાનનું મૂળ;
પુષ્પચંદ આરાધવા, આ અવસર અનુકૂળ. ૩

ઉપર લખી બાર ભાવના મોક્ષ રૂપી મહેલની મેડી ઉપર ચડવાને સોપાન એટલે પંગથીઆં રૂપ છે, અને સીડી ઉપર ચઢતાં લથડી ન જવાય માટે દોરીનો આધાર જોઇએ, તેમ નીચે લખી મૈત્રિ આદિક ચાર ભાવના અવલંબન દોરી રૂપ છે.

મૈત્રિ, પ્રમોદ, કારૂણ્ય ને, માધ્યસ્થ એ ચાર;
ભાવો ભાવના ભાવથી, ભવ ભયને હરનાર. ૧

મૈત્રી ભાવના.

સુક્ષમ બાદર જીવને, ત્રસ સ્થાવર ખટકાય;
પરમ મિત્ર ગણી સરવનો, ઇચ્છું ઉદય સદાય. ૧
ઇચ્છું પરસ્પર જીવમાં, વધો સદા સમભાવ;
જીવો સુખમાં દુઃખ તજી, થાય ન કર્મ જમાવ. ૨

પ્રમોદ ભાવના.

રિદ્ધિ, સિદ્ધિ ચારિત્રમાં, ચઢતા દેખી કોય;
મહા ભાગ્ય ગણી માનથી, મુજ મન મુદીત હોય. ૧
દયાળુ દુઃખી દેખી થવું, સુખી દેખી રળીયાત;
પ્રમોદ પર ઉત્કૃષ્ટમાં, નિજ ઉદયની વાત. ૨

કારૂણ્ય ભાવના.

રોગ, શોગ, ભઈ, દીનતા, દુઃખે પીડાતાં જેહ;
ઉપજો બુદ્ધિ એહવી, કરૂં સાહ્ય ધરી સ્નેહ. ૧
ભૂખ, તૃષા, વધ, બંધને, સહે શીત ને તાપ;
ટક મળજો એ જીવના, મટાડવા સંતાપ. ૨
નિર્દય નરના હાથથી, મરતાં જીવ જણાય;
મન, વચ, કાયા, વીતથી, આપું યોગ્ય સહાય. ૩
માનવ સૌ મૈત્રિપણે, ધરો પરસ્પર પ્રેમ;
સબળ અબળની સહાયમાં, રહો રાખીને રહેમ.
વાપરવા વીત ન હોય તો, કરૂણા આણી ઉર;
મન વચ કાયા થકી, કરવી સાહ્ય જરૂર.

માધ્યસ્થ ભાવના.

રાગ દ્વેષ રહીત જે, વિચરે છે વિતરાગ;
એમ ઉદાસીનતા થવી, નથી આજ એ લાગ. ૧
તો પણ ભાવના ભાવતાં, ત્રુટે કર્મ જમાવ;
કોઇક ભવે માધ્યસ્થ થઇ, મળે મોક્ષનો લાવ. ૨
સાત વ્યસનને સેવતા, કષાય સાથે ચાર;
ઉપેક્ષા કરી તેહની, ઉદાસીનતા ધાર. ૩
ધર્મ વિમુખ નાસ્તિક કહો, ક્રૂર નીચ ચાંડાલ;
કર્મે પ્રેર્યા પાપમાં, દયાજનક એ બાળ. ૪

સ્વ સ્વરૂપ નિશ્ચય થવા, તજવા વિષય વિકાર;
રાગ દ્વેષાદી જીતવા, ભાવું ભાવના ચાર. ૧
સીડી મોક્ષ દુવારની, કહી ભાવના બાર;
અવલંબન દોરી થશે, ભાવ ભાવના ચાર. ૨
અતિ રહસ્ય એમાં રહ્યું, સર્વ સુત્રનો સાર;
પુષ્પચંદ વિચારતાં, પામે ભવનો પાર. ૩

સોળ ભાવનાઓથી વૈરાગ્ય ઉપજ્યા પછી અઢાર પાપસ્થાન તથા આઠ કર્મથી મુક્ત થવાને માટે ચોવીસ જીન સ્તુતિ રૂપ ભાવના પચીસી કહે છે.

આદિ પ્રભુ સુણિ અરજ આ, આપો અંતર જ્ઞાન;
તજું હિંસા હું જીવની, ગણીને નિજ સમાન. ૧
અજિત જિન જીત્યા તમે, આઠ કર્મનાં વૃંદ;
મુજથી એક મુકાવજો, મૃષાવાદનો ફંદ. ૨
સંભવનાથ સહાયથી, સેવું ન અદત્ત દાન;
એહ પ્રતિજ્ઞા પાળવા, સહાય કરો ભગવાન. ૩
અભિનંદન વંદન કરી, માગું મુખથી એમ;
અબ્રહ્મચર્ય અનાદિનું, તજવા રાખું નેમ. ૪
સુમતિનાથ સુમતિ દિયો, તજું પરિગ્રહ એમ;
પુદ્ગળ રચના પારકી, હરખ શોક ધરૂં કેમ. ૫
પદ્મ પ્રભુ પ્રભાવથી, કરી ક્રોધને દૂર;
ક્ષમાવંત રહું ખંતથી, તજાય દોષ જરૂર. ૬
સુપાર્શ્વ સ્વામી પસાયથી, મરદું માન અમીર;
અનંત કાળથી અહંપદે, ભોગવું ભવ જંજીર. ૭

ચંદ્ર પ્રભુ ચિત્ત ચાહતાં, છુટે માયા જાળ;
પ્રપંચ બધા પરલે થતાં, પ્રસરે મંગળ માળ. ૮

સુવિધિ સ્વામી સેવતાં, ચિત્ત ધરી સંતોષ;
લોભ લાલસા લય કરૂં, જે છે મોટો દોષ. ૯

શિતળ જીન સહાય કરો, એવું હું સમભાવ;
રાગ દ્વેષને ચેસવા, કદી ન ફાવે દાવ. ૧૦

શ્રંશનાથ આશ્રય આપની, ટાળો આત્મ કલેશ;
પ્રત્યાખાન પણ આજથી, તજાવશો લવ લેશ. ૧૧

વાસુપુજ્ય દિલે વસો, પૈશુન્ય પાપ તજાય;
પર પરિવાદ ને રઇ અરઇ, માયા મોસો જાય. ૧૨

વિમળનાથ વિનતિ કરી, માગું વિનય સહીત;
મિથ્યા દર્શન શલ્ય જઇ, પામુ શુદ્ધ સમકીત. ૧૩

અનંત અનંત પ્રભાવથી, આપો અવિચળ વાસ;
અષ્ટ કર્મ અરી આકળા, રહે ન તેનો ત્રાસ. ૧૪

ધર્મ ધુરંધર ધ્યાનથી, આશા રાખું એક;
જ્ઞાનાવરણી કર્મનો, છુટે પાટો છેક. ૧૫

શાંતી શાતા આપવા, છે જગના આધાર;
દર્શનાવરણી કર્મથી, કરજો મુજ ઉદ્ધાર. ૧૬

કુંથુનાથ કૃપા કરી, આપો માગું આજ;
વેદની કર્મ નીવારજો, પામું સાતા સાજ. ૧૭

અરજ કરૂં અરનાથજી, કરો કૃપા કરૂણાળ;
મોહ પાસના બંધથી, છોડો દીન દયાળ. ૧૮

મલ્લિ જીણંદ મયા કરો, જન્મ મરણ દુઃખ જાય;
આયુષ્ય કર્મને ટાળવા, માગું આપ સહાય. ૧૯

મુનિ સુવ્રત સુવ્રત દઈ, કાપો નામ નિશાન;
ગોત્ર કર્મ તો કાપશો, નેમિનાથ ભગવાન. ૨૦

અંતરાય અલગ થતાં, ફાવે સઘળા દાવ;
નેમ પ્રભુજી આપશો, ત્રી રત્ન શુભ લાવ. ૨૧

પાર્શ્વ પ્રભુ પ્રભાવથી, પ્રગટે પુન્ય પ્રતાપ;
રાગ દ્વેષ દૂરે થતાં, મટે સર્વ સંતાપ. ૨૨

શ્રીવર્ધમાન વૃદ્ધિ કરો, સર્વ સ્થાને સમભાવ;
આપ તણા ઉપદેશમાં, એ તરવાનું નાવ. ૨૩

ભાવે ભાવના ભાવતાં, નિર્જરે કર્મ જરૂર;
આતમ શક્તિ ઉદય થતાં, નથી મોક્ષ કંઇ દૂર. ૨૪
પુષ્પચંદ જીન જાપથી, તજીએ પાપ અઢાર;
અષ્ટ કર્મ અરી ભય થકી, મૂકાવે નીરધાર ૨૫

અઢાર પાપસ્થાન અને અષ્ટ કર્મ નિવારણાર્થે ચોવીસ જીન સ્તુતિ રૂપ ભાવના ભાવ્યા પછી ધ્યાન તરફ લક્ષ દોરવે છે.

સંક્ષિપ્ત ધ્યાન સ્વરૂપ.

અનાદિ અનંત સંસાર છે, આ સંસાર સ્વરૂપ;
દુરલભ તેમાં પામવો, મનુષ્ય જનમ મંગીરૂપ. ૧
કાગ તાડ ફળ ન્યાયથી, મળ્યો જોગ આવાર;
નિશ્ચય કર નિજ રૂપનો, મેલી મોહ લગાર. ૨
મનુષ્ય જન્મ સાર્થક થવા, કર પુરૂષારથ ચાર;
ધર્મ અર્થ ને કામ છે, ચોથો મોક્ષ વિચાર. ૩
મધ્ય એને અધમ ગણી, લેવો ધર્મ આધાર;
પરમ પુરૂષારથ આદરો, જે છે મોક્ષ વિચાર. ૪

ધ્યાનની પ્રાપ્તિ કેવા પુરૂષોને થાય તે કહે છે.

મનુષ્ય ભવે ધીર વીર જે, ભેદી ભવ જંજાળ;
લે છે સંયમ ભાર. ૫
કરમ કોષને કાપવા, વળી સમ્યક્ ચારીત્ર;
સમ્યક્ દર્શન જ્ઞાનને, સેવે ચાકખે ચિત્ત. ૬
કારણ મોક્ષ મળવા તણું, સાધન મોક્ષ સહાય,
સમ્યક્ દર્શન આદિક છે, સંયમથી સ્થિર થાય. ૭
તેમાં જ્ઞાન ગર્ભિત છે, પી સુધારસ જ્ઞાન;
જન્મ જરા નીવારવા, છે અવલંબન ધ્યાન. ૮
તરવા ભવસાગર તણું, જ્ઞાને કર્મ વિનાશ;
ધ્યાને સમ્યક્ જ્ઞાન છે, રાખ ધ્યાનની પ્યાસ. ૯
કર્મ વિનસતાં મોક્ષ છે, રાખી ચિત્ત સ્વશાન્ત;
ઇચ્છા મુર્છા પ્રમાદ તજ, ધરો ધ્યાન એકાંત. ૧૦
રાગ દ્વેષ તજી મોહને, તજી દેહ અનુરાગ;
ભોગ વિલાસ ઇચ્છા તજી, ધરે ધ્યાન મહા ભાગ. ૧૧
વિરક્ત થઇ સંસારથી, સંક્ષેપે જો ધાર;
ધ્યાન વર્ણન વિસ્તાર છે, ધ્યાન ત્રણ પ્રકાર. ૧૨
શાસ્ત્ર પ્રમાણે આમ છે,

શુભ યોગ તે પુણ્ય છે, અશુભ યોગ તે પાપ;
શુદ્ધ ઉપયોગ ત્રીજો કહ્યો, મોક્ષ હેતુ એ જાપ. ૧૩
શુભ ધ્યાનથી પુણ્ય ને, અશુભ ધ્યાનથી પાપ;
મટે બંધ શુદ્ધ ધ્યાનથી, મળે મોક્ષની છાપ. ૧૪
આર્ત્ત રૂદ્રનો અંત કરી, ધર જીવ ધરમ ધ્યાન;
શુકલ ધ્યાન સાથે મળે, કેવળ દરશન જ્ઞાન. ૧૫
આરત રૂદ્ર એ ધ્યાનથી, અધોગતિમાં વાસ;
આખર અવસર આતમા, શુભ ધ્યાને સુખ વાસ. ૧૬

છપય છંદ.

ગૃહસ્થપણામાં ધ્યાન, પરિગ્રહમાં પલટાએ,
અન્ય મતિનું ધ્યાન, કુનય થકી હણાએ,
દ્રવ્ય લીંગીનું ધ્યાન, રહે અંતરથી ન્યારૂં,
ભાવ શુદ્ધ મુનીરાય, ધરે ધ્યાન તે પ્યારૂં,
રત્ન ત્રય યુકત જે આતમા, સ્વ સ્વરૂપને ધ્યાય છે,
જેમથી કર્મ કાપી બધાં, અંતે મોક્ષમાં જાયછે. ૧૭

સમ્યક્ દર્શન, સમ્યક્ જ્ઞાન અને સમ્યક્ ચારીત્ર એ ત્રી રત્ન પ્રાપ્ત થયા અગાઉ ધ્યાનનો અભાવ છે

માટે ત્રી રત્નનું સંક્ષેપ સ્વરૂપ કહે છે, તેમાં પ્રથમ
સમ્યક્ દર્શન કહે છે. તત્વની રૂચી થવી તે સમ્યક્
દર્શન છે; માટે પ્રથમ નવ તત્વ કહે છે.

છપય છંદ.

નવ તત્વ પરતીત, રૂચી થઇ કે કહો સરધા,
સમ્યક્ દર્શન રત્ન, પામવા ભવિને સ્પરધા,
જાણવા યથારથ તત્વ, સમ્યક્ જ્ઞાન એ બીજું,
વિરક્ત પાપથી થાય, સમ્યક્ ચારીત્ર તે ત્રીજું;
ત્રી રત્ન એવે નામથી, ત્રણે સાથ ગણાય છે,
વર્ણન દરેકનું જુજવું, કરતાં ગ્રંથ ભરાય છે.

ત્રી રત્ન સ્વરૂપ.

સમ્યક્ દર્શન. (નવ તત્વ વિચાર.)

નવ તત્વ અભ્યાસથી થાય વિશ્વનું જ્ઞાન;
હેય જ્ઞેય ઉપાદેય અનુસરે, એજ ખરો વિદ્વાન.

જીવ અજીવ પુન્ય પાપને, આશ્રવ સંવર સોય;
નિર્જરા બંધ મોક્ષ તે, તત્ત્વ પદારથ જોય. ૨
રચના વ્યાપીત વિશ્વની, નવ તત્ત્વમાં ભાગ;
ષટ દ્રવ્ય વિચારો ખંતથી, વળી પંચાસ્તિ કાય. ૩
જીવ અજીવ બે જાણવા, ચૈતન્ય જડ જુદાય;
ભળે નિરખીરની પરે, સંપી રહ્યા સદાય. ૪
પુન્ય સંવરને નિર્જરા, મોક્ષ સહીત જે ચાર;
અનુક્રમે એ આદરી, પામો ભવનો પાર. ૫
આગારી પુન્ય આદરે, એ તો નય વ્યવહાર;
નિશ્ચય તજવા જોગજો, અણગારી આચાર. ૬
પાપ આશ્રવ ને બંધ તે, ત્રણે તજવા જોગ;
તેહ તજ્યા વિણ નહિ કદી, મોક્ષ તણો સંજોગ. ૭

જીવ તત્ત્વ.

ચૈતન્ય લક્ષણ જીવનું, સુખ દુઃખ વેદનહાર;
સહુ ઉપયોગી છે સદા, અસંખ્ય પ્રદેશી ધાર. ૧
હતો જીવતો આજ છે, જીવશે હજુ સદૈવ;
ત્રણે કાળમાં જીવતો, કહેવાયો તે જીવ. ૨

ત્રીલોકમાં તલ સમો, વગ નહિ જીવ વિનાય;
ઠાંસો ઠાંસ ભર્યા પડયા, ત્રસ સ્થાવર બહુ કાય. ૩
ચૈતન્ય લક્ષણથી લહો, એક પ્રકારે જીવ;
બે પ્રકાર પણ આમ છે, સંસારી ને શીવ. ૪
કર્મ રહીત થઇ સિદ્ધ થયા, કરમે આહ્યા જીવ;
સંસારી જનમે મરે, અજર અમર તે શીવ. ૫
સંસારી ગતિ ચારમાં, ફરે અનંતી વાર;
મનુષ્ય તિર્યંચ નારકી, કરમે દેવ કુવાર. ૬
ત્રસ સ્થાવરપણા થકી, પણ બે ભેદ જણાય;
વિવિધ ભેદ વિસ્તાર છે, મુખ્ય ચૌદ ગણાય. ૭
પાંચસે ત્રેસઠ પણ કહ્યા, ભેદ સુત્ર અનુસાર;
તત્ત્વ વરણન વાંચી જુઓ, જયાં છે બહુ વિસ્તાર. ૮

અજીવ તત્ત્વ (ખટ દ્રવ્ય; પંચાસ્તિકાય.)

જીવ પુદ્ગલ ને ધર્મ છે, અધર્મ આકાશ કાળ;
ખટ દ્રવ્યમાંહી એકલો, જીવ ચૈતન્ય નિહાળ. ૧
બાકી પાંચ ચૈતન્ય વિના, અજીવ દ્રવ્ય કહેવાય.
પુદ્ગલ એકલો રૂપી છે, બાકી અરૂપી સહાય. ૨

પ્રદેશાંત્મીક પાંચ છે, કાલ દ્રવ્ય વીનાય;
અનેક પ્રદેશથી બને, પંચ કાય કહેવાય, ૩
કાળજ એક પ્રદેશી છે, તેથી ન કાય ગણાય;
ખટ દ્રવ્ય નિજ નિજરૂપથી, ન્યારાં ન્યારાં સહાય, ૪
પુદ્ગલના બે ભેદ છે, અણુ અને વળી સ્કંધ;
સ્પર્શ વર્ણ રસ ગુણ છે, છે રૂપી છે ગંધ. ૫
સ્કંધ દેશ પ્રદેશ અને, પરમાણું એ ચાર;
ભેદ પુદ્ગલના જાણવા, સંબંધને અનુસાર. ૬
ધર્મ અધર્મ આકાશ એ, ભિન્ન ભિન્ન એક;
અમુર્તિક અક્રિય અને, ત્રણે સ્થિર છે છેક. ૭
ગતિમાં સહાઈ સર્વદા, વ્યાપક લોકાકાશ;
ધર્મ દ્રવ્ય એ જાણીએ, જગ ઉપકારી ખાસ. ૮
સ્થિતિ સહકારી સદા, અધર્મ દ્રવ્ય છે એહ;
વ્યાપી લોકાકાશમાં, થાય સહાઈ તેહ. ૯
ધર્મ પ્રેરણા નવી કરે, જીવ પુદ્ગલને લેશ;
પ્રવૃતી કરતા પ્રાણીને, જળ મચ્છ જેમ ઉદ્દેશ. ૧૦
અધર્મ દ્રવ્ય પ્રેરક નથી, સ્થિતિ કરાવા કાજ;
છાયાએ પંથી રહી, પામે સાતા સાજ. ૧૧

આકાશ અન્ય પાંચને, આપે છે અવકાશ;
સર્વ વ્યાપિ સ્વ આશ્રયી, લોક અલોકાકાશ. ૧૨
એક કાળ બે ભેદથી, નિશ્ચય ને વ્યવહાર;
લોકાકાશ પ્રદેશમાં, સ્થિત નિશ્ચય કાળ. ૧૩
જ્યોતિષી આદિ દેવતા, ગમનાદિ અનુસાર;
સમયાદી જે ભેદ છે, તેજ કાળ વ્યવહાર. ૧૪
સમસ્ત પદારથ વિશ્વના, નવા પુરાતન થાય;
પરિણમન સહુ દ્રવ્યનું, વર્તન કાળ સહાય ૧૫
કાળ વર્તનાથીજ સહુ, પલટે રૂપ પદાર્થ;
સમય સમય સ્થિતિ ફરે, અચળ નિયમ યથાર્થ. ૧૬
વર્તમાન ભળે ભૂતમાં, ભવિષ્ય તેને ઠાર;
દ્રવ્ય અવસ્થા પાલટે, અચળ નિયમ અનુસાર. ૧૭
જીવ પુદ્ગલનું રૂપ તે, પલટ્યું રહે સદાય;
તે કારણ તે બેયને, કહ્યા વ્યંજન પર્યાય. ૧૮
બાકી દ્રવ્યો ચાર તે, નિજ રૂપેજ સદાય;
હાની વૃદ્ધિ ન તેહને, તેથી અર્થ પર્યાય. ૧૯
ધર્મ અધર્મ બે દ્રવ્યને, અસંખ્યાતા પ્રદેશ;
કાળ પ્રદેશ અણુ માત્ર છે, નભ અનંત વિશેષ. ૨૦

પુદ્ગલ એક પ્રદેશથી, સંખ્યાત અસંખ્યાત;
અનંત પ્રદેશી પણ કહ્યો, જુજવા સ્કંધની જાત. ૨૧

પુણ્ય તત્વ.

અન પાણી આદિ નવ વિધે, ત્રિવિધ પુણ્ય બંધાય;
સાતા વેદનીય આદિથી, ફળ સુખ રૂપ પમાય. ૧
બેતાલીસ પ્રકાર છે, સાતા આદિ જેહ;
નવતત્વ આદિ ગ્રંથથી, સમજાશે સહુ તેહ. ૨
શુભ આશ્રવ શુભ પુણ્ય છે, શુભ સંચય કરનાર;
શુભ આશ્રવ સંચય થતાં, મુકિત ફળ દાતાર. ૩

પાપ તત્વ.

પાપ સ્થાન અઢારથી, બાંધે છે, જીવ પાપ
બ્યાસી પ્રકારે ભોગવે, નર્ક તિર્યંચ ગતિ છાપ. ૧
જ્ઞાનાવરણીય આદિથી, સંસ્થાન પર્યંત;
વિસ્તાર બહુ નવતત્વમાં, વાંચો રાખી ખંત. ૨

અશુભ આશ્રવ તે પાપ છે, કર્મ બંધ કરનાર;
અશુભ તજી શુભ આદરો, શુભ ગતિ ફળ દાતાર. ૩

આશ્રવ સંવર, નિર્જરા તત્ત્વ.

આશ્રવ સંવર નિર્જરા, બાર ભાવના માંય;
છે વર્ણન વિસ્તારથી, વાંચી વિચારો ત્યાંય.

બંધ તત્ત્વ.

મિથ્યાત્વ જોગ અવિરતી, કષાય ચાર પ્રમાદ;
કર્મ બંધના હેતુઓ, તજવા રાખી યાદ.

છપય છંદ.

જઘન્ય મધ્ય ઉત્કૃષ્ટ, સ્થિતિ વધતી કે ઘટતી,
ભોગવે કર્મ ત્રીકાળ, સ્થિતિ બંધ એ પદ્ધતિ.
કર્મ ફળ ઉદય થાય, અનુભાગ બંધ જાણો;
હવે કહું વ્યાખ્યાય, પ્રદેશજ બંધ પ્રમાણો.
નીર ખીર તલ તેલ સમ, પ્રદેશ જીવને કર્મનો;
રહે મળી એક રૂપ થઇ, જે છે બુજવા ધર્મના. ૨

શ્રી મોક્ષ સ્વરૂપ.

સંબંધ નહિ જ્યાં સર્વથા, કર્મ કાર્ય લવલેશ;
પ્રતિપક્ષી સંસારનો, અવિચળ મોક્ષ પ્રદેશ. ૧
દર્શન વિર્યાદિ ગુણનિધી, ચીદાનંદ અરૂપ;
અત્યંત અવસ્થા એહ છે, સાક્ષાત શિવ રૂપ. ૨
અનોપમ અવિનાશી સદા, જ્યાં સ્વભાવિક સુખ;
ઈંદ્રિય વિષય વર્જિત છે, નહિ તૃષા નહિ ભૂખ. ૩
નિર્મળ શાંત કૃતાર્થતા, સમ્યક્ જ્ઞાન સ્વરૂપ;
અરૂપી અવિનાશી સદા; સુધા સિદ્ધ સ્વરૂપ. ૪

ઉપસંહાર.

બીજક આ નવ તત્વનાં, કહ્યાં વગર વિસ્તાર;
સમ્યક્ દર્શન જ્ઞાનના, સંબોધન હીતકાર. ૧

છપય છંદ.

તત્વ વરણુન વિસ્તાર, અન્ય ગ્રંથોમાં જડશે,
મળતાં સમ્યક્ જ્ઞાન, મિથ્યાત્વ મૂળથી ટળશે;

હેય જ્ઞેય ઉપાદેય, જાણી સંયમ ચિત્ત ચડશે,
થતાં ત્યાગ વૈરાગ્ય, રત્ન ત્રીજું સાંપડશે;
સમ્યક્ દર્શન જ્ઞાન સહ, ચારીત્ર જો ચોકખું પળે,
શુદ્ધ યોગ શુદ્ધ ધ્યાનથી, મોક્ષ મંદીરમાં જઇ મળે. ૨

સમ્યક્ દર્શનનું મહાત્મ્ય.

દ્રવ્ય તત્ત્વ પદાર્થને; વળી પંચાસ્તિ કાય;
પ્રતિત થઇ જે પુરૂષને, મોક્ષ નજીક કહેવાય.
દ્રવ્ય પદારથ કાયની, સરધા રૂચી પ્રતીત;
સમ્યક્ દર્શન એજ છે, ધારો ચિત્ત ખચીત.
સમ્યક્ દર્શન રત્ન તે, આભુષણ અનુપ;
માર્ગ સુચવે મોક્ષનો, શોધન આત્મ સ્વરૂપ. ૩

કવિત-મનહર.

સમ્યક દર્શન સદા, જ્ઞાન ચારીત્રનું બીજ;
અથવા કારણ લહો, યમને[1] પ્રશમનું[2].

---

૧ મહાવ્રતાદિ, ૨ વિશુદ્ધ ભાવ,

આશ્રય[1] તપ સ્વાધ્યાય, શમ દમ બોધ વૃત્ત;
સફળ કર્યાનું કામ, સમ્યક્ દર્શનનું.
તોય એ સર્વ તોય, એકલું એ ઉપયોગી;
એ વિના મિથ્યાત્વ કઇ, ભોગવે અજ્ઞાનનું.
સમ્યક્ દર્શન સાથે, થોડાં ચારિત્રાદિ હોય;
તોય ફળ આપે અતી, ઔષધ સમાનનું. ૪

દોહરા.

મોક્ષ માર્ગનું મુખ્ય તો, સમ્યક્ દર્શન અંગ;
સદા ભાગ્ય તે માનવી, રાચ્યો તત્ત્વ પ્રસંગ. ૫
અતીચાર વીણ નિર્મળું, સમ્યક્ દર્શન હોય;
પુણ્યાત્મા સદા ભાગ્ય એ, મોક્ષ સીડીએ સ્હોય. ૬

કવિત-મનહર.

અમૃત કહો કે કહો, અતુલ્ય સુખ નિધાન,
સમસ્ત કલ્યાણ બીજ, ભવાર્ણવ નાવ છે.

---

૧ મદદગાર.

પાપ રૂપી વૃક્ષને તો, કાપવાનો કુહાડો છે,
પવિત્ર તીરથ માંહી, પ્રધાન પ્રભાવ છે.
મિથ્યાત્વ રૂપી શત્રુને, જીતનાર શુભટ છે,
શરણાગતની સાર, લેવાનો સ્વભાવ છે.
માટે ભવ્ય શોધો સાધ્ય, સમ્યક્ દર્શન તણી,
મનુષ્ય જનમ માંહી, લેવાનો જે લાવ છે. ૭

દોહરો.

સમ્યક્ દર્શન સમજવા, થયો ચિત્ત વિચાર;
પુષ્પચંદ આધાર આ, જ્ઞાનાર્ણવ અનુસાર. ૮

સમ્યક્ જ્ઞાન વર્ણન.

સ્થિતિ લોકાલોકની, જાણે સિદ્ધ સમાન;
સર્વજ્ઞ છે આ આતમા, નિશ્ચય નયથી જાણ. ૧
કર્મ પ્રતિબંધથી થયા, ભેદ અનુક્રમ વાર;
મતિ શ્રુત અવધિ અને, મનઃ પર્યવ એ ચાર. ૨
કેવળ જ્ઞાન એ પાંચમું, જે છે નિરાવર્ણ;
મહા યોગિ એ મેળવે, રાખી આતમ શર્ણ.

કવિત-મનહર.

અનંતાનંત પ્રદેશી, આકાશ દ્રવ્યની માંહે;
અસંખ્યાત પરદેશીને, લોકાકાશ કહ્યો છે.
તે માંહે જીવ પુદ્ગલ, ધર્માધર્મ અને કાલ;
એ અનંત દ્રવ્યે ભર્યો, ત્રણે કાળ રહ્યો છે.
ત્રીકાળ અનંતાનંત, ભિન્ન ભિન્ન પર્યાય તે;
સર્વ એકી સમયમાં, જાણપણે લહ્યો છે.
એવો પુર્ણ જ્ઞાનવાન, સ્વભાવિક આત્મા નિશ્ચયે;
તોય ભેદ ભાવ નિજ, કર્મ થકી ગ્રહ્યો છે. ૪

દોહરો.

ઉત્પાદ વ્યય ધૃવ ભાવ મય, જગના જેહ પદાર્થ;
ભાસે એક સમયે સહુ, એ છે જ્ઞાન યથાર્થ. ૫

ચારીત્ર.

શ્રાવકનો અણુવ્રતાદિ આગાર ધર્મ અને સાધુનો સહાવૃતાદિ અણગાર ધર્મ છે પણ તે બંનેનો સમા-

વશ ચારીત્રમાં થતો હોવાથી બંને ધર્મનું ચારીત્ર સાથે વર્ણન કરવામાં આવે છે.

સમ્યક્ ચારીત્ર પ્રભાવથી, ચિત્ત વરતે સમ ભાવ;
ધીર વીર ને સ્થિર થઇ, લહે જ્ઞાનનો લાવ. ૧
સર્વ પાપથી સર્વથા, નિવૃતિનું સ્થાન;
જીવન જોગીશ્વર તણું, વિશુદ્ધિ નિધાન. ૨
સામાયિક આદિ લઇ, યથાખ્યાત પર્યંત;
ચારીત્ર પંચ વિધિએ કહ્યાં, ધારો રાખી ખંત. ૩
પાંચ મહાવૃત સમિતિ, ત્રી ગુપ્તી લઇ સાથ;
ચારીત્ર તેર પ્રકારથી, વર્ણવ્યાં શ્રી જગનાથ.
ભવ ભ્રમણ ભયભીતને, તરવાનો આધાર;
વીર પ્રભુજીએ વર્ણવ્યાં, ચારીત્ર તેર પ્રકાર.
હિંસા, અસત્ય, અદત્ત ને, મૈથુન પરીગ્રહ ત્યાગ;
એ મહાવૃત અણગારનાં, પાળે મુનિ મહાભાગ્ય. ૬
મહાવૃત ભાર વહેવો કઠીન, સુરવીરનું કામ;
શ્રાવક અણુવૃત આદરે, જો પહોંચે નહિ હામ.

બાર વૃત આપય દોહરા.

ત્રસ સ્થાવર સહુ જીવની, મનમાં મેર સદૈવ;
સ્થાવર વરજી શ્રાવકો, હણે ન જાણી જીવ. ૧
કન્યા ગો ભૂમિ સાખ કે, જમા લેણુ ને દેણુ;
વૃત બીજે શ્રાવક કહી, વદે ન જુઠું વેણુ. ૨
ખાતર વાટ પાડે નહિ, જડયો જણાવે માલ;
વરતન વૃત ત્રીજા તણું, તજે તસ્કરી ખ્યાલ. ૩
સંતોષ સ્વદારા ભણી, અવર ભગની માય;
ચોથું વૃત શુદ્ધ શ્રાવકો, પાળે અખંડીત કાય. ૪
ધન ધાન્ય ગૃહ ઢોરને, કરે પરિગ્રહ માન;
વૃત પાંચમે શ્રાવકો, રોધે ઇચ્છા જાણ. ૫
અધો ઉર્ધ ત્રિછી દિશા, કર્યું માન આ કાય;
વૃત છઠે શ્રાવક નહિ, લોપે સહુ ઇચ્છાય. ૬
ઉપભોગ પરિભોગનું, કરે દિન પ્રતિ માન;
સાતમા વૃતથી પંદરે, તજાય કરમાદાન. ૭
અપધ્યાય પ્રમાદને, હિંસક શસ્ત્રનો સાજ;
આઠમે ઉપદેશે નહિ, કર્મ બંધનાં કાજ. ૮

...પાર સુરત કે અધિક, રોકી આશ્રવ દ્વાર;
સમતા રસ નિત સેવતા, વૃત નવમે નીરધાર. ૯

ઉપભોગ પરિભોગ દ્રવ, સાથે દિશા માન;
અમૂક વખતનું આદરે, દશમું વૃત ગુણવાન. ૧૦

ચૌવિધ અહાર તજી કરે, પાપ સ્થાન પચખાણ;
અમુક પહોરનું એહ છે, એકાદશ વૃત ધ્યાન. ૧૧

અન પાણી વસ્ત્ર ઔષધિ, અન્ય સંયમનો સાજ;
બારમે વૃત્ત નિર્દોષ દૈ, વાંદે મુનિ મહારાજ. ૧૨

આયુ સ્થિતિના અંતમાં, આળવી થાય નિર્દોષ;
શ્રાવક રોકી આવતા, ચિત્ત વરતે સંતોષ. ૧૩

બાર વૃત સલેખના, જ્ઞાનાદિ અતિચાર;
પુષ્પચંદ આલોવતાં, શુદ્ધ રહે આચાર. ૧૪

અહિંસા વૃત.

અહિંસા વૃત આરાધતાં, બાકી ચાર સહેલ;
ચુકે ચિત્ત લગારતો, બાકીનાં મુશ્કેલ. ૧

મન વચન કાયા થકી, ત્રસ સ્થાવર જે જીવ;
સ્વપને ઘાત ન સંભવે, તો પામે સુખ શીવ. ૨

જેટલી આશા આપને, મળવા અભય દાન;
સરવ જીવને તેટલો, આપો દૃઢ સમાન. ૩
હું અવર તજી આંતરો, સમ ભાવે વરતાય;
પાપ સ્થાન પરાં થતાં, પહેલું વ્રત પળાય. ૪
જીવન વહાલું જીવને, મરણે કંપિત હોય;
નિજ અનુભવથી અનુભવી, જીવ ન હણશો કોય. ૫
કરી કલ્પના ઘાતની, રહ્યો જીવતો હોય;
ઘાત કર્યા સમ પાપ તો, ભોગવવાનું તોય. ૬
કરવી કે અનુમોદવી, અવર જીવની ઘાત;
ઘાત એ નિજ આતમ તણી, એ છે નિશ્ચય વાત. ૭
આત્મવત સૌ જીવશું, વરતે મન વચ કાય;
નમસ્કાર ત્રીકાળ હો, પરમાત્મા ગુણદાય. ૮
હિંસા ત્યાં ધર્મ ન સંભવે, ધર્મ અહિંસા એક;
ધર્મ[1] નિમિત્ત હિંસા કરે, મોહ અંધ છે છેક. ૯
અહિંસા ધર્મ છે આતમનો, જ્યાં હિંસા ત્યાં પાપ;
ધર્મ નિમિત્ત હિંસા કરી, લેવી નર્કની છાપ. ૧૦

૧ યજ્ઞ બલીદાન વીગેરેમાં થતો પશુ વધ.

ધર્મ અંગ સમસ્તમાં, અહિંસા એક પ્રધાન;
તપ જપ વૃત વિણ એકલી, આપે પરમ કલ્યાણ. ૧૧
સાલી મત્સ સંકલ્પથી, ગયો નર્ક ગતિ જોય;
કરતા ને અનુમોદતા, સરખા પાપી હોય. ૧૨
સાર લગારક લાગતાં, જે કંપે નિજ કાય;
પર પ્રાણ શસ્ત્રે હણે, એ અજ્ઞાન દશાય. ૧૩
ભયભિત સંસારી જીવને, અહિંસા અમૃત રૂપ;
સમરથ ભાતું સ્વર્ગનું, આપે સુખ અનુપ. ૧૪
ત્રસ સ્થાવર સહુ જીવને, આપે અભયદાન;
વિવેકી કરૂણાળુ સદા, સકળ ગુણ નિધાન. ૧૫
ત્રસ સ્થાવર સહુ જીવને, ગણવા નિજ સમાન;
પરમ મિત્ર સમજી સદા, દેવું અભયદાન. ૧૬
રાક્ષસ મનુષ્ય જનમ મહીં, પીડે પરના પ્રાણ;
અહિત કરે નિજ આત્મનું, તે મોહાંધ અજાણ. ૧૭
હિંસા નિષેધી સર્વથા, જીન આગમમાં જોય;
અન મતિ અહિંસા વદે, પોષે હિંસા તોય. ૧૮
કિંચિત પીડાથી લઇ, પ્રાણ હરણ પર્યંત;
હિંસા મન વર્તન સમી, સુક્ષ્મ થકી અત્યંત. ૧૯

પંચ વિષયને પોષવા, કે કરવા વેપાર;
ગમત ખાતર પણ ઘણા, હિંસાના હથિયાર. ૨૦
નિશ્ચય નયથી તો કહી, રાગાદીક હિંસાય;
વ્યવહારે પર ઘાત તજ, ભવી ભજ અહિંસાય. ૨૧
અહિંસા વૃત પુરણપણે, અણગારી આચાર;
શ્રાવક પણ હિંસા તજે, છતાં કંઇ આગાર. ૨૨
ત્રસ સ્થાવર સહુ જીવની મનમાં મહેર સદૈવ;
સ્થાવર વરજી શ્રાવકો, હણે ન જાણી જીવ. ૨૩
મન વચન કાયા થકી, પરના પ્રાણ દુભાય;
પુષ્પચંદ હિંસા કહી, જીન આગમની માંય. ૨૪

બીજાં સત્યવૃત.

વચનરૂપ વન ગહન છે, સત્ય વૃક્ષે શોભિત;
અતિ યત્ને ઉછેરીએ, સીંચી દયા જળ નિત્ય. ૧
વૃત અહિંસ્યા વૃક્ષની, વાડ બાંકી વૃત ચાર;
સત્ય વાડ સડતાં ઘટે, સર્વ સબળ આધાર. ૨

અસત્ય છે તે સત્ય જ્યાં, હિત જીવનું જાણ;
સત્ય છતાં અસત્ય જો, પર અહિત પીછાણ. ૩
અનાદિ આત્મ કલેશને, યમ નિયમે હણુનાર;
મુનિ સત્ય રૂપ નાવથી, તરે ભવ દધી પાર. ૪
સત્ય કરૂણામય સરલ, અવિરૂદ્ધ ગંભીર;
વચન વદો વિવેકથી, તરવા ભવ દધિ તીર. ૫
અબોલ અવલંબન ભલું, સર્વ સિદ્ધિ દાતાર;
છતાં બોલ તો બોલજે, પ્યારૂં સત્ય હિતકાર. ૬
સત્ય સનાતન ધ્રૂવ છે, કેવળી ભાષિત ધર્મ;
અસત્યથી ઉલટાઇને, ઉભરાયા અધર્મ. ૭
કંઇક નીચ સ્વારથી થઇ, વિષય પોષવા કાજ;
અસત્ય વચન વિલાસથી, થઇ બેઠા ગુરૂરાજ. ૮
અસત્ય આંદોલન સમુહથી, વ્યાપ્યો અજ્ઞ અંધકાર;
શાસ્ત્ર શસ્ત્ર સમાં રચી, કર્યો અસાર સંસાર. ૯
દુષ્ટ પુરૂષના મુખની, અસત્ય વાણી જોય;
જેવી કાળી નાગણી, દુઃખરૂપ જગને હોય. ૧૦
પૂછે તોપણ નવિ વદો, સંદેહી પાપી વાચ;
દ્વેષ દોષ સંયુક્ત પણ, સુણવાને નહિ રાચ. ૧૧

સત્યકાર માર્મિક અધીર; વિરોધી દયા રહીત;
પ્રાણ જતાં પણ નહિ કદી, વદો વચન વિપરીત. ૧૨.
દયા સિંધુ હૃદયમાં, વચન લહેર કલ્લોલ;
શાન્તિ આપે સરવને, ધન્ય સત પુરૂષ બોલ. ૧૩
ધર્મ નાશ વિપરીત ક્રીયા, લોપ શાસ્ત્રનો થાય,
સરલપણે સમજાવવા, પૂછ્યા વીણ વદાય. ૧૪
તત્ત્વ દ્રવ્ય ને કાયની, હોય શ્રદ્ધા વિપરીત;
એ મિથ્યાત્વ મહા મોટકું, સત્ય ન ચોંટે ચિત્ત. ૧૫
સત્ય સરધાથી ઉચર્યો, ઉલટાયું કંઇ રૂપ;
તો તે સત્યજ સમજવું, અસત્ય એજ સ્વરૂપ. ૧૬
કર્મ બંધ અતિ આકરા, અસત્યથી બંધાય;
નર્ક નીગોદ તિર્યંચનાં, અત્યંત દુઃખ પમાય. ૧૭
ચંદ્ર ચંદન ચંદ્રામણી, પુષ્પ મુક્તાફળ હાર;
એથી અધીક શીતળ કહો, વચન દિલાસા દાર. ૧૮
અગ્નિ જવાળાથી અધિક, દુર્વચન દુઃખકાર;
ખટ રસ ભોજનથી ભલા, વચન દિલાસાદાર. ૧૯
મન પ્રસન્ન સત્ય પ્રિયકર, લલીત વચન ભંડાર;
તેહ છતાં શઠ તો વદે, કઠોર મૂખ ઉચ્ચાર. ૨૦

तत्वज्ञ सत्य शील सह, जे महा पुरुष कोय;
चर्ण स्पर्श भूतळ थतां, पृथ्वी पावन होय. २१
सत्य प्रतिज्ञा रहीत जे, अधम पापी नीच;
मनुष्यपणुं खोइ खुतशे, संसार कादव कीच. २२
रुझाय घाव तरवारनो, बंदुक बरछी कोय;
निर्दय नरना वचननो रुझयो घाव नव जोय. २३
धिक्कार पापी विश्वमां, हरे प्राणीना प्राण;
अहित थाय निज आत्मनुं, एथी रह्यो अजाण. २४
असत्य वचन संसारमां, सारे शस्त्रनु काम;
विविध प्रकारे विस्तरी, हिंस्या ठामे ठाम. २५
वितरागे आ विश्वमां; सींची सत्य रूपी नीर;
अहिंस्या असर करी, दयानिधि महा धीर. २६
मन वचन काया तणा, अशुभ वरते जोग;
वरतन विरुद्ध बतावबुं, एज असत्य संजोग. २७
शुभ जोगथी राखीए, कहेणी रहेणी एक;
सनातन मारग सत्यनो, सजीए सह विवेक. २८
भुषण विद्या विनयनुं, यम नियमनु स्थान;
सम्यक् दर्शन सत्य ए, सत्यज सम्यक् ज्ञान. २९

દુષ્ટ દૈત્ય સિંહ સાપ કે, દેવી દેવતા હોય;
સત્ય પ્રતિજ્ઞાવંતને, લોપી ન શકે કોય. ૩૦
ચંદ્રપ્રભા સમ ઉજળો, જશ વાધે જગપુર;
દેવાદિક સ્તુતિ કરે, સત્યવાદિ હજુર. ૩૧
અકુલીન રોગી દીનને, ઇંદ્રિયો હોય અપૂર્ણ;
છતાં સત્ય ભૂષણ ધરે, શોભે છે સંપૂર્ણ. ૩૨
તપસ્વી કે જોગી જતી, નગ્ન વસ્ત્રધર હોય;
અસત્ય ગયું ન ઉરથી, ચંડાળ સમ છે સોય. ૩૩
ધન કુટુંબ જીવન વધે, અસત્ય ઉચરવા કાજ;
ધન્ય પુરૂષ સત્યવાદી તે, ઇચ્છે ન એહ અકાજ. ૩૪
સકળ પાપ એક છાબડે, અસત્ય બીજી સેર;
છે સરખાં બે વજનમાં, અસત્ય કરાર કેર. ૩૫
મને છળ ભેદે છેતરે, ન ધરૂં તેનો રોષ;
હાય હણે નિજ આત્મને, એજ અતિ અપશોષ. ૩૬
અસત્ય આચાર વિચારમાં, ઉછરે આજે લોક;
પ્રસંગ પડયો કેમ છોડવો, એજ અધિક છે શોક. ૩૭
સ્વરૂપ સમજ્યો સત્યનું, બોલી ન લખી શકાય;
મુંગો શુભ સ્વપ્ના થકી, મનમાં મગન જણાય. ૩૮

નિંદ્ય છતાં ખર શ્વાનને, પાળે બહુ જન ઘેર;
અસત્ય વચન વદનારને, દેખી ઉપજે ઝેર. ૩૯
સત્ય ન સંતાડયું રહે, ચોકાર્યે ન પમાય;
સુરજ ઉગ્યો છાબડે, ઢાંક્યો કેમ ઢંકાય. ૪૦
સુકૃત સઘળાં સેવીને, મેળવ્યો જશ જગમાંય;
એકજ અસત્ય ઉચ્ચારથી, સુજશ સકળ હણાય. ૪૧
પરિચય જુઠા પુરૂષનો, કરતાં છે મહા પાપ;
સ્વપ્ને સંગ ન સંતને, રહેવા આપનું આપ. ૪૨
કર્યો નિષેધ અસત્યનો, શ્રી દેવાધિ દેવ;
અનુસર્યા કંઇ મહામતિ, કરે સત્યની સેવ. ૪૩
કરે સત્યની સેવના, સર્વ વ્રત સચવાય;
આશ્રય એક બીજા તણો, ગર્ભિત રહ્યો સદાય. ૪૪
નાસ્તિક ઉલટું આચરી, મેલી સત્યને દુર;
અસત્યનો આદર કરી, ભરે પેટ ભરપુર. ૪૫
પુત્ર સ્વજન સ્ત્રી મીત્ર કે, નીજની સરે અગત્ય;
તોપણ જીવ જતાં નહિ, વદવું વચન અસત્ય. ૪૬
સત્ય વચન સંસારમાં, કરે સકળ કલ્યાણ;
પળાય પુરણ મુનિપણે, પમાય પદ નિર્વાણ. ૪૭

સત્ય વૃત સંપુરણપણે, અણગારી આચાર;
પુષ્પચંદ શ્રાવકપણે, છે સુક્ષમ આગાર. ૪૮
કન્યા ગો ભૂમિ સાહિદી, થાપણ લેણુ ને દેણુ;
પુષ્પચંદ શ્રાવક કદી, વદે ન જુઠું વેણ. ૪૯

ત્રીજું અસ્તેય વૃત.

વિતરાગીપણા વિના, સહુ જગતના ચોર;
પર દ્રવ્ય પ્રીતેથી હરે, જેવું કર્મનું જોર. ૧
મુનિ ગુણ ભુષણ રૂપ જે, વૃત અસ્તેય સહાય;
મોક્ષ મારગે સ્થિર થવા, આદર મન વચ કાય. ૨
ઇચ્છા અદત્ત વસ્તુ તણી, કરવી ન મન વચ કાય;
ભવ દધી તરવા નાવ તે, વૃત અદત્ત ગણાય. ૩
બાહ્ય પ્રાણ છે જીવનાં, ધનાદિ પરિગ્રહ કોય;
હરણ કર્યે હણાય છે, પ્રાણ જીવનાં જોય. ૪
ચોરી હિંસ્યા મય કહી, અસત્ય ચોરી સાથ;
પાપ અઢાર પોષાય છે, અદત્ત ધરતાં હાથ. ૫

વિદ્યા વિપરીત ચોરને, કીરતી બદલ કલંક;
સ્વ પર જન નિંદા કરે, હોય રાય કે રંક. ૬
મરજી વિરૂદ્ધ કઢાવીને, પર વસ્તુ ધરવી હાથ;
એને પણ ચોરી કહી, આપે હાથો હાથ. ૭
કૂડ કપટને કેળવી, કરવો ઢ૦ગ જમાવ;
ખાતર ખોદી પણ ઘણા, એથે ચોરી દાવ. ૮
લૂંટે છે ધન માલને, સ્થળવટ જળવટ ઠેઠ;
ધનની સાથે તન હરે, બની ફાંસીઆ શેઠ. ૯
કસબ ચોર કસબી બધા, જેવા ધંધો હોય;
હાકેમ થઇ ધનને હરે, લાંચ લહે છે કોય. ૧૦
લૂંટે બેશી બજારમાં, બોલી મીઠા બોલ;
સગા સહિતને છેતરે, તોડી કરેલા કોલ. ૧૧
વાસ્તવિક વ્યવહારથી, વરતાએ વિપરીત;
અધિક લહી ઓછું દીએ, એ પણ ચોર ખચિત. ૧૨
પિતા માત કુટુંબીઓ, હેતુ મિત્રાદી કોય;
તસ્કરના સબંધમાં, આવ્યે રાજી ન હોય. ૧૩
ઘર વન કે સમાજમાં, ચોર સદા ભયભીત;
પકડાયાની બીકથી, રાખે ચંચળ ચીત. ૧૪

પકડાતાં પીડા ઘણી, પડશે પ્રૌઢ પ્રહાર;
અધિક જાવું જીવથી, નિશદિન એજ વિચાર. ૧
પ્રથમ શિક્ષણ ચોરનું, ચોરે ઘરનું વિત્ત;
માત પિતા મન મારીને, રહે સદા ભયભીત. ૧
ઘર મારી પોતા તણું, પછી પડે છે બહાર;
વ્યસન સાતને સેવતા, મળી સાથી બેચાર. ૧૭
ચિંતાતુર ચિત્તમાં સદા, સુખે ન નિદ્રા આહાર;
વાત ચિતમાં વિકળતા, નહિ ચોખો વ્યવહાર. ૧૮
સહાય આપવી ચોરને, કે સંઘરવો માલ;
તોપણ ચોકખી ચોરીની, આવે માથે આળ. ૧૯
કર્યાં કર્મ કદી આ ભવે, સંચીત માંહી સમાય;
પ્રારબ્ધમાં તે પાલટી, ઉદય અહીંજ જણાય. ૨૦
ધાડું પાડી મારીને, લુંટે ધન ઘરબાર;
પહોંચે વાર તો જીવનો, જોખમ થતાં શી વાર. ૨૧
કુટુંબ કબીલો ચોરનો, તે પણ ચિંતાતુર;
ક્યારે જોઇશું જીવતો, એમ રહે આતુર. ૨૨
ભય ભ્રમિત ચિત્ત ચોરનું, ખેલે ચોરી દાવ;
પછી ભય પકડાયા તણો, નહિ સુખનો લાવ. ૨૩

તસ્કર દેખી તરતમાં, તન મન શિથિલ થાય;
વ્યાકુળતા વ્યાપે અતિ, થર થર કંપે કાય. ૨૪
વિણ ધણીઆતું કોય;
દાટેલું કે પડયું ખડયું, ત્યાગી ન રાગી હોય. ૨૫
દેખી મન વચ કાયથી, મોટા છોટા થાય;
ચોર પુરૂષના પ્રસંગથી, નિંદા યુક્ત ગણાય. ૨૬
મહા મુનિ પણ પલકમાં, પર ભવ નર્ક નિવાસ;
આ લોકે દુઃખ અતિ ઘણું, કર કહેવત અભ્યાસ. ૨૭
ચડે ન શીંકે ચોરનું, પર ધન બેય પ્રકાર;
અચેતન ચેતન ભેદથી, મુનિ ન કરે સ્વીકાર. ૨૮
મન વચન કાયા થકી, અન્ય સંયમનો સાજ;
અન્ન વસ્ત્ર ને ઓષધી, ખપતું લે મુનિરાજ. ૨૯
ઉલટથી આપે કોય તો, જ્યારે જરૂર જણાય;
શીવાય તૃણ કે રજ તણી, લેવું ખપે સદાય. ૩૦
આજ્ઞા માગી અન્યની, નહિ આગાર લગાર;
એ નિયમ અણગારનો, ચુકે ચિત્ત લગાર. ૩૧
અણગારપણું અળગું જશે, છે સુક્ષ્મ આગાર;
શ્રાવકના અણુંવૃત્ત મહીં, લાગે છે અતીચાર. ૩૨
લેતાં છુટ વિશેષ તો,

જડયો ન સંઘરે માલ;
ખાતર વાટ પાડે નહિ, તજે ચોરી કુચાલ. ૩૩
વ્રત ત્રીજાથી શ્રાવકો, વરતે ન રાજ વિરૂદ્ધ;
કુડાં ન રાખે કાટલાં, જણાય શ્રાવક શુદ્ધ. ૩૪
પુષ્પચંદ એ વરતને,

ચોથું બ્રહ્મચર્ય વૃત.

વૃત વડાં એક એકથી, અન્યોઅન્ય આધાર;
એક સર્વાંગે સેવતાં, પળશે બાકી ચાર. ૧
પંચ મહાવૃતમાં વડું, શિયલ વૃત શીરદાર;
બ્રહ્મચર્ય શુદ્ધ સેવતાં, બાકી સહેલાં ચાર. ૨
બ્રહ્મચર્યને ભાંગતાં, ભાંગે સાથે ચાર;
વૃત, જપ, તપ સહુ શુભ ક્રીયા, બ્રહ્મચર્ય આધાર. ૩
જામે જશ આ જગતમાં, અંત અચળ વિશ્રામ;
સુર નર વર સેવા કરે, જેણે જીત્યો કામ. ૪
અનંગ પનંગ નવી આભડે, ચેતો ચિત્ત જરૂર;
બ્રહ્મચારીના ભાગ્યમાં, સુખ સદા ભરપૂર. ૫
દાનવ માનવ અસુર કે, વિષધર પ્રાણી કોય;
બ્રહ્મચારીને ભય નહિ, કરવા સમરથ હોય. ૬

તેજ પુંજ તન પેખીએ, બ્રહ્મચારી ભગવાન;
દરસનથી પરસન થતાં, થાય કોટી કલ્યાણ. ૭
ધીર વીર ધારણ કરે, નહિ કાયરનું કામ;
મહાવૃત છે મોટકું, બ્રહ્મચર્ય સુખ ધામ. ૮
એ અવલંબનથી થશે, પરિબ્રહ્મ પીછાન;
યોગી ગણ એના વડે, ધ્યાવે અંતર ધ્યાન. ૯
બ્રહ્મચર્ય વૃત નિરમળું, પાળે વીણ અતિચાર;
મહા પુજ્ય તે યોગી ગણ, ત્રીલોકના સીરદાર. ૧૦
બ્રહ્મચર્ય કલ્પ વૃક્ષને, સીંચો સમતા નીર;
બહુ જતને કરી જાળવો, ધરી વાડ નવ ધીર. ૧૧
કીંપાક ફળની ઉપમા, મૈથુન સંજ્ઞા માન;
કિંચિત સુખ દેખાડીને, હરે અંત બે જાન. ૧૨
ઇંદ્રિય વશ દીન વિર્ય હિણ, શકે ન પાળી શીળ;
સમર્થ શક્તિવાન જે, તે પાળે શુદ્ધ દીલ. ૧૩

(કામના પ્રકોપથી થતા દોષો.)

કામ પ્રકોપ પ્રગટ થતાં, ઉપજે જવાળા અંગ;
મુશળધાર પડે મેઘ પણ, સમે ન અંસ અનંગ. ૧૪

પીડાય પ્રાણી જેહ;
પ્રજ્વલીત કામાગ્નિ થકી, સમે ન અગ્નિ તેહ. ૧૫
હુબાડો સાગર જળે, મુરછાયા જગ જીવ;
અનંગ પનગ વિષ વ્યાપતાં, શીઘ્ર શરણ ગૃહી શીવ. ૧૬
જાણી પરમ ચોગી થયા, જીતે જગમાં કામ;
અનંગ છતાં અંગવાનને, જીતે રાખી હામ. ૧૭
છતાં અડગ ચોગીશ્વરો, દહન થાય છે દેહ;
કામાગ્નિ પ્રજ્વલીત થતાં, નદી દરીઆ કે મેહ. ૧૮
સમાવવા સમરથ નથી; પહોંચે બુદ્ધિ પાસ;
પ્રથમ પ્રગટ થઇ હૃદયમાં, કરે અંત વિનાશ. ૧૯
અંગો અંગ દહન કરી, ત્રીદોષ પણ વરતાય;
કામજવર કોપી કામીને, નરકે દોરી જાય. ૨૦
દેહથી જીવ જુદો કરી, વિણસે સઘળી કાય;
ઉપદંશ પ્રમેહાદીકથી, અહીંજ નર્ક જણાય. ૨૧
કામી જનને ક્રમ થકી, કામની ચેષ્ટા દોષ;
દોષ કામ પ્રકોપના, દોષ તણો અતી જોશ. ૨૨
મૈથુન કૃત સંસર્ગ જન્ય, વિના વાદળે વજ્ર;
સૂર્ય જેઠ મધ્યાનનો, દહે કામીનુ તન્ન. ૨૩
કામાગ્નિ એથી અધીક,

જ્યુ છે અમીય કીરણ થકી, શીતળ કરવા ચંદ;
કામ કોપ ઉલટો વધી, કરે કામી આક્રંદ. ૨૪
કામ સત્તા સહુ જગતમાં, વ્યાપી કરે વિનાશ;
દેવ મનુષ્ય તિર્યંચને, બાંધ્યા વિષયા પાશ. ૨૫
કામ વિષધરના વિષથી, જાણી મુર્છિત જીવ;
શીયલ સરણ ગ્રહી યોગીઓ, મેળવે છે સુખ શીવ. ૨૬
આપે ત્રાસ ત્રિ લોકમાં, નિર્ભય થઇને કામ;
મહા યોદ્ધને મારવા, મુનિ ગણ ભીડે હામ. ૨૭
કામ હળાહળ ઝેરથી, નિશ્ચય છે મહા ઝેર;
કોય ઉપાય ન અવનીમાં, વરતાવે છે કેર. ૨૮
કામાગ્નિ નીવારવા, કામની રૂપી કીચ;
બુડે જઇ બે બાકળા, નર્કને રસ્તે નીચ. ૨૯
થયા કામ વશ જીવ જે, સ્વપ્ને ન પામે સુખ;
સત્ય કામ સઘળાં તજી, થાય ધર્મ વિમુખ. ૩૦
સાત વેગ વિષ સાપના, ઉપાયથી છે સાધ્ય;
કામાગ્નિ વિષ વેગ તે, દેખો દશે અસાધ્ય. ૩૧

(કામના દશ પ્રકોપ) છપય છંદ.

ઉદ્દીપન થાતાં કામ, પ્રથમ પ્રગટે છે ચીંતા;[૧]
ઇચ્છા કરી અકળાય, મળે ક્યારે એ વનિતા.
ભરે[૨] દીર્ઘ નિશ્વાસ,[૩] તાવ પણ ચડતો આવે;[૪]
દેહ થાય છે દગ્ધ,[૫] અરૂચી[૬] અન્ન ન ભાવે.
અતિ ઉન્મત ઉતપાત,[૭] સંદેહ પ્રાણનો[૮] થાય છે;
સહા મુર્છાથી[૯] મુર્છીત થઇ, મરી[૧૦] માઠી ગતિ જાયછે. ૩૨

દોહરા.

સંકલ્પે કામ જ્વર કોપના, ત્રણ ભેદે ઉદવેગ;
તીવ્ર મધ્ય અને મંદપણે, વધતા ઘટતા વેગ. ૩૩
સર્વ પાપનું મૂળ તો, જણાય જગમાં કામ;
અધર્મ સૌ એના વડે, એજ દુઃખનું ધામ. ૩૪
ભજી અહોનિશ આતમા, રહેવું તેમાં લીન;
ધર્મ બ્રહ્મચર્ય એજ છે, પાળે મુનિ પ્રવીણ. ૩૫

મળ્યો મનુષ્ય ભવ દોહીલો, કર્યું વિષય વિષપાન;
ચેત પુષ્પ તજી કામને, આદર આતમ જ્ઞાન. ૩૬

(નારી નીંદા અને પ્રશંસા.)

મુખ વાણી અમૃત સમી, હૃદય હળાહળ ઝેર;
શો વિશ્વાસ સ્ત્રી જાતિનો, છુરી કાન્તાની પેર. ૩૭
નારી નીચ સ્વભાવની, દુરગુણનો ભંડાર;
સાધુ ત્યાગે સર્વથા, શ્રાવકને આગાર. ૩૮
સંતોષી સ્વદારા ભણી, અવર ભગની માય;
ચોથું વૃત શુદ્ધ શ્રાવકો, પાળે અખંડીત કાય. ૩૯
સહુ નારી સરખી નથી, સતી શીરોમણી કોય;
સર્વ વર્તિની દ્રષ્ટિએ, નિષેધ સમુચે હોય. ૪૦
થયા થાય છે ને થશે, પુરૂષ સલાખી જોય;
વનિતા ઉદર ઉપજે, સતી શીરોમણી હોય. ૪૧
નીચ કામને નીંદતાં, કામની પણ નીંદાય;
દુરગુણ જે સૌ કામના, કામની તણા ગણાય. ૪૨
જીતે કામ નર નાર તો, સરખાં થાય સ્વરૂપ;
દુરગુણ સૌ દુરે રહે, કામજ દુરગુણ રૂપ. ૪૩

કામની પ્રેરી કામની, કરે કર્મ અઘોર;
અબળા તે સબળા થઇ, જણવે અધિકું જોર. ૪૪
દેવો દોષ ધરે નહિ, સઘળો નારી શિર;
સહુ સંસાર એના વડે, પડવા તરવા તીર. ૪૫
અબળા હોય તે કામને, રહે સદા આધીન;
શિક્ષણથી સબળા કરો, કરે કામ સ્વાધીન. ૪૬
ચતુર્વિધિ તીર્થમાં, શ્રાવિકા પદ એક;
જમાનાને અનુસરી, કેળવો ધારી વિવેક. ૪૭
સંઘ સુધારણા કારણે, આપો સ્રીને સાજ;
સુધરી પ્રજા સુધારશે, સહીલા મળી સમાજ. ૪૮
સંતોષી સ્વ ભરથારથી, અવર બંધવ બાપ;
સુખ સંકટે શ્રાવિકા, રાખે આપતુ આપ. ૪૯

પાંચમું પરિગ્રહ અથવા ઇચ્છારોધ વ્રત.

સર્વ પરિગ્રહ સર્વથા, બાહ્ય અભ્યંતર કોય;
ઇચ્છારોધ અતિચાર વિણ, મહા મુનિથી હોય. ૧
વાડ અહીંસા વૃક્ષની, આ બાજુ પણ એક;
ખંડીત થાતાં બાકીની, નિરૂપયોગી છેક. ૨

એક એકની સહાયમાં, રહે બાકી વૃત ચાર;
ચારીત્ર યોગી ગણુ તણું, સર્વ સિદ્ધિ દાતાર. ૩
પાંચે વૃત શુદ્ધ પાળતાં, અઢાર પાપ તજાય;
પાપ સ્થાન પરાં થવાં, એ વિતરાગ દશાય. ૪
અંતર આત્માને રહે, સદા સ્વરૂપનું ભાન;
પર પુદ્‌ગળ શું રાચશે, બહિરાત્મ બેભાન. ૫
સ્વ પર પરખાયા પછી, પર વસ્તુ પર પ્રીત;
અંતર આત્માને નહિ, રહેવી ઘટે ખચીત. ૬
પર પુદ્‌ગળ પરિગ્રહ મળી, પલમાં પરનો થાય;
બાળે અંતર ઉલટું જ્ઞાની નવ લોભાય. ૭
સર્વ વરતીને સર્વથા, પરિગ્રહનાં પચખાણ;
દેશ વરતી હદ બાંધીને, રોધે ઇચ્છા જાણ. ૮
શ્રાવકને તો સર્વદા, પરિગ્રહથી વહેવાર;
સદ્‌વર્તનથી મેળવે, લોપે ન હદ લગાર. ૯
પરિગ્રહમાં પ્રથમ પદે, પૈસા પામે માન;
સહુ વહેવાર સંસારનો, પૈસા વડે સમાન. ૧૦
સાધુ શોભે ધન વિના. પણ શ્રાવક ધનવાન;
સાત ક્ષેત્રો ઉદ્ધારવા, ખરચે ગજા સમાન. ૧૧

ગાડી લાડી વાડી કે, ખાન પાન ગીતગાન;
અંતર ઉદાસીનપણે, દીએ દીનને દાન. ૧૨
અર્થ અનર્થનું મૂળ છે, પુન્ય પણ એથી પમાય;
જો નિતિથી મેળવી, વ્યય શુભ મારગ થાય. ૧૩
મમતાં મુકતાં તો મટે, અધોગતિની બીક;
સબળ ભાતું થઈ સ્વર્ગનું, દોરે મોક્ષ નજીક. ૧૪
અધિક મળ્યું શુભ યોગથી, દઈ દીનને દાન;
દયા માર્ગ દીપાવશો, આપી અભય દાન. ૧૫
આજ અસુભના ઉદયથી, પામ્યો ન પુરણ ભોગ;
સંતોષી શુભ ભાવથી, પામે શુભ સંજોગ. ૧૬
અલ્પ પરિગ્રહથી લહે, સદા ચિત્ત સંતોષ;
પુણીઆ શ્રાવકની પરે, કરે કરણી નિરદોષ. ૧૭
સૌ આગારી તો નહિ, બનવાના અણગાર;
પણ સમણો પાસકપણે, શાશનના શણગાર. ૧૮
બાગ બગીચા બંગલા, ફર્નિચર ફેશનદાર;
ધન યોવનનો લય કરે, વ્યભિચારી શીરદાર. ૧૯
શુભ સંચયના યોગથી, ચઢયો શિખર પર આજ;
પટકી પડીશ અધોગતિ, સુણશે કોણ અવાજ. ૨૦

અહીરાત્મ એ બાળની, કરો ન ઈર્ષા કોય;
દયા આણવા જોગ એ, પામર પશુ સમ જોય. ૨૧
અલખત આખી પૃથ્વિની, આવી મળે જો ઘેર;
વધે લોભ ચિત્ત લોભીને, સંતોષથી છે વેર. ૨૨
દોલત દો લત મારીને, પક્ષમાં પરની થાય;
પાપ કરાવી પુરતાં, નરકે દોરી જાય. ૨૩
સંચે અર્થ અનર્થથી, લોપી વૃત મર્યાદ;
વિષય પોષવા વ્યય કરે, સુણે ન દીનનો સાદ. ૨૪
તન ધન યોવન પદવીના, મદમાં રહી મગરૂર;
સકળ વિશ્વની સંપદા, ઇચ્છે ઉર કરી ક્રૂર. ૨૫
આચાર વિચાર અનુસારના, પડે શુભાશુભ બંધ;
ઇચ્છારોધ અંતર થતાં, છુટે કર્મ સંબંધ. ૨૬
સ્વ પર ભેદ પીછાનવા, કરો તત્વ અભ્યાસ;
તોજ મતિ નિર્મળ થઇ, છુટે પરિગ્રહ પ્યાસ. ૨૭
પુષ્પચંદ વૃત પાંચમું, સાધુને સન સહેલ;
શ્રાવક સંતોષી રહી, માને નહિ મુશ્કેલ. ૨૮

ઉપસંહાર.

ત્રિભુવન પૂજિત રત્ન ત્રય, એજ મોક્ષનો માર્ગ;
આરાધી અતિચાર વિણુ, થયા થાય વિતરાગ. ૨૯
રહેસ્ય સર્વ સિદ્ધાંતનું, મુક્તિ કારણુ એહ;
સમ્યક્ રત્ન ત્રય પરમ પદ, નિજ આત્મમય તેહ. ૩૦
ગયા જાય છે ને જશે, મોક્ષ મહેલ વિતરાગ;
રત્ન ત્રય આરાધતાં, જીત્યો દ્વેષ ને રાગ. ૩૧

દર્શન, જ્ઞાન, ચારીત્ર, તપ એ મોક્ષના હેતુઓ હોવાથી ત્રીરત્ન પછી સંક્ષેપમાં તપસ્યાનું સૂચવન કરેલ છે.

કવિત–મનહર.

સકામ નિર્જરા તે તો, જાણીએ તપસ્યા અંગ;
સલેખના સાથે, મૃત્યુ મોચ્છવ વિચારીએ.
અશુભ ઉદએ મન, વચ કાય સમભાવે;
સકામ નિર્જરા થાતાં, કરમ નીવારીએ.
શુદ્ધ ચારિત્ર સરવ, સમાએ તપસ્યા માંહી;

બાહ્ય અભ્યંતર બાર, તપ તો આચરીએ.
ઇંદ્રિય નિગ્રહ સાથે, કષાયો પાડો પાતળા;
ઇત્યાદિ તપસ્યા વડે, આતમ ઉદ્ધારીએ.

અન પાણી મેવો અને, ચોથો જે મુખવાસ;
સહુ શ્રમણ તો સર્વથા, તજે રાત્રીએ ખાસ. ૨
તજે શ્રાવક પણ સરવદા, રાત્રી ભોજન ચાર;
પણ પ્રતિકૂળ સમયનો, રાખે છે આગાર. ૩
રાત્રી ભોજન ત્યાગતાં, સકામ નિર્જરા થાય;
લાભ ભાવ ને દ્રવ્યથી, રહે નિરોગી કાય. ૪

ઉપસંહાર.

જ્ઞાન દર્શન ચારીત્ર ને તપસ્યા બાર પ્રકાર;
શુધ્ધ ભાવથી સેવતાં, મુક્તિ ફળ દાતાર. ૧

પ્રતિક્રમણુ આષય.

.તિક્રમણુ કરો પળપળે, દેખીને નિજ દોષ;
મકીત શુદ્ધ રહે સદા, ચિત્ત વરતે સંતોષ. ૧
'વત્સર ચોમાસીએ, પખ્ખી ને દિન નીશ;
તિચાર આલોવતાં, ખામો નામી શીશ. ૨
ૈમાયિક ચોવી સંતને, કરી વંદન બે વાર;
તેક્રમણુ ને કાઉસગ, પ્રત્યાખ્યાન આચાર. ૩
ા કરી સમકિતની, ઈચ્છિયો મત મિથ્યાય;
ાય કરણી ફૂગ તણો, પાખંડ ગુણ ગવાય. ૪
પરિચય પાખંડીનો, જીનમતનું નહિ જાણુ;
ત્રી વિધિએ વોસરૂં, સાક્ષી શ્રી ભગવાન. ૫
આવશ્યક ખાંતે કરી, કરીએ અર્થ વિચાર;
પચંદ સહુ પાપને, હુણવાનું હથીઆર. ૬
્યાત્વ અવૃત પ્રમાદને, કષાય અશુભ જોગ;
ક્રમણ કર્યું પ્રીતથી, મળવા શુભ સંજોગ. ૭
ક્રમણ ગત કાળનું, વર્તમાન સમ ભાવ;
ંયનાં પચ્ચખાણુથી, લહો નીશ દિન લાવ. ૮

પડીક્રમણાથી પાપને, પરાં કરે નીશ દિન;
સમભાવે રહી સર્વદા, સંચો નહિ નવીન.
અજાણતાં આવી મળે, પાપ તણા પરસંગ;
તરત પગ પાછા ભરે, મળે ન આતમ સંગ. ૧૦
જાણી પ્રીછી આદરે, પાપ તણા પરબંધ;
કુદરત માફ કરે નહિ, પડે આકરો બંધ. ૧૧
પાપથી પગ પાછા ભરી, પરચાવે વ્યવહાર;
છતાં અહોનીશ આલવે, એ શ્રાવક આચાર. ૧
પડીક્રમીને પરવરે, કરવા કર્મ કઠોર;
સાહુકારના વેશમાં, જાણો જુઠો ચોર. ૧૩
નામ ધરી શ્રાવક તણું, કરતો સાવજ કામ;
પડીક્રમવાથી શું વળે, નિતિ હોય હરામ. ૧૪
ચારીત્રનો શુભ સાર તે, વરતનમાં વરતાય;
જો વરતન જુદું પડે, તો પદભ્રષ્ટ જણાય. ૧૫
કરી સામાયિક સંચરે, મનમાં ન રહી મહેર;
સાકર સ્વાદ લીધા પછી, સુખ આરોગ્યું ઝેર. ૧૬
સંસારી વ્યવહારમાં, કરતવ્ય કરવાં શુદ્ધ;
બાર વૃતના બંધથી, વરતન નહિ વિરૂદ્ધ. ૧૭

તગાં સંબંધી સાથમાં, વિણેવાદે વરતાય;
તુરત ચેતી ચિત્તમાં, દેવી લેવી ક્ષમાય. ૧૮
હોર દિવસ કે માસમાં, અથવા ચાર છ માસ;
ક્ષમાવતાં શ્રાવક તણાં, વ્રત પકડે ઉજાશ. ૧૯
સંવત્સરની આખરે, અવશ્ય થવું નિર્દોષ;
મુકી માન ક્ષમાવીને, અંતર તજવો રોષ. ૨૦
એ અનુસાર ન અનુસરે, શ્રાવકપણું તજાય;
એના આંકડે શુન્યની, કિંમત કેમ ગણાય. ૨૧
લોક લજા વહેવારથી, ઘણા ખમાવે એમ;
અંતર વધતો આસળો, આપીઆ જેમના તેમ. ૨૨
કર્મ બંધના હેતુઓ, વિરોધ વેર ને ઝેર;
રની દાઝે શીદ તજો, નીજ આત્મની મહેર. ૨૩
પ્રતિક્રમણના હેતુઓ, સમજણથી સચવાય;
પચંદ શ્રાવકપણું, સમકિત સહિત જણાય. ૨૪

ચારીત્ર, તપ, ધ્યાન ઇત્યાદી અંતે સમાધિ
મરણે મરાય તોજ તેની સફળતા છે, તેથી હવે
સમાધિ સતક કહે છે.

અથ સમાધિ સતક.

લેસ્યા અંત સમય તણી, પરભવ માંહી પમાય;
માટે શુભ લેશી થવા, આદર એહ ઉપાય.
(સમાધિ સતકના પેટામાં પ્રથમ સલેખના કહે છે.)
મણીમય કલસ સલેખના, કનક ભુવન વૃત ખાર;
સલેખન વિણુ શા કામના, તપ, જપ, વૃત, આચાર.
સલેખના બે ભેદથી, કાયા અને કષાય;
કેડા મોર ન કામનાં, સાથે સાધન થાય.
કાય કષાય સલેખના, સાથે રાખ સદાય;
બે ચક્રના યંત્રમાં, એકે કામ ન થાય.
એકજ કાય કલેશથી, પડે ઉદારિક દેહ;
કાર્મણુ દેહ કરમ ગ્રહી, નવીન આપે તેહ.
કારમણ દેહ નીવારવા, કર કષાયનો નાશ;
તોજ કરમ નિરમૂળ થઇ, છુટે ગર્ભવાસ.
કાય કલેસ કરી મરે, તિર્યંચ તરે ન કોય;
કષાય એકલી જીતવી, કાય કલેષ વિણુ નોય.

સશક્ત હોય શરીર તો, કરવો ન કાય કલેશ;
સાધો ધર્મ આ દેહથી, હોય આયુ અવશેષ. ૮
સાધન ઉત્તમ આ મળ્યું, મનુષ્ય દેહમાં આજ;
પોષણ દેવું પીંડને, કરવા આતમ કાજ. ૯
શક્તિ હોય શરીરની, સાધન મૂકી દૂર;
દેહ પાડતો માનવી, આતમ ઘાતી જરૂર. ૧૦
મરી ખોવું મનુષ્યપણું, ભવ તરવાનું નાવ;
દેવ તિર્યંચ કે નારકી, લહે ન આવો લાવ. ૧૧
અસાધ્ય વ્યાધિ ઉપસર્ગ કે, ઉગરવાની ન આશ;
સંભવ એવો ભાળતાં, આદરવો સંન્યાસ. ૧૨
ધર્મ કાર્ય આ કાયથી, નીપજવાની ન આશ;
ત્યારે સજી સલેખના, છોડ કર્મનો પાસ. ૧૩
શક્તિ જાય શરીરની, થાય ન સાધન કાય;
મમતા મૂકી દેહની, સજ સલેખના ભાય. ૧૪
અણ સમજ વણ સાડવી, દેહ એ આતમ ઘાત;
સમજી મરણ શરણ થવું, સલેખના સાક્ષાત. ૧૫
સ્વજન પરિજન સંતોષવાં, લેણ દેણ કરી દૂર;
રાગ દ્વેષ પરિગ્રહ તજી, માગવી માફ જરૂર. ૧૬

પ્રાયશ્ચિત લેવું પૂર્વનું, વર્તમાન સમભાવ;
આશ્રવ રોકી આવતા, લે સલેખના લાવ. ૧
પંચ વિષયાદિ ભોગ તે, તજી સજી સમભાવ;
કાય કષાય કદ્રેષને, અંતે અંતર લાવ. ૧
પંચ પ્રભુને પરણમી, પચખી પાપ સ્થાન;
અનશન આદિ આદરી, ધરવું અંતર ધ્યાન. ૧૯
સોહંગ શ્વાસોશ્વાસથી, અવર ક્રિયા કરી બંધ;
આરાધન અવિનાશમાં, છોડ દેહ સંબંધ. ૨
નહિ ઇચ્છા જીવ્યા તણી, નહિ ઇચ્છવો કાળ;
મિત્ર સમૃતિ મરણ ભય, તજ નિદાન અતિચાર. ૨
મોહ દેહાદીક દુર કરી, કરવા મન મજબુત;
મૃત્યુ મહોત્સવ સહસ્યનો, કર અનુભવ અદ્‌ભૂત. ૨૨

સંલેખનામાં દેહ મોહ ઉતર્યા વગર મન સ્થિ
થાય નહિ માટે દેહ મોહ ઉતારી દ્રઢ કરવા આ
આત્મસ્વરૂપ બતાવવા મૃત્યુમહોત્સવ કહે છે.

મનુષ્ય ભવમાં મહોત્સવ કયો? મૃત્યુ મહોત્સવ.

દોહરા.

ઉત્સવ જન્મને લગ્નનો, દિક્ષા ઉત્સવ થાય;
મૃત્યુ મહોત્સ શ્રેષ્ટ છે, જો નિજ આતમ ધ્યાય. ૨૩
રત્ન કરંડ માંહે ભર્યાં, રત્ન અમુલ્ય અનેક;
અંત સમયની આરસી, જો સુકતા આ એક. ૨૪
અમૂલ્ય વણ મૂલે મળે, મૃત્યુ મહોત્સવ નામ;
અંતરથી આરાધતાં, સ્થાપે મુકિત ઠામ. ૨૫

(મૃત્યુ સમાધિમાં વિઘન ન આવે માટે પ્રભુ સ્તુતિ.)

પ્રવર્ત્યો મૃત્યુ મારગે, આપો શ્રી ભગવાન;
ભાતું સમાધિ બોધનું, પહોંચુ મુકિત સ્થાન. ૨૬
અંતે અંતર શુદ્ધ રહે, ધ્યાવા સોહં ધ્યાન;
આધિ વ્યાધિ ઉપાધિથી, થાઉં નહિ બે ભાન. ૨૭
અંતરાય આવે નહિ, આરાધનમાં કોય;
ચિત્ત વિક્ષેપ ચડે નહિ, કૃપા પ્રભુની હોય. ૨૮
બાળ મરણ મેં બહુ કર્યાં વધારવા સંસાર;
પંડિત મરણ શરણ થવા, આપો પ્રભુ આધાર. ૨૯

(પ્રભુ સ્તુતિ કર્યા પછી હવે પોતાના આત્મા સમજાવે છે કેઃ—)

હાડ પિંજર જીરણ થતું; કૃમી જાળ શરીર;
ભાંગ્યે ભય શાને ધરે, નિશ્ચય તું અશરીર. ૩૦
દેહ મોહના પાશમાં, ભૂલ્યો ચેતન ભાન;
આત્મસ્વરૂપ ન ઓળખ્યું, આવ્યું દેહ ગુમાન. ૩
આ શરીર તે તું નથી, તું તો જ્ઞાન સ્વરૂપ;
દેહ વિનાશીક દ્રવ્ય છે, આત્મા અમર અરૂપ. ૩૨
નહિ નર તું નારી નહિ, નહિ નપુંસક નામ;
સચ્ચિદાનંદ શીવરૂપ તું; પોતે આતમરામ. ૩૩
ન તિર્યંચ ન નારકી, દાનવ માનવ કોય;
વિવિધ વેષ વિભાવથી, શાંન્તિ સ્વભાવે હોય. ૩
મૃત્યુ અવસર આવતાં, માન મહોત્સવ ચિત્ત;
જીરણ દેહ સાટે મળે, નવીન દેહ ખચીત. ૩૫
જીરણ પહેરણ પરહરી, સજવું નૌતમ અંગ;
ભય તેમાં શો ભાળવો, ધરવો મન ઉછરંગ. ૩૬
તજવી જૂની ઝુંપડી, વસવું નવિન મહેલ;
કર આદર આનંદથી, શું ? માને મુશ્કેલ. ૩૭

જ્ઞાની મન મુંઝાય શું, થા સન્મુખ તૈયાર;
દેહાંતર સ્થિતિ છે થવા, ઉદય કરમ અનુસાર. ૩૮
દુર્ધ્યાન ધ્યાતો મરે, દુર્ગતિમાં અવતાર;
ધ્યાવે શુદ્ધ સ્વરૂપ તો, મુક્ત થતાં શી વાર. ૩૯
અજ્ઞાની ઉન્મત્તમાં, મરણ સમય મુંઝાય;
જ્ઞાની ધ્યાન સ્વરૂપનું, ચિત્ત ચોખેથી ધ્યાય. ૪૦
આ ભવ આપ્યું આદર્યું, ફળ પર ભવમાં હોય;
મૃત્યુ વિણ કેમ તે મળે, ચિત્ત વિચારી જોય. ૪૧
સુકૃત સેવ્યાં હોય તે, મન રાખી મૂકીત;
મૃત્યુને મહોત્સવ ગણે, થાય નહિ ભયભીત. ૪૨
મુખ્યપણે મૃત્યુ પછી, કૃત્યા કૃત્ય ફળ હોય;
કર અવિકારી મરણ તો, સુગ સંપદા જોય. ૪૩
ખ કર્તવ્ય કર્યાં નથી, છો શીલ ગુણ સહિત;
તો ભીતિ શી મૃત્યુની, તજ તજ મતિ વિપરીત. ૪૪
ાધ આપે સુખ સ્વર્ગનું, સુકૃતને અનુસાર;
ાય તું મૃત્યુ મિત્રનો, તજ તજ કરી વિચાર. ૪૫
રા વ્યાપી જીરણ થતી, દેહે પામતો દુખ;
વારી મૃત્યુ મિત્ર તે, આપે ઉલટું સુખ. ૪૬

કર્મ શત્રુએ સાહીને, પૂર્યો પિંજર દેહ
ચેતન દુઃખ તેમાં સહે, શાથી પામે છેડુ
છોડાવે મૃત્યુ મહિપતી, સમરથ એ સરદાર;
ભય મૂકી ભજવો ભલો, ગણવો શુભ દાતાર.
ફરી ઉંચ નીચ પિંજરે, પુરે કર્મ કઠોર;
મૃત્યુ મિત્ર પાછળ પડી, મૂકાવે કરી જોર.
કહો હવે હું કેમ કરી, પામું નહિ પ્રતિબંધ;
મૃત્યુ સમાધિ રાયથી, બાંધે ગાઢ સંબંધ. પ
અવિકારી મર્ણ કરાવશે, આપી સાહ્ય અત્યંત;
અષ્ટ કર્મ અરી ભય થકી, કરશે નક્કી નચંત.
આત્માર્થીનું ધ્યાન તો, સ્વ સ્વરૂપ ભગવાન;
મૃત્યુ મિત્ર આવી મળે, દેવા મુક્તિ દાન. પ
નહિ આતુર જીવ્યા તણો, નહિ ઇચ્છતો કાળ;
શુભ ધ્યાન શુભ યોગથી, ધ્યાય સ્વરૂપ રસાળ. પ૩
આ વિદેહી શીદ રહે, દુગ્ગી દેહનોદાસ;
મૃત્યુ સમાધિ સાધી કર, મુક્ત પુરીમાં વાસ. પ
મૃત્યુ કલ્પદ્રુમ પામીને, કર્યું ન સાધન કાય;
બુડે જન્મ કુપે કીચમાં, કહો સાધન શું થાય. પપ

માનવ ભવમાં મૃત્યુ તે, કલ્પવૃક્ષ સમાન;
ભવ તરવાની તક મળે, મળે મોક્ષ નિધાન. ૫૬
મૃત્યુ કલ્પદ્રુમ મનુષ્યને, મન વંછીત દાતાર;
ભાવ ભાવથી ભાવના, ભવ દધિ ભય હરનાર. ૫૭
દર્શન જ્ઞાન ચારીત્ર તે, સમ્યક્ સીડી સાર;
સમાધિ મૃત્યુ મનુષ્યમાં, એકજ મોક્ષ દ્વાર. ૫૮
અશક્ત શરીર મૃત્યુ લઇ, આપે નૌત્તમ દેહ;
જ્ઞાની મન મુદીત થશે, થાતાં દુ:ખનો છેહ. ૫૯
દુખમય પર્યાય પાલટી, રચાય નવા નવીન;
જ્ઞાનીને ગમતું થશે, અજ્ઞાની ગમગીન. ૬૦
સરતું પડતું વિનસતું; ધરી શકાય ન ધીર;
શ્વાસોશ્વાસ જીરણ થતું; જો તું જીવ શરીર. ૬૧
શાન્તિ, કાન્તિ, બળ ઘટે, જો ઇંદ્રિયો અચેત;
સાંધા શિથિળ સૌ અંગના, ડગમગ ચાલન ચેત. ૬૨
સ્વારથ સર્યો સંબંધીનો, પછી ન પૂછે ભાવ;
તરછોડે તીરસ્કારથી, ક્યાં જઇ કરવી રાવ. ૬૩
રોગ અસાધ્ય આવી મળે, એક હોય ત્યાં એક;
અસહ્ય વેદના વેદતાં, મૃત્યુ છોડાવે છેક. ૬૪

માટે જ્ઞાની મૃત્યુને, માને મહોત્સવ આપ;
સંયમ ત્યાગ વિરાગથી, ધ્યાય સમાધિ જાપ. ૬૫
જઘન્ય દેવ અવતાર ને, ઉત્કૃષ્ટ સુખ શીવ;
કદી અનુક્રમથી પણ ચડે, મૃત્યુ મહોત્સવે જીવ. ૬૬
વ્યાપિ રહ્યો જે દેહમાં, જાણી રહ્યો સુખ દુઃખ;
સંચિતનાં ફળ સેવવા, થાય મૃત્યુ સનમુખ. ૬૭
અંતર આત્માને નહિ, કરવો ઘટે ક્લેશ;
બહિરાત્મ બુદ્ધિ દેહમાં, બીતો રહે હમેશ. ૬૮
આત્મ સ્વરૂપ અવિનાશી છે, દેહ દ્રવ્ય ભિન્ન ભિન્ન;
કર્મોદય અનુસારની, કાયા મળે નવીન. ૬૯
જે આશક્ત સંસારમાં, મરણ થકી ભયલીન;
આખર અવસર આવતાં, બને બાવરો ચિત્ત. ૭૦
હાય નાશ મારો થયો, ગયા ભોગ વિલાસ;
કુટુંબ કબીલો ધન ગયું, ગયાં ગામ ગરાસ. ૭૧
અજ્ઞાની એમ અંતમાં, ભૂલી સ્વરૂપનું ભાન;
અધોગતિને આદરે, ધરતો આરત ધ્યાન. ૭૨
વૈરાગી સંસારથી, નિજ સ્વરૂપના જાણ;
એવો અવસર આવતાં, રાખે ચિત્ત સમાન. ૭૩

ગણી જંજીર આ દેહને, રાખે છુટવા નેમ;
સમાધિ મરણ શરણુ ગ્રહી, છુટે કુશળ ક્ષેમ. ૭૪
ધન્ય જનમ આ જગતમાં, ફરી ન જનમે જેહ;
ધન્ય મરણ પણ તેહનું, ફરી ન પામે દેહ. ૭૫
ભોગવી સ્થિતિ પૂર્વની, કરી કમાણી હોય;
આયુષ્ય અવધિ આવતાં, રોકી ન શકે કોય. ૭૬
રોતાં પણ જાવું નક્કી, કરી સ્વરૂપની હાણ;
હસતાં જાતાં તો થશે, પરમ સ્વરૂપ કલ્યાણ. ૭૭
તૈયાર રહેવું સર્વથા, મરણ તરણને માટ;
અચાનક આણે આવીને, કાળ દોરશે વાટ. ૭૮
મૃત્યુ અવસર આવતાં, ઉદય કરમ અનુસાર;
વ્યાધિ વ્યાપે દેહમાં, જ્ઞાની ગણે હિતકાર. ૭૯
દુખ દરદ છે દેહમાં, દેહ તજયેથી સુખ;
ભાન કરાવી ભૂલનું, દોરે શીવ સનમુખ. ૮૦
દેહ મોહ ઉતારવા, થાવા ભાન સ્વરૂપ;
સૂચવવા શીવ માર્ગને, દે દરદાદિ દુખ. ૮૧
ભલે દેહ દુખ ભોગવે, ચેતન ચિત્ત વિચાર;
અનંત એમ આવ્યો તજી, તને ન આંચ લગાર. ૮૨

સહ્યાં દુખ નર્ક નિગોદનાં, તિર્યંચના પણ તેમ;
જુજ દુખ જુજ કાળે સમે, કર સહન ગણી એમ. ૮૩
દેહ શરણ નહિ જીવને, ભવ ભવ કરે નિરાશ;
મૃત્યુ સમાધિ શરણથી, મટે મરણ ભય ત્રાશ. ૮૪
જેમ અગ્નિ લોહપિંડમાં, વ્યાપિ ખમે ઘણ ઘાય;
તેમજ દેહ સંબંધમાં, સહ્યાં દુખ સદાય. ૮૫
વ્યાધિ વહાલો મિત્ર છે, કરે કર્મનો ભક્ષ;
સાહ્ય કરે શુભ ગતિ થવા, લે ઉત્તમ જો લક્ષ. ૮૬
કાળ મહા વિકરાળ છે, આપે તાપ અત્યંત;
ત્રાહ્ય ત્રાહ્ય પોકારતા, જગવાસી સહુ જંત. ૮૭
જ્ઞાની તાપ સહન કરી, થાય શુદ્ધ સુવર્ણ;
સંચિત સર્વે ભવ તણાં, કાપે કર્મ આવર્ણ. ૮૮
કાચો ઘડો ન કામનો, ભરવા નિર્મળ નીર;
આંચ ખમે જો અગનની, તરે નદીનું તીર. ૮૯
મૃત્યુનો આ તાપ તે, સમ ભાવે સેવાય;
કાપી દાખીઓં કરમનાં, ભવ સાગર ઉતરાય. ૯૦
બહુ કાળે બહુ કષ્ટથી, જે ફળ લે છે સાધ;
જુજ કાળ જુજ કષ્ટથી, આપે મૃત્યુ સમાધ. ૯૧

દેહ પરિગ્રહ કુટુંબનો, મેલી મોહ તમામ;
અભય થઇ સમ ભાવથી, ભજવા આતમરામ. ૯૨
શરીર તજ ચિત્ત શાંતથી, આરત રૂદ્ર તજાય;
નર્ક નિગોદ તિર્યંચની, ગતિ નીવારણ થાય. ૯૩
ધર્મ ધ્યાન ધ્યાતાં અને, શુદ્ધ સલેખંના સાથ;
મરણ પામતો માનવી, થાય દેવનો નાથ. ૯૪
વૃત તપ અધ્યયન સુગ્રનું, અંત સમાધિ ઉદ્દેશ;
ચુકયો અવસર એહ તો, અફળજ સહ્યો કલેષ. ૯૫
અનાદર અતી સહવાસથી, જણાય જગની રીત;
દેહ સંબંધે જીવ તેં, ગ્રહી મતિ વિપરીત. ૯૬
ઉપભોગ તો અવનવા, ચાહે ચિત્ત બચીત;
દેહ સંબંધે જીવ તું, તજ તજ મતિવિપરીત. ૯૭
તજ તજ દેહ આનંદથી, ભય તજી સમભાવ;
મનુષ્ય દેહે મૃત્યુનો, મળે સમાધિ લાવ. ૯૮
ગયો અવસર આવે નહિ, કરતાં કોટી ઉપાય;
ચેત ચેત ચેતન અરે, કાંઠે સાલ વિમાય. ૯૯
આથી અધિકું શું કહું, ચેતો ચેતન રાય;
મૃત્યુ સમાધિ શ્રેણીએ, સહજે સ્વર્ગ જવાય. ૧૦૦

ચઢતી પગથી પામતો, કરી કરમનો નાશ;
એજ સમાધિ શ્રેણીએ, અંતે શીવ સુખ વાસ.૧૦૧
ભય ભાંગી મૃત્યુ તણો, કરે સ્વરૂપ પ્રકાશ;
પુષ્પચંદ ઉપદેશ આ, લે આતમ તું ખાસ.૧૦૨

ઉપસંહાર.

સમાધિ સત્તક હાર આ, કંઠે ધારણ થાય;
શુદ્ધ સ્વરૂપને ઓળખી, સમાધિ મરણ મરાય.૧૦
કંઠાભ્રણ અમુલ્ય આ, સમાધિ સત્તક નામ;
શ્રવણ ધરતાં પણ મળે, અંત અતિ વિશ્રામ.૧૦૪
મૃત્યુ મહોત્સવ એજ છે, સર્વ ઉત્સવમાં શ્રેષ્ટ;
અંત સમય આરાધતાં, સ્થાપે મુક્તિ ઠેઠ.૧૦૫

કર્મની વિચીત્રતા.

જે જે જગમાં વિચીત્રતા, શુભાશુભ દેખાય;
કર્મ સત્તાના દાખલા, છે અનુભવ નિજ કાય. ૧
માટે ચિત્તમાં ચેતીને, શુભ કરમ કરૂં સંચ;
દુઃખદાયક જાણી તજું, અશુભ કર્મ પ્રપંચ. ૨

કવિત મનહર.

જ્ઞાનાવરણી કરમ, થકી જ્ઞાન રોકાયું છે;
દર્શનાવરણી થકી, દર્શન રૂંધાયું છે.
વેદની કર્મ પ્રતાપે, સાતા અસાતા વેદાય;
મોહની કરમ મદે, મોહમાં બંધાય છે.
આયુ કર્મે ઠામે ઠામ, જનમી દેહ તજાય;
નામ કર્મે નવ નવે, નામે ઓળખાય છે.
ગોત્ર કર્મ ઉંચ નીચ, ગોત્ર માંહી ઉપજાવે;
અંતરાઇ કર્મે અતિ, લાભ દુર થાય છે. ૩

દોહરા.

આત્મા શુદ્ધ સ્વરૂપ તે, મળ્યો કર્મ મળ સાથ;
તીવ્ર તપસ્યા ધ્યાનથી, થાય નિરંજન નાથ. ૪
જ્ઞાન દર્શન આવર્ણથી, ઢંકાએ છે તેહ;
વેદની કર્મથી વેદીએ, અસાતા સાતા દેહ. ૫
મોહની કર્મ મદ મોહથી, મોહ્યો સહુ સંસાર;
જન્મ મરણ ફેરા ફરે, આયુષ્ય કર્મ આધાર. ૬

નામ કર્મના ઉદય સમે, ભમવું ઠામો ઠામ;
જુજવી જીવા જોનીમાં, જુજવાં ધરવાં નામ. ૭
ગોત્ર ઉંચ નીચ પામવાં, ઠરી ન બેસવું ઠામ;
રખડાવે ગતિ ચારમાં, ગોત્ર કર્મનું કામ. ૮
અંતરાઇના ઉદયથી, લાભ લેખતાં ખોટ;
દાન વિર્યને ભોગની, ભરતી ઇચ્છતાં ઓટ.
ઘટમાળ અનુક્રમે, ચડે ઉતરે જેમ;
કરમે આત્મા જીવની, ગતાગતિ છે એમ. ૧
સુક્ષ્મ બાદર કોય છે, સ્થાવર જંગમ જોય;
સ્વર્ગ નર્ક આ લોકની, ગતિ કર્મથી હોય. ૧૧
એકેંદ્રી આદિ લઇ, પંચેંદ્રી પરીયંત;
શુભાશુભની વિચીત્રતા, એજ કર્મ બળવંત. ૧૨
કોય રંક કોય રાય છે, રોગી નીરોગી કોય;
કર્મ સતાના દાખલા, જગ રચના સૌ જોય. ૧
પંચ વિષયને પોષવા, કે કરવા વેપાર;
વિના સ્વાર્થે પણ ઘણા, બાંધે કર્મ અપાર. ૧૪
કષાય સંજ્ઞા વિકથા, આરત રૌદ્ર સેવાય;
કર્મ બંધનાં કારણો, આશ્રવ તે કહેવાય. ૧૫

મન વચન કાયા તણા, જેહ શુભાશુભ યોગ;
સમય સમય સંચે સદા, કર્મ તણા સંજોગ. ૧૬
કરવી કે અનુમોદવી, અથવા ઇચ્છી ઘાત;
અશુભ કર્મ અતિ આકરાં, ભોગવવાં સાક્ષાત. ૧૭
અલ્પ ઇજા આદિ લઇ, પ્રાણ હરણ પર્યંત;
હિંસા એ હેતુ કર્મની, સુક્ષ્મ કે અત્યંત. ૧૮
એક કે યુગલ યોગથી, સિથિલ બંધ બંધાય;
તિવ્ર ત્રીયોગની એકતા, બંધ નકાચિત થાય. ૧૯
પુન્ય પાપ એ દ્વંદ તે, છે શુભાશુભ કર્મ;
સ્વર્ગ નર્ક આ લોકમાં, રખડાવ્યાનો ધર્મ. ૨૦
વિના ચૈતન જડ લક્ષણે, પર પુદ્ગલ સમુદાય;
ચૈતન્યને સંસારમાં, રખડાવેજ સદાય. ૨૧
પુન્ય તત્વ પ્રભાવથી, શુભ કર્મ ફળ હોય;
ઉદય આવતાં જીવને, સુખ સંપદા જોય. ૨૨
અશુભ કરણી આદર્યે, અશુભ કર્મ ફળ હોય;
કડવાં ફળ જીવ ભોગવે, પાપ ઉદયથી જોય. ૨૩
મિથ્યાત્વ અવિરતી પ્રમાદને, અશુભ જોગ કષાય;
કર્મ બંધના હેતુઓ, આશ્રવ જે કહેવાય. ૨૪

આત્મ પ્રદેશ સાથે મળે, અષ્ટ કર્મ સંબંધ;
ચતુરવિધ પ્રકારથી, પ્રકૃતિ આદિ બંધ. ૨૫
આત્મ પ્રદેશથી સર્વથા, મૂકાએ જો કર્મ;
જડ ચૈતન્ય જુદાં થવાં, એજ મોક્ષનો મર્મ. ૨૬
કર્મ મળ કરે એકઠો, પંદર પાપ વેપાર;
બાંધે બંધ અતિ આકરા, પાપસ્થાન અઢાર. ૨૭
પ્રાલબ્ધ ભાવિ ભાવ વિધિ, નસીબ કુદ્રત દૈવ;
જુજવે નામે ઓળખો, એ સહુ કર્મ સદૈવ. ૨૮
કર્મ ન મૂકે કોયને, દાનવ માનવ રાય;
કરણી સમ સહુ ભોગવે, એ છે કુદ્રત ન્યાય. ૨૯
રંક બને છે રાજીઓ, રાય થાય છે રંક;
એ પણ કારણ કર્મનું, કે એ વિધિના અંક. ૩૦
કરમે દેવ મનુષ્યમાં, કરમે તિર્યંચ હોય;
કરમે નર્ક નિગોદમાં, ગતાગતિ સહુ જોય. ૩૧
લક્ષ ચોરાસી યોનિમાં, ફર્યો અનાદિ જીવ;
એ છે કારણ કર્મનું, કર્મ તજ્યા તે શીવ. ૩૨
નીર ખીર તલ તેલ સમ, કરમે ગ્રાહ્યો જીવ;
નિર્જરતાં એ કર્મને, શુદ્ધ આત્મા છે શીવ. ૩૩

જીવ શીવ થાએ ખરો, શીવ ન થાએ જીવ;
કર્મ બીજને બાળીઆં, શુદ્ધ આત્મા છે શીવ. ૩૪
નીચ કર્મ કરી જીવ જે, નરકે પાડે રીવ;
શુદ્ધ ચારીત્રને સેવતાં, મેળવશે સુખ શીવ. ૩૫
કાળ કર્મની જાળમાં, સપડાયા ત્રીલોક;
અશુભ શુભ કર્મે લહે, અધો ઉર્ધ્વ આ લોક. ૩૬
કર્મ બાંધીએ જે રસે, તેજ રસે વેદાય;
તરત ન આવે ઉદયમાં, તોપણ સાથે થાય. ૩૭
લહે ન ભાગ સ્નેહી સગું, સહે અસાતા આપ;
ટળવળી સહુ તાકી રહે, હોએ હેત અમાપ. ૩૮
કરમને શરમ નહિ જરા, કર તેવુંજ પમાય;
શુભાશુભના ઉદયથી, ચડતી પડતી થાય. ૩૯
ચડે પડે છે આતમા, શુભાશુભ સંયોગ;
અવર ન કરનારો ગણો, સંપત્તિ યોગ વિયોગ. ૪૦
શુભ કરવું નિજ હાથમાં, અશુભનું પણ એમ.
છે નિશ્ચય તો અવરને, દોષ આપીએ કેમ. ૪૧
નિજ શુભાશુભ નિજથી, પર પ્રેરક નહિ લેશ;
એ નિશ્ચય આવ્યા વિના, ટળે ન આત્મ ક્લેષ. ૪૨

પાપ સ્થાન અઢારથી, બાંધે પ્રાણી પાપ;
બ્યાસી પ્રકારે ભોગવે, પામે દુઃખ અમાપ. ૪૩
આત્મરૂપ તળાવમાં, આશ્રવ કીચ ભરાય;
રહે ઘડનાળાં મોકળાં, નિત્ય વધારો થાય. ૪૪
રોકો સંવર દ્વારથી, કરી વૃત્ત પચ્ચખાણ;
પછી ઉલેચો કીચને, કરી તપસ્યા ધ્યાન. ૧...
સુરવ પુન્ય પ્રતાપથી, મળ્યો મનુષ્ય દેહ;
દીર્ઘાયુ સાથે વળી, જૈન ધર્મ શું નેહ. ૪
વિષય કષાય કરી પરા, જીતાય રાગ ને દ્વેષ;
પરિગ્રહ મેળવ્યો પ્રીતથી, સેવો શીલ હમેશ. ૪૭
ભોગવતાં ભારે પડયો, જાણ્યું પામીશ સુખ;
છોડયો તે છુટે નહિ, સહુ દુઃખ દુઃખ દુઃખ. ૪૮
જેમ જોડેલા બળદીઆ, હાંકયો હાલે દીન;
આત્મ શક્તિ છે હીન;
આ ભવ તો એળે ગયો, છે અંતર ઉદાસ;
સો પર ભવ શુભ જોગની, આશાનો અવકાશ. ૫૦
દાન શીયળ તપ ભાવ એ, ભવ તરવાનાં નાવ;
અષ્ટ કર્મ અરી દળ તણો, તહાં ન ફાવે દાવ. ૧

કરમ સમો જગમાં નહિ, કરતા હરતા કોય;
પણ બળીયો થઇ આતમા, જીતે તેને તોય. ૫૨
નાખે નર્ક નીગોદમાં, આપે સ્વર્ગ વિમાન;
તેને જીત્યા જે પ્રભુ, વંદું સિદ્ધ ભગવાન. ૫૩
સંચિત પુરવ ભવ તણા, ઉદય રસ આપે ખાસ;
આ ભવનો પણ દેખીએ, ઉદય આવતો ભાસ. ૫૪
આ ભવ શુભ કરણી કરી, શુભ ફળ માગે કોય;
ઉદય પુર્વના અશુભમાં, શુભ ફળ કયાંથી હોય. ૫૫
મળશે એ ફળ આગળે, શંકા કરો ન કોય;
વૃક્ષ વાવો સંભાળથી, તકે ફળે છે તોય. ૫૬
રચ્યા પચ્યા રહી પાપમાં, ભોગવે સુખ ભરપૂર;
પુર્વ ઉદય એ ભોગવી, જાશે જયાં જમપુર. ૫૭
નવ નિધિ ભરપૂર ભર્યા, ભરતી નહિ છે ઓટ;
કાળાંતરે કમી થતાં, અંત આવશે ખોટ. ૫૮
તાવી ટીપી કાપીને, કરે કસોટી કર્મ;
સોનું સજ્જન શોભશે, ધારીને નિજ ધર્મ. ૫૯
સુખ દુઃખમાં હરખે રૂએ, અજ્ઞાની આચાર;
જ્ઞાની સમ ચિત્તથી રહે, આણી કર્મ વિચાર. ૬૦

પુરણુ પુરવ પૂન્યથી, મળ્યો મનુષ્યા દેહ;
સ્વ સ્વરૂપ ન ઓળખ્યું, પર પુદ્ગળ પર નેહ. ૬૧
અન્યગતિમાં તો અતી, હતો અંધ અજ્ઞાન;
મનુષ્યપણું પામ્યા છતાં, ખોવું ન ઘટે ભાન. ૬૨
છુટક બારૂં આજ છે, મળે ન વારમવાર;
માટે મનુષ્યા દેહને, ગણ્યો સારમાં સાર. ૬૩
ચતુર આત્મ ચેતી ગયા, તોડી કર્મ જંજાળ;
મોક્ષ મંદીરે સ્થિર થયા, છોડી ભવ ઘટમાળ. ૬૪
વિયોગ સંયોગ ઈષ્ટ હષ્ટનો, વ્યાધિ માન અપમાન;
દ્વંદ શુભાશુભ સરવ છે, કર્મ તણું નિદાન. ૬૫
ઉદય કરમ રસ આવતાં, ભોગવજે સમ ભાવ;
વિલાપથી વધતો થશે, કર્મ કીચ જમાવ. ૬૬
કરમ રૂણુ અતિ આકરૂં, જોગ મળ્યો છે આજ;
નિરજરજે સમ ભાવથી, મળશે સબળી સાજ. ૬૭
વિચિત્રતા સહુ કર્મની, કહ્યો એજ સંસાર;
દુષ્પથંદ એ કાપવા, કરવો ઘટે વિચાર. ૬૮

ઉપદેશીક દોહરા.

માર્ગાનુસારી કર્યો, આપી બોધ અનુપ;
નમસ્કાર ત્રીકાળ હો, સદ્ગુરૂ આત્મ સ્વરૂપ. ૧
સંસાર સમુદ્રથી તારવા, નીવડે નાવા રૂપ;
સરણુ ગ્રહું સદ્ગુરૂ તણું, જે છે આત્મ સ્વરૂપ. ૨

જન્મ જરા મૃત્યુ નહિ, શોક દુઃખ નહિ રોગ;
નિત્ય અવિનાશી અભય છે, નમું સુખ સંજોગ. ૩
આદિશ્વર આદિ લઇ, વર્ધમાન ભગવાન;
તર્યા સ્વભાવે ભાવતાં, ધરીએ તેહીજ ધ્યાન. ૪

નમું ગણધર આચાર્યને, અવર મુનિશ્વર વૃંદ;
ઉપદેશ્યા ઉપદેશ જે, અનુભવતાં આનંદ. ૫
અહોનિશ નમું પરમાત્મને, સ્વાત્મા નિશ્ચય તેહ;
સત્ચિદ આનંદ રૂપ છે, અલખ અમુર્તિ જેહ. ૬
અનંત જ્ઞાન દર્શન અનંત, અનંત વિર્ય પ્રકાશ;
નિશ્ચય નયથી આતમા, છે પરમાત્મા ખાસ. ૭
અરિહંત સિદ્ધ આચાર્યજી, ઉવઝાય સહુ સાધ;
પંચ પદ પરમેષ્ટિ ભજો, ધોવા પાપ અગાધ. ૮

બાર આઠ છત્રીસ ને, પચીસ સત્તાવીશ સાર;
અ, સિ, આ, ઉ, સા, દેવના, ગુણ ગણું ત્રીકાળ. ૯
અરિહંત સિદ્ધને સદા, માનું છું હું દેવ;
ગુરૂ નિર્ગ્રંથની સર્વથા, કરૂં ભાવથી સેવ. ૧૦
યતિ ધર્મ દશ અંગે કહ્યો, દયામય વસ્તુ સ્વરૂપ;
રત્ન ત્રય ધર્મ સેવું સદા, જે છે આતમ રૂપ. ૧૧
દેવ ગુરૂને ધર્મનું, સમજી ખરૂં સ્વરૂપ;
વિણ અતીચારે વર્તવું, એ સમકીત અનુપ. ૧
પરિગ્રહ મોહ માયા તણી, તજ તજ જીવ જંજાળ;
આત્મ તત્ત્વ અભ્યાસ જે, સર્વ સિદ્ધિ દાતાર. ૧
આત્મજ્ઞાન ઉપજાવવા, સર્વ સુત્ર ઉદ્દેશ;
ક્રીયા પણ કહી તે કારણે, છતાં જ્ઞાન ન લેશ ૧
જ્ઞાન મેળવવા કારણે, કરવી ક્રીયા જરૂર;
ચારીત્ર વિણ સિદ્ધિ નથી, જ્ઞાન ન ઉપજે ઉર. ૧
પણ ક્રીયા જડપણે કરી, દીધું ન જ્ઞાનમાં ધ્યાન;
ચાર્યો પંથ કાપે નહિ, ઘાણી બેલ સમાન. ૧
સુસ્ક જ્ઞાન કથને કરી, કરે ન ક્રીયા કોય;
નહિ ઘરનો કે ઘાટનો, ધોબી શ્વાન સમ જોય. ૧

આતમ બોધ થયા વિના, ક્રીયા શું આવે કામ;
મોક્ષ હેતુ મન હોય તો, ઓળખ આતમરામ. ૧૮
આતમ જ્ઞાન પમાડવા, કહ્યાં સુત્ર સિદ્ધાંત;
છતાં ન આતમ ઓળખ્યો, કરે ક્રીયા એકાંત. ૧૯
દેવ ગુરૂ ને ધરમનું, સમજી ખરૂં સ્વરૂપ;
અંતરથી આરાધીએ, જે સમકીત અનુપ. ૨૦
મારગ સુચવે મોક્ષનો, વિદ્યા તેજ વખાણ;
યથાર્થ બોધ એને કહો, આપે પદ નિરવાણ. ૨૧
મૃગ મૃગમદને શોધતો, રખડે રાનો રાન;
નિશ્ચય છે નિજ નાભીમાં, તેનું ન મળે ભાન. ૨૨
નિશ્ચય અવિનાશી નિજમાં, તેથી રહી અજ્ઞાન;
તિરથ યાત્રા સ્થાનમાં, શોધે છે ભગવાન. ૨૩
વિષયાનુરાગી નિત્ય નવા, બાંધે કર્મના બંધ;
વિરક્ત થાય જો વિષયથી, છોડે કર્મ સંબંધ. ૨૪
સર્વ સુત્રનો સાર તે, સમભાવમાં માય;
રાગ દ્વેષ વિણુ આતમા, સમભાવી કહેવાય. ૨૫
દેખ નરક સમ દેહ આ, દોષ દરદનું ધામ;
છતાં એજ ઉપકારી છે, ભજવા આતમ રામ. ૨૬

તૃષ્ણા તે ત્રીલોકને, રખડાવે ગતિ ચાર;
તેહ ત્યાગતાં જીવને, મુક્ત થતાં શી વાર. ૨૭
તપ ઉણોદરી આદિથી, મરે કરી કાય ક્લેષ;
પામે સ્વર્ગ કે સંપદા, એથી ન આશ વિશેષ. ૨૮
પણ જો તે તપસ્યા વડે, પંડીત મરણ મરાય;
છેદી ભવ જંજાળને, પંચમ ગતિ પમાય. ૨૯
અહિંસા સ્વર્ગ દાતાર છે, મોક્ષ દાતા પણ તેહ;
પરને નિજ સમાનતા, રાખો મન વચ દેહ. ૩૦
સગાં સંબંધી સ્નેહીયો, પ્રેરે પાપ સ્થાન;
પ્રીત દેખાડી પળ પળે, બને શત્રુ સમાન. ૩૧
વિધુર દશાએ વરતવા, આવ્યો ઉદય આજ;
પરમ ઉદયમાં પાલટે, કર જીવ આતમ કાજ. ૩૨
વૃદ્ધ વયે વિધુર થવું, ઉદય અશુભ ગણાય;
અશુભ ઉદયમાં પાલટે, આતમ સાધન થાય. ૩૩
જનમીને મરવું નક્કી, આયુષ્ય કર્મને અંત;
ઉંચ ગતિમાં ઉપજવું, એ દુર્લભ અત્યંત. ૩૪
જો તૃષ્ણા છીપે નહિ, મળતાં ધન અધિકાર;
તો નર ખર તે સમજવો, રંક તણો સરદાર. ૩૫

ઉદયાધિન સંતોષથી, ચલવે જે વ્યવહાર;
નિતિ માર્ગ લોપે નહિ, તે શ્રીમાન ઉદાર. ૩૬
આશા મૃગ જળ જાણવી, નિરાશા અમૃત પાન;
તૃષ્ણા દેહ દમન કરે, સુખ સંતોષ સુકાન. ૩૭
તજી દુરાશા દીનતા, સજી સીલ સંતોષ;
ભજી અહોનિશ આતમા, કરો કર્મ નિરદોષ. ૩૮
ઇચ્છે અમિય કીરણ થકી, સીતળ કરવા ચંદ;
છતાં વિંટાએ વાદળે, કળા જણાયે મંદ. ૩૯
પર અવગુણ પ્રકાશવા, તે સહુને મન સહેલ;
નિજ દુર્ગુણ નિહાળવા, એ બનવું મુશ્કેલ. ૪૦
નિજ અવગુણને નીરખી, તજવા રાખી ટેક;
પર સદ્દગુણ પ્રગટ કરે, તે તો લાખે એક. ૪૧
અવગુણ ગણવા સહેલ છે, ગુણ ગણવા મુશ્કેલ;
કીડી કાણાં શોધશે, હોય હેમના મહેલ. ૪૨
સ્વભાવથી સમ રહે, એ તો નવડો એક;
ગુણો ગમે તે અંકથી, સરવાળે નવ છેક. ૪૩
તેમજ સંતો સરવદા, રહે સ્વભાવે લીન;
હાની વૃદ્ધિ ન લેખવે, ગણે કર્મ આધિન. ૪૪

જો અંક લે આઠનો, ગુણતાં ઘટે અંકેક;
તેમજ દુરજન જાણવો, રાખે નહિ નિજ ટેક. ૪૫
નિજ નિજ કારજમાં કુશળ, એવો સહુ સંસાર;
પર કારણ પીડા સહે, તે વીરલા નરનાર. ૪૬
કહેણી રહેણી સુજનની, સુખરૂપ સૌને હોય;
સરલપણું ચુકે નહિ, આવરણ આવે તોય. ૪૭
દેખી આચરણ આપણું, ભૂલે સંતતિ ભાન;
તે પણ તેવું આચરી, કરે કૂળ અપમાન. ૪૮
પાછળની પ્રજા સહુ, વરતે વિનય સહિત;
અભ્યાસ એવો પાડીએ, નિવડે તોજ વનીત. ૪૯
અતિથિ આવે આંગણે, દેવું આદર માન;
ધન્ય ભાગ્ય ગણી આપીએ, ઘર સંપત્ત અનપાન. ૫૦
કુટુંબ કૂળ વત્સલ થવું, સ્વામિ વત્સલ જોય;
જાત દેશ સેવા પછી, અધિકી સત્તા હોય. ૫૧
જે જે સ્થાને યોગ્ય તે, નર શોભે તે સ્થાન;
સ્થાન ભ્રષ્ટ શોભે નહિ, દઈએ અધિકું માન. ૫૨
દંત કેશ નખ કે નરો, સ્વ સ્થાનેજ સોહાય;
અલગ ઉંચ સ્થાને ધરો, પણ પદભ્રષ્ટ જણાય. ૫૩

ભાર બોજથી સોંપીયે, અધિકાર અનુસાર;
ઉમંગે આગળ પડી, શોભાવે વ્યવહાર. ૫૪
નેત્ર દોષે દેખીયે, વિપરીત આભાશ;
નિર્મળ નેત્રે નિરખતા, યથા તથ્ય પ્રકાશ. ૫૫
સુણેલ ખોટું સો વસા, દીઠેલ વસવા વીશ;
એક તરફી આધાર વિણ, શી શિક્ષા શી રીત. ૫૬
સાઠ વરસ શ્રવણ કર્યું, આવ્યું ન આતમ જ્ઞાન;
કહેણી રહેણી ભિન્નતા, તે ઠગ બગ સમાન. ૫૭
દયા દાને દંભી નહિ, કહેણી રહેણી એક;
વરતે સરલ સ્વભાવથી, જ્ઞાન વિજ્ઞાન વિવેક. ૫૮
લિંગ ભેદમાં આંતરો, એ તો બાહ્યાચાર;
અભ્યંતર સમ અંત લગી, એજ ખરો ઉદ્ધાર. ૫૯
ઇંદ્રિય વશ વરતાય તો, બને શત્રુ મહાન;
વશ વરતાવ્યે ખંતથી, તો તે મિત્ર સમાન. ૬૦
દયા શીલ સંતોષ ને, નિતિ નિપુણ નર જેહ;
શોભા પામે સર્વથા, સદ્ગતિ પામે તેહ. ૬૧
ઉલટા ગુણ હોય એ થકી, ભરે ભૂમિ પર ભાર;
આ ભવ અપકિર્તિ લહે, પર ભવ દુઃખ અપાર. ૬૨

કુગુરૂ કુદેવ કુધર્મનો, કર્યો ભરોસો ખાસ;
સુગુરૂ સુદેવ સુધર્મમાં, રાખ્યું દીલ ઉદાસ. ૬૩
પાપ સ્થાન સેવ્યાં સહુ, નિશ્ચય રહી નચિંત;
નવ તત્વ નવિ ઓળખ્યાં, ખટ દ્રવ્ય ખચીત. ૬૪
લક્ષ ચોરાસી જીવની, પડી નહિ પિછાન;
વિવિધ વેર વસાવીયાં, રહી અંત અજ્ઞાન. ૬૫
કાયા કંચન કામની, મહા મોહનાં સ્થાન;
મદીરા સમ સંસારીને, કરે બહુ બેભાન. ૬૬
કાયા કંચન કામની, મહા મોહનાં સ્થાન;
તે તજવાથી સહજમાં, ઉપજે આતમ જ્ઞાન. ૬૭
કાયા કંચન કામની, મહા મોહનાં સ્થાન;
બાહ્ય અભ્યંતર ત્યાગી તે, મહા ભાગ્ય ભગવાન. ૬૮
નારી નરકનું બારણું, એ એકાંત ન હોય;
સતિ શિરોમણિ થઇ ઘણી, ગઇ મુક્તિએ જોય. ૬
થવું થાય છે ને થશે, ઉદય કર્મ આધાર;
તેનો તો શો ઓરતો, અચળ નિયમ નિર્ધાર. ૭૦
ભુતકાળમાં ભોગવે, વર્તમાન સમભાવ;
ભવિષ્યમાં ભય નવિ રહે, એવો કર્મ પ્રભાવ. ૭૧

વિચારપુર્વક જે રસે, વરતન કોય વિરૂદ્ધ;
કર્મ બંધાયે તે રસે, ભોગવવાં અણી શુદ્ધ. ૭૨
અજાણતાં સંજોગમાં, થયું વરતન વિરૂદ્ધ;
પસ્તાવાથી પતી રહે, કહ્યું વિતરાગી બુદ્ધ. ૭૩
જળ ભૂમિ એકજ છતાં, સ્વભાવને અનુસાર;
ઉદ્ભિજ એક રસનાં નહિ, પાત્ર અપાત્ર વિચાર. ૭૪
વાણી શ્રી વિતરાગની, અવિરૂદ્ધ શુદ્ધ આચાર;
પાત્રતા ભેદે મત પડી, પરવર્યા ગચ્છ અપાર. ૭૫
ગચ્છ ગચ્છાંતર મમતમાં, મૂકી મારગ મૂળ;
રાગ દ્વેષ રમખાણમાં, કરી ફરગી પ્રતિકૂળ. ૭૬
ગચ્છ ગતાંતર મોહને, તજી સજી સમભાવ;
મૂળ માર્ગ આરાધજો, એજ મોક્ષનો દાવ. ૭૭
ગચ્છ કદાગ્રહ કરી પરા, ધરો સનાતન ધર્મ;
અંધ શ્રદ્ધા હઠવાદથી, બંધાયે છે કર્મ. ૭૮
જૈન ધર્મ જાણ્યો કહે, મમતામાં મુંઝાય;
એ જાણ્યામાં માલ શો? મૂળગી મુડી જાય. ૭૯
એકજ મૂળથી ઉપજ્યાં, ડાળાં ડાળી અનેક;
થડ જોશો તો એક છે, વીર પ્રભુગી નેક. ૮૦

નિધાન;
પર્યુસણનાં પર્વ તે, નિવૃતિ સ્થાન. ૮૧
એ અવસર પ્રવૃતિને, દેવું ન ઘટે દાવ;
વેર વિરોધથી વીરમી, મૈત્રી ભાવનો લાવ. ૮૨
પડી અવળીએ આતમા, ખુએ પર્વનો ધ્યાન;
સ્થાનક સ્થાન નિવૃતિનું, ધરવાને શુભ ભાન. ૮૩
કષાય વિકથા ત્યાં નહિ, થવા જાણવું આજ;
તજી દોષ નિર્દોષ થવા, પર્વ આલોયણ સમાજ. ૮૪
ખાનપાન પટ ભુષણે, રાચ્યો જુઓ વિપરીત;
હેણા હોમી રૂઢીયો, ગૃહીએ જે ખચીત. ૮૫
ચુણ્યું પર્વ અધિરાજનો, મળે ન લાભ સચવાય;
પ્રતિક્રમણના હેતુઓ, સમજણથી થાય. ૮૬
પુર્વ દોષ દુરે જઇ, આશ્રવ ઓછો ઉધાર;
સંવત્સરની આખરે, જોવું જમા વ્યવહાર. ૮૭
સરવૈયું સંભાળીને, સુધારવો બહાર;
યતિ ધર્મોદય અંતરે, પડે પ્રતિભા પાર. ૮૮
વચનો તે વિતરાગનાં, ઉતારે ભવ વિશેષ;
ધર્મોદય અંતર નહિ, બોધે બોધ કલેષ. ૮૯
તે વક્તાના વચનથી, ટળે ન આત્મ

પ્રતિબિંબ પડી હૃદયમાં, પ્રસરે રંગ પ્રદેશ;
તોજ શ્રવણ સાફલ્યતા, નહિ તો લાભ ન લેશ. ૯૦
ચિત્ત શાન્તિ આતુરતા, વકતા પ્રત્યે ભાવ;
શ્રોતા હોય એ લક્ષણે, લહે શ્રવણનો લાવ. ૯૧
ચિત્ત શાન્તિ રૂચી હૃદયમાં, સિદ્ધાંત સુણવા ભાવ;
મનન કરીને આચરે, તોજ શ્રવણનો લાવ. ૯૨
ચિત્ત ચંચળ રૂચી નહિં, અંતર રહે અભાવ;
શ્રવણ કરી શું મેળવે, મનુષ્યપણાનો લાવ. ૯૩
લખ્યું વદ્યું વાંચ્યું સુણ્યું, સફળ વરતને થાય;
વિના એકડે શુન્યની, કિંમત કેમ ગણાય? ૯૪
લખ્યું વદ્યું વાંચ્યું સુણ્યું, સફળ વરતને થાય;
પુષ્પચંદ વરતન વિના, મિથ્યા મહેનત જાય. ૯૫

દોહરો.

આત્મા મુનિ ભકિત શશિ, વિજ્યા દશમી નેક;
પુષ્પ ગ્રંથ પૂરણ થયો, પણ સંક્ષેપે છેક.

અનંત ધરમ શાન્તિ, કુંથુ અર મલિનાથ,
શ્રી મુનિસુવૃત્ત સ્વામી, અચલ આરામી છે.
નમી નેમ પાર્શ્વનાથ, ચોવીસમા વર્ધમાન,
ત્રીકરણ શુદ્ધે વાંદું, એ અંતર જામી છે.

પડિક્રમણ વિષે સઝાય.

(જાય છે જગત ચાલ્યું—એ રાગ)

પડીકમણું કરીને રે હું માફી માગું (એ ટેક)
શ્રી શ્રી મંદીર સ્વામી, આપ છો અંતર જામી,
વાંદું છું હું શીર નામી રે, મંદીરસ્વામી–પડીકમણું કરીને રે
સામાયક શુદ્ધ કરી, સમભાવ ચિત્તે ધરી,
નિર્જરા નિરજરી રે, મંદીર સ્વામી–પડીકમણું. ૧
ચોવીસંથો સ્તવી કરી, વંદણા ભાવથી ભરી,
સમકીત શુદ્ધ ધરી રે, મંદીર સ્વામી–પડીકમણું. ૨
બાર વૃત્ત તણા દોષ, આળોવ્યા મેં નિરદોષ,
અતિ કરી અફશોષ રે, મંદીર સ્વામી–પડીકમણું. ૩
અઢારે પાપનાં સ્થાન, તેનું પણ થયું ભાન,
રખડાવે છે નિદાન રે, મંદીર સ્વામી–પડીકમણું. ૪

મિથ્યાત્વને પરૂં કરી, જાણ્યા જૂના આઠે અરી,
સુ સરણા ચાર ધરી રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૫
ચઉદ સ્થાનકે જીવ, વિરાધું છું હું સદૈવ,
તજી ભાન જીવા જીવ રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૬
શ્રમણ સુત્ર વિચાર્યું, ધાર્યા જેવું તે મેં ધાર્યું,
છાંડયા જેવાને નકાર્યું રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૭
અરિહંત સિદ્ધ સંત, ગુરૂ આદિ ભગવંત,
ક્ષમાવ્યા ધરીને ખંત રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૮
બીજા જીવ તણા જથ્થા, હણ્યા હણાવ્યા મેં વૃથા,
માફ માગી છે સર્વથા રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૯
ધર્મ ધ્યાન ધર્યું ચિત્ત, લાગી કાઉસગ્ગે પ્રીત,
રોકી ઈંદ્રિયો અજીત રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૧૦
આહાર સંજ્ઞા અનાદી, અહો રાત્રીએ સવાદી;
પચખાણે મરીયાદી રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૧૧
સમે સમે બાંધું પાપ, જાણી દેખી રહ્યા આપ;
માફ કરો જપું જાપ રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૧૨
આવશ્યક અહોનિશ, ફેરજ શ્રાવક શિષ;
ઉપદેશ્યું જગદીશ રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૧૩

આજ સુધી દોષ થયા, શુભ ભાવે આળોવીયા;
ક્ષમા માગું હોય રહ્યા રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૧૪
હવે નહિ થવા દોષ, ચિત્તમાં રાખું અંકોષ;
પુષ્પચંદને સંતોષ રે, મંદીર સ્વામી-પડીકમણું. ૧૫

અંત સમયની ક્ષમાપના.

જાય છે જગત ચાલ્યું-એ રાગ.

જગતના જીવ પાસેરે, હું માફી માગું-(એ ટેક.)
ત્રસને સ્થાવર જીવ, હણ્યા હણાવ્યા સદૈવ;
કઇકને પડાવી રીવ રે, હું માફી માગું. ૧
અનાદિ ભવ આસરે, સંબંધે જોડાઇ ખરે;
વેર તો વસાવ્યાં અરેરે, હું માફી માગું. ૨
યોનિ જે લક્ષ ચોરાસી, અવતરીને અભ્યાસી;
નારકીથી ગયો ત્રાશીરે, હું માફી માગું. ૩
વિકલ ઇંદ્રિય સુધી, કીધાં પાપ વિણ બુદ્ધિ;
આલોયણથી વિશુદ્ધિ રે, હું માફી માગું. ૪
તિર્યંચ પંચેંદ્રિપણે, સબળ અબળ હણે;
કીધી હિંસા કૂરપણે રે, હું માફી માગું.

મનુષ્ય જનમે આજ, મળી ધરમની સાજ;
સત્ય જે જૈની સમાજરે, હું માફી માગું.
વર્ષ બેંતાલીસ સુધી, કેળવી બાળોની બુદ્ધિ;
નીતિ સાથે જ્ઞાન વૃદ્ધિરે, હું માફી માગું.
ડર રાખી જગદીશ, કરી શિક્ષા તજી રીસ;
માફ કરો સહુ શિષ્ય રે, હું માફી માગું. ૮
સગાં સંબંધી સંઘાતે, મત ભેદ વાત વાતે;
વિરોધ પાડયા મેં જાતેરે, હું માફી માગું. ૯
સંબંધમાં આવ્યા કોય, અન્ય જનો દુભ્યા હોય;
ક્ષમા સહુ કરો તોય રે, હું માફી માગું. ૧૦
ગચ્છ ગચ્છાંતર પ્રત્યે, વર્ત્યો વિરૂદ્ધ મતે;
જાણી મારા દોષ સત્ય રે, હું માફી માગું. ૧૧
અશુભ આશ્રવ સ્થાન, સેવ્યા જે જે તજી ભાન;
આલોચણુને નિદાન રે, હું માફી માગું. ૧૨
આયુષ્યના અંત સુધી, કરી કરમની વૃદ્ધિ;
કરવા તેની વિશુદ્ધિ રે, હું માફી માગું. ૧૩
દરદ અસાધ્ય જાણી, કરવા છેલ્લી કમાણી;
શુદ્ધ ભાવદીલ આણી રે, હું માફી માગું ૧૪

સકામ મરણ સારૂં, સમાધિ બોધ વિચારૂં;
શુભ ગતિનું જે બારૂં રે, હું મારી માગું. ૧૫
ભવો ભવ તણા દોષ, આલોવ્યા તજીને રોષ,
પુષ્પચંદને સંતોષ રે, હું મારી માગું. ૧૬

દોહરો.

ઉદય વેદની કર્મનો, વેદ્યો સેં સમભાવ;
થઇ નિર્જરા આ સમે, આયુષ્ય કર્મ પ્રભાવ. ૧૭

શ્રી મહાવીર પ્રભુની આરતી.

શ્રી સિદ્ધારથ નંદન, પ્રભુશ્રી ત્રીશલાના જાયા,
પ્રભુ શ્રી ત્રીશલાના જાયા,
ગુણ નિપન્ન દીધું નામ પ્રભુનું,
(૨) વર્દ્ધમાન સુખદાયા.
જય જય જય મહાવીર. (૧)
બાળપણે ગિરિરાજ ચળાવી, સુરપતિ સમજાયા,
પ્રભુ સુરપતિ સમજાયા,
અતુલ્ય બળ પ્રભુ જન્મથી પામ્યા,

(૨) કંચન વર કાયા,
જય જય જય મહાવીર. (૨)

સિંહ લંછન સુકોમળ અંગો, હોંસે હુલરાયા,
પ્રભુ હોંસે હુલરાયા,
દેવ દેવી દરશનથી રીઝી,
(૨) બહુ વિધિ ગુણ ગાયા,
જય જય જય મહાવીર. (૨)

બાળ ક્રીડામાં દેવ હરાવી, ભૂતળમાં ચાંપે,
પ્રભુ ભૂતળમાં ચાંપે,
ઇંદ્ર વચન પ્રમાણ કરી દેવ,
(૨) મહાવીર પદ આપે.
જય જય જય મહાવીર.

ત્રીશ વરસ ગૃહવાસ વિલસતાં, અભિગ્રહ ઉર આવે,
પ્રભુ અભિગ્રહ ઉર આવે,
સંવત્સર દઈ દાન પ્રભુજી,

(૨) સંયમ ચિત્ત લાવે.
જય જય જય મહાવીર. (૫)

અડગ ધ્યાનથી ઉગ્ર તપસ્યા, વરસ બાર વિચરે,
પ્રભુજી વરસ બાર વિચરે,
કર્મ અરિને જીતી,
(૨) કેવળ જ્ઞાન વરે,
જય જય જય મહાવીર. (૬)

ઇંદ્રાદિક સહુ દેવ મળીને, કલ્યાણીક ઉજવે,
પ્રભુનું કલ્યાણીક ઉજવે,
દુંદુભી નાદ દશ દિશે,
(૨) વધામણું સૂચવે.
જય જય જય મહાવીર. (૭)

રત્ન જડીત સિંહાસન, ચામ્ર છત્ર ધારી,
પ્રભુજી ચામ્ર છત્ર ધારી,

અતિશયની એ શોભા,
(૨) પ્રભુતો નિશ્ચય અણગારી.
જય જય જય મહાવીર.

ત્રિગડા ગઢની રચના, સમવસરણ શોભે,
પ્રભુજી સમવસરણ શોભે,
અતિશય પ્રભુના દેખી,
(૨) ચિત્ત દર્શન લોભે.
જય જય જય મહાવીર.

અમિય રસ વાણીથી, ઉપદેશ પ્રભુ આપે,
ઉપદેશ પ્રભુ આપે,
ભવિને પાત્ર પ્રમાણે,
(૨) ચારિત્રમાં સ્થાપે.
જય જય જય મહાવીર.(

ચતુર્વિધ તિર્થ સ્થાપીને, અહિંસા વર્તાવે,
પ્રભુજી અહિંસા વર્તાવે,

રૈપર ભેદ ટાળીને,
(૨) સમભાવ સમજાવે.
જય જય જય મહાવીર. (૧૧)
ત્ર સિદ્ધાંત પ્રકાશી, આત્મજ્ઞાન આપે,
પ્રભુજી આત્મ જ્ઞાન આપે,
અનુભવતાં ભવિજન,
(૨) કર્મોને કાપે.
જય જય જય મહાવીર. (૧૨)
ધર ગૌતમ પ્રખદામાં ઝીલે, ઉપદેશ વાણી,
પ્રભુની ઉપદેશ વાણી,
સૌની ભાષામાં સમજે,
(૨) દેવ મનુષ્ય પ્રાણી.
જય જય જય મહાવીર. (૧૩)
ર વર્ષની વયમાં પાળી, પ્રવજ્યાં મ્હેંતાલી,
પાળી પ્રવજ્યાં મ્હેંતાલી,

મોક્ષ મંદીરે પહોંચ્યા,
(૨) દિન શુભ દીવાળી.
જય જય જય મહાવીર. (

વીર પ્રભુની આરતી આ, જે ભાવે ગાશે,
ભવિ જે ભાવે ગાશે,
પુષ્પ પ્રભુ પરતાપે,
(૨) સુખ સંપત્તિ થાશે.
જય જય જય મહાવીર. (

॥ अथ भजनावली लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

॥ अरिहंत सिद्ध साधु नमुं, निचो शिस निवाय ॥ भजन कथुं मै प्रेमसुं, गुंवा देउं बणाय ॥ १ ॥ पंचपद ध्याउं सदा, गुणसहु कह्या न जाय ॥ थोडासा प्रगट करू, ते सुणजो चितलाय ॥ २ ॥

॥ अथ चोवीस जिन स्तवन लिख्यते ॥

मतभुलो हरीका नाम, जपो तुम ईश्वरकी माला ॥ एदेसी ॥ तुम जपो प्रभुका नाम, जप्यासे कटै कर्मजाला॥ ए आं. ॥ आदि अजित संभव अभिनंदन, सुमति सुमत धारा ॥ कोइ पदम सुपार्श्व, चन्द्र

सुबोध, जिन, सितल सुखकारा ॥ सी. ॥
जिनंदजी, ॥ सी० ॥ तु० ॥ १ ॥
श्रेयांस बासपूज्य, विमलही कृपाला ॥
कोइ अनंत धर्म सान्ती कुंथु अरी,
स्याम मेरे दयाला ॥ स्याम. ॥ जि.॥
॥ स्याम. ॥ तु. ॥ २ ॥ मल्ली मुनी-
सुव्रत नमिजिन, रिष्टनेम निहाला ॥ पार्श्व
प्रभु और वृद्धमानकुं, ध्याय मनां महाला
॥ ध्याय. ॥ जि. ॥ तु. ॥ ३ ॥ चोवीस जि-
नको नित्य भजेसे, होगा निसतारा ॥
कोइ लिखमो पैय भरणे करजोडी, चाकर
चर्णारा ॥ चा. ॥ जि. ॥ चा ॥ तु.॥ ४ ॥इति॥
॥ अथ आदिजिन स्तवन ॥ राग प्रभाती ॥

भोर भयो अब जाग प्राणी, आदि जिनंदजीको रटन करो ॥ आदि नाभ आदेस्वर दाता, रिखव जिनंदन नांम खरो ॥ भो. ॥ मरुदेव माय नाभनों नंदन, तिण कूखे अवतार धरो ॥ भो. ॥ इखु- वांग भूमि नगर प्रभुको, देश कोशलको राज करो ॥ भो. ॥ चैत वदि एकमके दिवसे, जन्म थयो प्रभुजी केरो ॥ भो. ॥ देव इन्द्र सव प्रभुजीकेरा, सोछव कर दिल हर्ख धरयो ॥ भो. ॥ देह कंचन वर्णी प्रभुजीकी, पांचसे धनुष सिध्यात कह्यो ॥ भो. ॥ चेत वदि अस्टमीके दिवसे, प्र- भुजी दिल वेराग धरो ॥ भो. ॥ चार

सहस्त्र परवार साहित प्रभु, संयम साहिब आप वरयो ॥ भो. ॥ प्रथम अहार श्रेयांस घर लिनो, ते धन सफल जमार करयो ॥ भो. ॥ आदिकादी प्रभु धनमेरे स्वामी, भव्य जिवांरो निस्तार करयो ॥ भो. ॥ माता मुक्त पिता देवगतीमें, धन २ वां धन स्वाम जण्यो ॥ भो. ॥ फागण बदि एकमके दिवसे सर्व ग्यान जिनराज वरयो ॥ भो. ॥ तीन लक्ष अर्जा गुणाखानी, नित उठ ध्यान सुजान धरो ॥ भो. ॥ सहस्त्र चोरासी संत सुग्यानी, दर्श प्रभुजीको नित्य वरो ॥ भो. ॥ गणधर चोरासी प्रभुजीके आगल, मुक्तपु-

रीमें डेरो करचो ॥ भो. ॥ लिखमो सु-
राणो नित्य रटे प्रभु, सत्य गुरुके ए सर्ण
लियो ॥ भो. ॥ इति ॥

॥ अथ अजित जिन स्तवन ॥ राग टप्पो ॥

बिजे स्वामकुं हमारी बंदनारे ॥ अ-
जितनाथकुं हमारी बंदनारे ॥ ए आंकणी ॥
भवदुख भंजन स्याम निरंजन तोडत
कर्मनां फन्दनारे ॥ बी. ॥ नगरी अयोध्या
पीता जितशत्रु, जन्में आप जिनंदनारे
॥ बी. ॥ मात विजयादेनें उदरे उपना, प्र-
भुजी आप दिनंदनारे ॥ बी. ॥ नक्षत्र
रोहणी रास वृषभकी, सोवर्ण बर्णे अंगनारे
॥ बी. ॥ बहोतर वर्ष लख आउखो पायो,

जिन घनस्याम सुरिंदनारें ॥ वी. ॥ संसार सागर असार जानके, लिनो संयम सुभ मनारे ॥ वी. ॥ माहा बदि नवमी दिवस भलेरो, दिक्षा ली जिनंदनारे॥ वी.॥ सप्त वणाके निचे बैठा, ग्यान पायो जिन पंचमारे ॥ वी. ॥ गणधर निनाणु एक लख साधु, तीन लख आर्जा बंदनारे ॥ वी. ॥ पीता ईशानकल्पनी मांही, माता मुक्त सुभमनारे ॥ वी. ॥ लिखमो सुराणो ध्यान धरे प्रभु, निचो सीस निवायतारे ॥ वी. ॥ इति ॥

॥ अथ संभवाजिन स्तवन ॥ राग खंभाच ॥

वतादे सखी कोन गली गयो स्याम

॥ ए देशी ॥ सुगण जिन तीजो जिने-
स्वर स्याम ॥ ए आंकणी॥ मिंगसर सुक्क
जन्म पडवाने, सावछी नगरी गांव ॥ सु. ॥
पीता जितारथ माता सेन्याजन, उन्हीको
नंदलाल ॥ सु. ॥ साठ पूर्व लख आउखो
जिनको, संभव थाहरो नाम ॥ सु. ॥ पर-
णोडा परवार सहस्त्रो प्रभु, मेरो तोय चर्णा
चीत ध्याम ॥ सु. ॥ दिक्षा असार संसार
जाणली, जगको छोडयो कांम ॥ सु. ॥
एकसो दोय गणधर प्रभु आगल, सबही
गुणको ठाम ॥ सु. ॥ लाख पूर्व लग सं-
यम पालो, तप बारे सिधान ॥ सु. ॥
पन्द्रह सहस केवली प्रभु आगल, पांचु

ग्यान निधान ॥ सु. ॥ केवल पाम्यो प्रभु
अतिय हर्ख मोय, साल वृक्ष निचे ग्यान
॥ सु. ॥ मात पीता प्रभु मोक्ष सिधाये
तोरा, धन उनको नाम ॥ सु. ॥ लि-
खमो भजनकरे प्रभु तोरा, राजगढहे
गांम ॥ सु. ॥ प्रभु भजनकर अतिय ह-
र्खसु, मनवंछित हो काम ॥ सु. ॥ असाढ
सुकल बारसके दिन, प्रभुगुण किनो ग्राम
॥ सु. ॥ इति ॥

॥ अथ अभिनंद जिन स्तवन ॥

रामचंद्र जब युं उठ बोले, डिगो मो-
रचो ह्मारो ॥ ए देशी ॥ प्रभुका दर्स लगे
मोय प्यारो ॥ ए आंकणी ॥ चवन वैशाख

सुक्क चोथने, अयोध्या नगर मंझारो ॥ कर जोडीके वीनवुं प्रभु, मे चाकर चर्णा-रो ॥ प्रभु. ॥ पीता जितसंवर घरमोछ्व, प्रभुजी लियो अवतारो ॥ मात सिद्धारथ कीय कुखमे, अभेनंद कुमारो ॥ प्र. ॥ नक्षत्र पुनर्वस रास सिथुनकी, लंछन वंदर वारो ॥ पचास पूर्व लख आउखो जिनको, वीनतडी अवधारो ॥ प्र. ॥ राज अवसथा सुख भोगवे, सहस्रो जेना परवारो, संसार सागर असार जानके, लिनो संयम भारो ॥ प्र. ॥ माघ सुदि बारसने दिक्षा, अ-योध्या नगर मंझारो ॥ देव इंद्र सब मोहो-छव करते, धन २ थाहरो अवतारो

॥ प्र. ॥ वृक्ष प्रवालके निचे बेठा, पांचू ग्यान अधारो ॥ इणभव और परभवांमे, सर्णों चाहुं थाहरो ॥ प्र. ॥ एक लाख पूर्व लग संयम, चोथा जिनजी पाल्यो ॥ चोथा जिनका गुण गांवता, हर्षत हियो हमारो ॥ प्र. ॥ येकसो ईग्यारे गणधर बंदु, बारम्बार हजारो ॥ संत तीन लाख प्रभुजी आगल, गुणकी खान भंडारो ॥ प्र. ॥ सासण बडो मेरे प्रभुजीको, हर्षित हियो हमारो ॥ मोक्ष पहुंचे जग अलवेश्वर, तेतीस दिन संथारो ॥ प्र. ॥ नामे लिखमो आसमे, में चाकर चरणारो ॥ हाथजोडके करूं विनती, बारम्बार ह-

जारो ॥ प्रभु. ॥ असाढ सुक्ल तेरसके दिवसे, हुलसत हियो हमारो ॥ नोंहरे बेठा थका, किनो मंगलाचारो ॥ प्रभु. ॥ इति ॥

॥ अथ सुमति जिन स्तवन ॥

॥ राग स्याम कल्याण ॥

सुरत परवारी जाउ सुमती जिनंदा ॥ ए टेर ॥ मात सुमंगला पिता मेघराया, जिन जन्म्याहै नारिंदा ॥ सु. ॥ बैशाख सुक्ल अष्टमीनें जन्म्या, मोछ्वी किये देव-इंदा ॥ सु. ॥ रासी सिंघ केरो लंगन, राता वर्ण मुनिंदा ॥ सु. ॥ कंचन नगरी सुंदर दिपे अति, गोडी पंचम जिनंदा ॥ सु. ॥ बैशाख सुक्ल नवमीने दिक्षा ली, सेवकरे

सब वंदा ॥ सु. ॥ वृक्ष प्रिठांगुनाणा निचे केवल, हर्ख करतहै गणंदा ॥ सु. ॥ पांच लख तीस सहस्त्र आजीते, लख बीस स-हस्त्र संता ॥ सु. ॥ चैत्र नवमी शुक्ल मोक्ष सिधाये, तीन लोक हर्खंदा ॥ सु. ॥ माता मोक्ष पिता ईशाने, गुण गावे सब वंदा ॥ सु. ॥ चालीस पुर्व लख, आउखो जि-नको, महा मोटा सुरिंद्रा ॥ सु. ॥ लि-खमो कर जोडीने विनवे, वहोत हर्ख सुखकंदा ॥ सु. ॥ तोरा भजन करणं सेती प्रभु, हो शिवपुरका वासिंदा ॥ सु. ॥ इति ॥

॥ अथ पद्मजिन स्तवन ॥

छठा पद्म जनेस्वरास कोई, कोसंवी

नगरी गांव ॥ अच्छा म्हारा प्रभुजी, कोसंबी, कोसंबी. ॥ पुत्र घररायको ॥ में सीस निवाउं, हारे हां भलाजी प्रभु सीस निवाउं, समकित द्रढ करजो माहरी ॥ ए आंकणी ॥ मात सुचीमा चीत्र ठेस कोई, कन्या जिनकी रास ॥ अच्छा, कन्या. ॥ रातो रंग अंगको ॥ में० ॥ कातिक सुदि बारस नेस कोई, जन्म, अच्छा, जन्म लियो जिनराय ॥ बहु जीव त्यारबा ॥ में० ॥ मोछव करबा कराणेस कोई, आये अच्छा आये इंद्र देव ॥ हर्ख वहातो कियो ॥ में. ॥ कातिक बदि तेरसनेस कोइ, दिक्षा, अच्छा दिक्षाली जि-

नराज ॥ कर्म फंद तोडवा ॥ मे. ॥ सोम-
देव घर पारणोस प्रभु किनो, अछा किनो
स्याम सुग्यान ॥ अहार कियो खीरको
॥ मे. ॥ संयम साथे मुनिस्वरास कोई,
सहस्र, अछा सहस्र जना परवार ॥ दिक्षा
उन आदरी ॥ मे. ॥ छत्रा वृक्षके नियचे
कोई, केवल, अछा, केवल पायो जिन-
राज ॥ चैत्र शुक्ल उतरे ॥ मे. ॥ सठोत्र
सौगणी जिनवर आगेस कोई, सोहत,
अछा, सोहत हे महाराय ॥ सिवपुर पा-
मिया ॥ मे. ॥ तीन लाख तीस सहेस संत
कोई, हर्दम, अछ, हर्दम खातिर वास ॥
ध्यान तुमरो घरे ॥ मे. ॥ चो लख वीस

सहेस साधवी, प्रगट, अहा, प्रगट तपे सुग्यान ॥ सिंघ ज्युं गुंजता ॥ मे. ॥ सिद्ध गमण परवार आठसे. त्रण, अहा, त्रण मुनिस्वर साथ ॥ अंतर निज आपका ॥ मे. ॥ मिंसगर कृष्ण ईग्यारसनेस कोई मोक्षे, अहा, मोक्ष पहुंचे जिनराय ॥ नवी समझायके ॥ मे. ॥ इशान पिता माता मोक्षहीस कोई, वंश, अहा, वंश ईक्ष्वांगे नाथ ॥ वन्दु कर जोडने ॥ मे. ॥ तीस लाख पूर्व आउखोस कांई घनघन, अहा, घनघन महा घनस्याम ॥ वंदु जिनरायने ॥ मे. ॥ केवल नाणी बारा सहस कोई गिणाती, अहा, गिणातीयेस गिणाय ॥

जिव बहू तारीया ॥ में. ॥ एक लख पूर्व सोलेहीस कोई, दिक्षा, अहा, दिक्षा ली जिनराय ॥ पैय लिखमाँ नणे ॥ मं. ॥ जात सुराणो ओसवंस कोई, तोय, अहा, तोय चर्णा चित ध्याम ॥ रहुं चित लाय-के ॥ में. ॥ सावण सुक्क पडवायनेस कोइ, घरे, अहा, घर बेठे गुणग्राम ॥ हर्ख चित मायके ॥ मं. ॥ इति ॥

॥ अथ सुपार्श्वनाथ जिन स्तवन ॥

मन विंदराविंद चाल वसोरे, मानतो घटो चाहे लोग हंसोरे ॥ ए देशी ॥ मन सुपार्श्वनाथ नजोरे, हर्ख धरो मनरलीयां करोरे ॥ ए आंकणी ॥ जेठ शुक्क वारस-

न जन्मया, देव इंद्र मोछवजो कियोरे ॥ मन. ॥ देवी इंद्राणी गावे बजावे, हर्खकरे मन चाव घणोरे ॥ मन. ॥ पिता प्रतिष्टराय घरमोछव प्रश्वी, रयरंन्न मात जएयोरे ॥ मन. ॥ बणारसी नगरीमें मंगल गावत, नरनारी सब हर्ख करयोरे ॥ मन. ॥ नक्षत्र विशाखा स्वस्ती लंछन, अंग स्वर्णके रंग थयोरे ॥ मन. ॥ दोयसो धनुष काया प्रभुजीकी, बीस पुर्व लख आउखोरे ॥ मन. ॥ परणोडा परवार सहस्त्रो प्रभु, राज करयो बहु सुख दियोरे ॥ मन. ॥ संसार सागर असार जाणके, दिक्षा ली प्रभु हर्ख करोरे ॥ मन. ॥

एक सहस्र मुनी साथ निकला, त्रण
लख साधु ग्रंथ नणोरे ॥ मन. ॥ पीता
गमन इशान देवता, माता मुक्तपुरी जो
वरीरे ॥ मन. ॥ एक पुर्व लख दिक्षा
पाली, आखिर सिवपुर डेरो करयोरे
॥ मन. ॥ लिखमो अर्जकरे करजोडी,
नव नव सर्णा चाहूं तोरोरे ॥ मन. ॥
श्रावण शुक्ल छट दिवस, घर वेठ नजन
करयोरे ॥ मन. ॥ इति ॥

॥ अथ चंद्रजिन स्तवन ॥ राग ठुमरी ॥
प्रभु गुण गाउंगा मैं जिनवर गुण
गाउंगा ॥ रवि परवारी मैं चंद्र प्रभु ध्या-
उंगा ॥ छवी परवारी. ॥ ए आंकणी ॥

चैत्र कृष्ण पंचम चवन विमाना ॥ ध्यान धरत मैंही हरखाउंगा, मेही हरखाउंगा ॥ मैं प्रभु. ॥ पीता महासेन माता लक्ष्मणा ॥ जिनके चर्णावीच, सीस निवाउंगा ॥ सीस. ॥ मैं. ॥ लंछन चंद्र वृश्चीक रासी ॥ स्वेतवर्णा, देखत हरखाउंगा ॥ देखत. ॥ मं प्रभु. ॥ काया धनुष प्रभु डोडसे कहिये ॥ हरख करी प्रभु तुम गुण गाउंगा ॥ तु. ॥ मैं प्रभु. ॥ दस लख पूर्व आउखो जिनको ॥ मैं तोय चर्णा वीच ध्यान लगाउंगा ॥ ध्यान. ॥ मं प्रभु. ॥ पोह कृष्ण तेरसनैं दिक्षा ॥ करजोडीके तुम पद गाउंगा ॥ तु. ॥ मैं प्रभु. ॥ मीष्ट

भोजन प्रभु पारणो किनों ॥ सोमदत्य
कहे खिर बहराउंगा ॥ खी. ॥ में प्रभु. ॥
फागुन कृष्ण सप्तम केवल ॥ मोछव करत
महाजन साहुंका ॥ महा. ॥ में प्रभु. ॥
नाग वृक्षके निचे केवल ॥ महासेन कहे
दर्सन पाउंगा ॥ द. ॥ में प्रभु. ॥ गणधर
त्रण और नवे कहिये ॥ संत अढी
लख नित्य उठ घ्याउंगा ॥ नित्य. ॥
॥ में प्रभु. ॥ अस्सी सहस्त्र त्रण लख
साधवी ॥ मन वच सुध्धकर सिस निवा
उंगा ॥ सी. ॥ में प्रभु. ॥ जादव कृष्ण
सप्तम मोक्ष ॥ चन्द्र प्रभुके चर्णा चीत
लाउंगा ॥ चर्णा ॥ में प्रभु. ॥ माता मोक्ष

पीता गमन ईशाने ॥ हर्ख धरी प्रभु तुम पद पाउंगा ॥ तु. ॥ में प्रभु. ॥ देढ पुर्व लख संयम पाल्यो ॥ सीद्ध थया प्रभु को मन ध्याउंगा ॥ को. ॥ में प्रभु. ॥ लिखमो पैय हर्ख घर गावे ॥ गुर पुज्य डालकुं सीस निवाउंगा ॥ सी. ॥ में प्रभु. ॥ इति ॥

॥ अथ सुबुधिजिन स्तवन ॥

सुबुधि जिनंदन सुबुधिके दाता ॥ कुबुधि उवारण तुही विधाता ॥ ए आंकणी ॥ सुबुधि जनेस्वर सुबुधिके वंदन, सुग्रीव राय तणो तुं नंदन ॥ लंछन मगर रास जो धनकी, रामादे जो माता ॥ सु. ॥ दोय लक्ष पूर्व आउखो, स्वेत

वर्ण नगरी काकंदी ॥ मिगसर कृष्ण पं-
चमीने जन्म्या, मंगल गावे राणी इंदकी
॥ घररररररर गर्जत बादल इंद्र मेह व-
र्षाता ॥ सु. ॥ मिगसर कृष्ण छ्ठने दिक्षा,
सिवपूरकी बांदी पावंदी ॥ कातिक सुक्ल
तीजने पाचुं, ग्यान थये जिनवरजी ॥
फररररररर ध्वजा तीन लोक हरखाता
॥ सु. ॥ गणधर अठयासी दोय लख साधु,
तपे महा मुनीराई ॥ एक लख वीस स-
हस्र आर्जा, वंदत हर्ख अथाई ॥ हरररररररं
हाथ जोडता निचो सीस निवाता ॥ सु. ॥
भाद्रव सुक्ल नवमीने मुक्ती, गये नवां जि-
नराई ॥ संतकुमर देवी जो देवता, मात

पीता गति पाई ॥ हररररररर हर्ख करूं में मन वच सुद्ध गुण गाता ॥ सु. ॥ लिखमो सुराणो ओसवंसमें, पूज्य चर्ण चितलाई ॥ भव भव में हुं सर्णा चाहूं अर्ज सुणो मुनीराई ॥ तन मन दिल और हुलसे हिवडो, घर बेठे गुण गाता ॥ सु.॥ श्रावण कृष्ण एकादसीके दिन, हर्ष हर्ष गुण गाई ॥ बादलकेरी गाया बेठा जिन चर्णा चितलाई ॥ सु. ॥ इति ॥

॥ अथ सीतलजीन स्तवन ॥

सीतलजिन सीतल थये प्रभु, में चाकर चर्णकेरा ॥ ए आं. ॥ सोवण वर्णा सरीर तुम्हारो, रूप अनुपम हे तेरा ॥सी.॥

भहिलपुर जोये नगर तुम्हारा, बालप-
णाका हे डेरा ॥ सी. ॥ माघ कृष्ण द्वा-
दसने जन्म्या, हर्ख करतहे वहोतेरा ॥सी.॥
इंद्र देव आये भहिलपुरमें, मोछव करवाकुं
तेरा ॥ सी. ॥ छपन कुंवारी मंगल गावे,
हर्खतहे हिवडा मेरा ॥ सी. ॥ इति ॥

दसवां जिनंदजीसे प्रीत लगीहे, नित
समर्‌यां सुख दायाजी ॥ ए आ. ॥ भव-
दधि तारण दुख निवारण जिनचर्णा
चितलायाजी ॥ द. ॥ मात नंदापुत्रा
पीता दिढरथ जन्म्या त्रीलोकी रायाजी
॥ द. ॥ वाजा अनेक रंगका वाजे हर्ख
अंग नहीं मायाजी ॥ दस. ॥ रासी ध-

नकी श्रीवच्छ लंछन नवे धनुषकी काया-
जी ॥ द. ॥ संसार सागर असार जा-
णके खोटी जानी जग मायाजी ॥ द. ॥
माघ कृष्ण छठने दिक्षा असोक तरुलकी
छायाजी ॥ द. ॥ करजोडीके करूं विनती
सर्ण तुम्हारी आयाजी ॥ द. ॥ गणधर
वियासी एक लख साधु विहार निर्वद
गुण गायाजी ॥ द. ॥ एक लख खट स-
हस्त्र आर्जा सबकुं सीस निवायाजी ॥ द. ॥
पोष कृष्ण बिलवके निचे ग्यान पंचमा
पायाजी ॥ द. ॥ माता पिता संतकुमर
देवता सुर्ग सुखांके माहांजी ॥ द. ॥
वैशाख कृष्ण दुजके दिवसे मोक्ष गये

जिनरायाजी ॥ द. ॥ लिखमो सुराणो ओस वंसमें जिन चर्णा चित लायाजी ॥ द. ॥ घर बेठे में प्रभु गुण गाया हर्ख अंग नहीं मायाजी ॥ द. ॥ आसोज कृष्ण दुजके दिवसे सितलना गुण गायाजी ॥ द. ॥ अरिहंत सिद्ध पुज्य सासणकुं वारंबार सीस निवायाजी ॥ द. ॥ इति ॥

॥ अथ श्रेयांसजिन स्तवन ॥ राग बसंत ॥

श्रेयांस जनेस्वर जग परमेश्वर, वीष्णु रायरो नंदनोए ॥ श्रे. ॥ फागुण कृष्ण बारसकुं जन्म्या, उदरे तो विष्णवी राणीरे ए ॥ श्रे. ॥ चोसठ इंद्र और देव सवी मील, मेरूगिरीपे ले गयेए ॥ श्रे. ॥ मो-

छत्र कियो व्हां अतिय हर्खसुं, अनाद कालकी रीतियाए ॥ श्रे. ॥ छपन कुंवारी मंगल गावेहो, हर्ख मनु देव इंदहीए ॥ श्रे. ॥ सिंहपुर नगरमें जन्म प्रभुको, वंस ईक्षांकु अवतराए ॥ श्रे. ॥ श्रवण नक्षत्र प्रभुजी केरो, लंछन गेंडे वारोईए ॥ श्रे. ॥ वर्ण सोवर्णसो रूप अनंतो वलतो अनंत अथायोईए ॥ श्रे. ॥ अस्सी धनुष देह प्रभुजीकी, राज करत जिनरायोए ॥ श्रे. ॥ सुख संसारका असार जानके, आदर्यो संयम सारोईए ॥ श्रे. ॥ सहस्र सूर संयम साथे लिना, फागुण अंधेर त्रीयोदसीए ॥ श्रे. ॥ सतहतर गणधर संत चोरासी

सहस, अर्जा एक लख त्रण सहसए॥ श्रे.॥ माघ अमावस केवल पायो प्रभु, तिंदु वृक्षने हेठेइए ॥ श्रे.॥ चोरासी लक्ष वर्षनी उमर, पाई श्रेयांस जनेस्वराए ॥ श्रे. ॥ श्रावण तीज कृष्ण पक्षमें, मोक्ष गये जिनरायाए ॥ श्रे. ॥ मात पिता संतकुमर जो कुमरी, देवगतीके माह्या जोए॥ श्रे.॥ लिखमो सुराणो ओस वंसमें, सर्ण लियो प्रभु थारोईए ॥ श्रे.॥ आसोज कृष्ण चोथके दिवसे किनो मंगलचारोईए ॥ श्रे. ॥ इति ॥

॥ अथ वासुपूज्य जिन स्तवन ॥

मित्र नहीं हंसो थारो ए सुंदर माहरी

॥ ए देशी ॥ म्रज वासुपुज्य निजरायो ए सुगण सखी ॥ म्रज. ॥ ए आंकणी ॥ जयवंती सुत बारमो जनेस्वर, तात वासपुज्य रायो ॥ चवदस फागुण कृष्णाने जन्मा, त्रिलोकीरो रायो ए ॥ सु. ॥ म्र. ॥ चंपा नगरीको राय सुहामण, बारमोछे जिनरायो ॥ इंद्र देव सब मोछव किनो, मंगल गावे नरनारोए ॥ सु. ॥ म्र. ॥ छपन कुंवारी मंगल गावे, माताके हर्ख अपारो ॥ तात वासुपूज्य बाटत बधाइ, घरघर मंगलचारोए ॥ सु. ॥ म्र. ॥ लंछन महिख देह राते रंग, रूप अनंता पिछानो ॥ सतर धनुषकी देहीजो उंची गुण अनंता जानोए

॥ सु. ॥ न. ॥ लक्ष बहोतर वर्षकी आयु, पाइबे जिनरायो ॥ करजोडीके करूं जो बिनती, हर्ख अंग नहीं मायोए ॥ सु. ॥ ॥ न. ॥ संसार सागर असार जानके, आदर्यो संयमसारो ॥ छत्रसो मनु जिन साथ थयेहे, संयम ले प्रभु लारोए ॥ सु. ॥ ॥ न. ॥ माघ सुक्ल दुजके दिवसे, पाडल वृक्ष निचे आये ॥ केवल पायो अतिय हर्ख मोय, मोछव किये इंदरायोए ॥ सु. ॥ उणंतर गणधर जिनजी आगे, बहोतर सहंस मुनीरायो ॥ एक लक्ष आर्जाकु ध्याउं, सबकुं सिस निवायोए ॥ सु. ॥ मात पिता संतकुमर जो कुमरी, देवगतिके माहो

॥ आगंतर वे मोक्ष सिधासी, धन २ थे जिन जायोए ॥ सु. ॥ लिछमो सुराणो ओस वंसमें, जिन चर्णी चित लायो ॥ गुर पुज्य डालजीक्षुपट ससम, छुल छुल सिस निवायोए ॥ सु. ॥ न. ॥ इति ॥

॥ अथ बिमल जिन स्तवन ॥

भजो क्युंनी राधा कृष्ण, फेर पछ-तावोगे ॥ ए देशी ॥ भजो क्युंनी वि-मल जिनंदकुं, फेर पछतावोगे ॥ ए आं. ॥ पांचाल देश कंम्पीलपूर नगरी, राय तणे गुण गावोगे ॥ गुणतो गायेसे वंदा, पार लंघ जावोगे ॥ पा. ॥ जी पा. ॥ न. ॥ माघ सुक्ल तिजके दिवसे, जन्म प्रभुने

पायाहेजी ॥ प्रभु गुण गाता वंदा, शिव सुख पावोगे ॥ सी. ॥ जी सीव. ॥ भ. ॥ इंद्र देव सब मोछव करके, माता संग सुलायाहेजी ॥ एण जिनंदने भजता वंदा सम्कित पावोगे ॥ स. ॥ जी स. ॥ भ. ॥ पीता कृतवर्म माता स्यामा वंश ईक्ष्वाकु थायेहेंजी ॥ एणे जिनंदने भजता वंदा, सुद्धगति जावोगे ॥ सु. ॥ जी सु. ॥ भ. ॥ छपन कुंमारी मंगल गाये, नाथ त्रिलोकी जायेहेंजी ॥ वीमल जिनंदकुं भजता कर्म खपावोगे ॥ क. ॥ जी क. ॥ भ. ॥ वाराह लंछन साठ धनुष्की देह, जिनवरने पाइहेंजी ॥ एणे जिनंद भजता, मुक्त सि-

धावोगे ॥ सु. ॥ जी सु. ॥ न. ॥ स्वर्ण
वरणों सरीर बल और, रूप अनंत अ-
थायोहेंजी ॥ भजन करेसु अवागमन
मिटावोगे ॥ अ. ॥ न. ॥ संयम लिनो
सहस्त्र जनासु, यह संसार असारोहेजी
॥ धन्य जो मेरे नाथा, पार लंघावोगे
॥ पा. ॥ न. ॥ पोह सुक्क छठके दिवसे,
केवल जिनंदा पायोहेजी ॥ केवल पाये
वंदा, सिवपूर जावोगे ॥ सी. ॥ न. ॥
सत्तावन गणधर आगे, धर्म देव सिख
रायहेंजी ॥ अडसठ सहस्त्र साधु, नित
उठ ध्यावोगे ॥ नि. ॥ न. ॥ एक लक्ष
आठसो श्रमणी, गुणकी खान भंडारो-

हैंजी ॥ कर्म तुटणका रसता, गुर पासे पावोगे ॥ गु. ॥ जी गु. ॥ न. ॥ लिखमो सुराणो ओस बंसमें, जिनजीके गुण गायेहेंजी ॥ धर्म देवकुं भजता, अमरगति पावोगे ॥ अ. ॥ जी अ. ॥ न. ॥ आसोज कृष्ण दुजके दिवसे, घरबेठे गुण गायेहेंजी ॥ सर्णतो गुरके जाता, मुक्ती पावेगे ॥ मु. ॥ जी मु. ॥ न. ॥ इति ॥

॥ अथ अनंतनाथ जिन स्तवन ॥

मेरे गिरधारीजीसें कोनसी लडी ॥ ए देशी ॥ अनंत जिनंदजीसें विनतडी हैसो अनंत जिनंद ॥ ए आ. ॥ नगरी अयोध्या देव रमणसिम, ओपम

बहुत बडी ॥ चवन कल्याण श्रावण कृष्ण सप्तम, नक्षत्र चव रेवती ॥ हैसो प्र.॥ तात सिंहसेन मात सुजसा, संत कुमार गती ॥ जन्म लियो प्रभुजी इण घरमें, तेरस वैशाख वदी ॥ है. ॥ एकसो अस्ट जल कलस पखाली, चोसठ इंद्र देवही ॥ नरनारी सब मंगल गावे, त्रिहुं लोक हर्ख धरी ॥ है. ॥ वंश इक्ष्वांकु राज भोगव्या त्रिहूं ग्यान गर्व धरी ॥ चवदे स्वपन प्रभुनी माता जो देख्या, कह्यो पती आपणेकूंही ॥ है. ॥ लंछन सिंचाणो वर्ण सोवरणसो, अनंत गुण अनंत बली ॥ एक सहस्र अस्ट गुण दिपे, धन धन्य

स्याम धनी ॥ है. ॥ संसार सागर अ-
सार जानके, संयम नेहधरी ॥ बैशाख
कृष्ण चवदसके दिवसे, संयम सुख वरी
॥ है. ॥ एण तिथीमें केवल पायो, पक्ष
मास एहीजही ॥ अश्वस्थ वृक्षके निचे
बैठा ग्यानी, थये जिनजी ॥ है. ॥ तीस
वर्ष लख आयुजो पाइ, गणधर आघ-
सोही ॥ चैत्र कृष्ण सात्युंके दिवसे मोक्ष
गये जिनजी ॥ है. ॥ छासठ सहस्त्र संत
जिन आगे, गुण निधान वरी ॥ वासठ
सहस्त्र श्रमणी जिन आगे, धन २ ध्यान
धरी ॥ है. ॥ लिखमो पैय जणे घर बेठे,
धन २ नाथधनी ॥ मे हुं दीन तुमजो

दयाला, अधम उंधारणही ॥ है. ॥ आ-
सोज कृष्ण अस्टमीके दिन, दर्वाजेके
माही ॥ लुल २ वंदन करूंजो स्वाम मै,
सुनो प्रभु विनतडी ॥ है. ॥ इति ॥

॥ अथ धर्मजीन स्तवन ॥ राग पीलू ॥

धर्म जिनंद प्रभु धर्मके धोरी, आय
लियो अब सर्ण में तेरो ॥ ध. ॥ माघ
सुक्ल तिजनें जन्म्या, मोछव देवा कियो
घनेरो ॥ ध. ॥ मात सुब्रता पुष्प नक्षत्र,
तात भानु राजा थयो तेरो ॥ ध. ॥ पे-
तालीस धनुषकी देही आउखो दस लख
वर्षांही केरो ॥ ध. ॥ सोनो वर्णों सरीर
प्रभुको, अनंत रूप अंग सोभत तेरो

॥ ध. ॥ संसार सागर असार जानके, संयमसुं नेह किनो नेडो ॥ ध. ॥ माघ सुक्क तेरस दिक्षा ली, लोच कर्यो पंच मुष्टीया केरो ॥ ध. ॥ दहीवन वृक्षके निचे बैठा, साध संतको वृन्द भलेरो ॥ ध. ॥ पोह पून्युं दिन केवल पाम्यो, चंवर ढुलत और हर्ख वहुतेरो ॥ ध. ॥ जेठ सुक्क पंचमीके दिवसे मोक्ष, पहुंचो स्याम है मेरो ॥ ध. ॥ गणधर पेतालीस चोसठ सहस्त्र साधु, मैं चाकर चर्णाही केरो ॥ ध. ॥ मात पीता संतकुमारजो, कुमरी परभव सिवपूर होयसी डेरो ॥ ध. ॥ हाथ जोड प्रभु विनती करतहुं, भव २ सणों चाहुं

तेरो ॥ ध. ॥ आसोज सुकल वारसकेदिवसे, वीनवें लिखमों दासहै तेरो ॥ ध. ॥ इति ॥

अथ सांतिजिन स्तवन ॥ राग कव्वाली ॥

वांकी कबान वाले २ ॥ ए चाल ॥

जिनंद गुण गाले २ प्रभुके गुनानुं गाले ॥ ए आं. ॥ सांति सुभान सोलवा जिनंदहे, स्वाम धर्मके उध्योतकुं ॥ पेर देने वाले २ ॥ जि. ॥ भादव मास कृष्ण पख तीथि सप्तमें, जन्मे जो धर्मकुं ॥ उध्योत करने वाले २ ॥ जि. ॥ हथणायपूर नगरमें हे, जन्म वास रंग सोवर्णसो ॥ अनंत रूप वाले २ ॥ जि. ॥ अचराके नंदनं अश्वसेन तात, गति संत कुमारही ॥ दोनुं

पाने वाले २ ॥ जि. ॥ चालीस धनुष देही हे आत्मगुल, आय एकलक्ष वर्षकी ॥ उमर पानें वाले २ ॥ जि. ॥ जेष्ट बदि चवदस दिनके माह संसारकु असार जान ॥ दिक्षा लेने वाले २ ॥ जि. ॥ पोष सुदि नवमी नंदिकी छांह केवली थये भवी ॥ जीव तारण वाले २ ॥ जि. ॥ गणधर छतीसिहे वासठ सहस्त्र साधु इकसठ सहस्त्र साध्वी ॥ वहुत गुणवाले २ ॥ जि. ॥ लिखमो सुराणो ओस वंस राजगढ माह प्रभुके ॥ चर्णकुं नित्य नमनेवाले २ ॥ जि. ॥ इति ॥

॥ अथ कुंथुजिन स्तवन ॥

धन २ नेम नाथ भगवान्न पशुके वंद

छुडाने वाले ॥ ए देसी ॥ धन २ कुन्थु नाथ जिन राजजी ॥ शिवपूर पहुंचाने वाले २ ॥ सिद्धगतिके देने वाले ॥ धन. ॥ ए आ. ॥ तात थये सुरराय, माताहे श्रीनाम, वंदि चउदस वेशाखमें, जन्म धराने वाले ॥ध.॥ गजपुर सहर सुभान कुन्थु देस महमान, तीस धनुष देही जान ॥ धन भवीयन तारन वाले ॥ धन. ॥ लंछन बकरो जान, स्वर्ण वर्णी स्यान ॥ वेशाख पंचमी माह, प्रभु दिक्षा लेने वाले॥ धन. ॥ तिथि नवमी सुभ बार, सुद्ध चैत्र मासके माह ॥ तिलक तणीजो छांह, जिन केवल पानेवाले॥ ध.॥ संत सहस्त्रहे साठ, श्रमणी छेसे उपरांत ॥

गणी पेंतीस सुग्यान, धन जो सासण-के रखवाले ॥ धन. ॥ रात्री थये निर्वाण, पडवा वदि वेशाख ॥ प्रभु महामोटा गु-नखान, तुम मुक्ती देनेवाले ॥ धन. ॥ लि-खमो सुराणो नाम, ओस वंसके माह ॥ मोहे गुरू मीले गण स्वाम, तुमके गुण गानेवाले ॥ धन. ॥ इति ॥

॥ अथ अरिजिन स्तवन ॥

कहां तेरे कानका मोती, कहांवे जा-तका गोती ॥ ए देसी ॥ अरि जिन स्वाम तुं मेरा, सर्णमें आ लिया तेरा ॥ हथणापूर नगर हे भारी, जन्मे अरि स्वाम अवतारी मिंगसर सुदि दसमीकुं जन्मे, देव इंद्र

आगये छिनमें ॥ सुदर्सन रायहें, रेवती देवी है माता ॥ तीस धनुषकी देही, वर्ण स्वर्णके सेही ॥ संसार असार जाणयो हे, दिक्षा ली वैराग आण्योहे ॥ कार्तिक सुदि दवादसी माही, आम्रवृक्ष हेठे थे सांइ ॥ केवल पावियो जिणराया, देव इंद्रादि हरखाया ॥ मिंगसर सुदि छठ तीथी मांही, सिवपूरमें जा रहे सांइ ॥ पीता महेंद्रही देव, मात सुद्धगातिकी सेव ॥ तेतीस गणधर सुग्यान, सुक्त पहुंचे ठामहमान ॥ पचास जो सहस्त्र संतनहें, आर्जा साठ सहस्त्रहीहे ॥ लिखमो प्रभुके ये गुन गाता, नित्य उठ गुरकुं ध्याता ॥इति॥

॥ अथ मल्ली जिन स्तवन ॥

अटारियांपे गिरयोरे कबूतर आधी-रात ॥ ए देशी ॥ मल्ली जिन वंदु हाथ जोरीके सिसनायरे ॥ ए आं. ॥ पीता कुंभराजा राणी प्रभावती माय ॥ म. ॥ इस्त्रीलिंग पायो लंछन कलसको थाय ॥ म. ॥ नील वर्ण प्रभुको पचीस धनुष-की काय ॥ म. ॥ मिगसर सुदि इग्या-रस अश्वनी जन्म कहाय ॥ म ॥ मोछव करवानें देव इंद्र गये आय ॥ मल्ली. ॥ मंगल बहु गावे छपन कुंमारी नरनार ॥ म. ॥ नगरी प्रभु मिथुला देश पायोहे विदेह ॥ म. ॥ सुदि माघ इग्यारस दि-

कालो जिनराय ॥ म. ॥ एण तीथि एण मासे केवल पायो मुनिराय ॥ म. ॥ गणधर अठाविस चालीस सहस मुनिराय ॥ म. ॥ पीचपन सहस श्रमणी नित्य उठीके ज्यो ध्याय ॥ म. ॥ पीचपन सहस वर्षां उमर पाइगे जिनराय ॥ म. ॥ निर्वाण थये जिन फागण दवादसी माह ॥ म. ॥ लिखमो तुमं ध्यावे नित्य उठ जिन गुण गाय ॥ म. ॥ इति ॥

॥ अथ मुनीसुव्रत जिन स्तवन ॥

अस्सी धमक पर खेल मन मोयला, जुगमें जिवणा थोडाजी ॥ ए देसी ॥ त्रिसवा जिनंदजीनें ध्याय मन मोयला, जी-

वनें कर्म दवायाजी ॥ ए आं. ॥ पीता सुमीत्र मात पद्मावती जिनकी कुके जाथाजी ॥ रंग बधावा बंटत अनंता मोछव बहोत करायाजी ॥ बी. ॥ जष्ट कृष्ण अस्टमीके दिवसे जन्म जिनंदने पायाजी ॥ मगध देश राजग्रही नगरीमें मोछव होत सवायाजी ॥ बी. ॥ इंद्रदेव सब मोछव करते नरनारी हरखावेजी ॥ छपन कुंवारी मंगलगावे बाजा अनेक बजावेजी ॥ बी.॥ वीस धनुस काया प्रभुजीकी आत्मगुणें बतायाजी ॥ लंछन काछवो स्याम वर्ण जिन रूप अनंत अथायाजी ॥ बी. ॥ सबी सुखानें असार जानके संयम आ-

दर लायाजी ॥ फागुण सुक्क द्वादसीके दिन दिक्षा ली जिनरायाजी ॥ वी. ॥ फागण कृष्ण द्वादसीके दिन चंपक निचे आयाजी ॥ केवल पायोहे जिनंदजी देव इंद्र हरखायाजी ॥ वी. ॥ गणधर अठारे संत तीस सहस सबकुं सीस निवायाजी ॥ मात पीता महेंद्र गतिमें, दुजे भव सुखदायाजी ॥ वी. ॥ जेष्ठ वदि नवमीके दिवसे मोक्ष गये जिनरायाजी ॥ लिखमो सुराणो हाथ जोडके वारबार सीस नायाजी ॥ वी. ॥ आसोज कृष्ण नवमी दुजीकुं जिनपद घरमें गायाजी ॥ सप्तम पाट नंद्धि गनीकेरे डाल अग्या सुख

दायाजी ॥ वी. ॥ इति ॥

॥ अथ नमि जिन स्तवन ॥

भजनतो बनता नाहिंश्रो जिवरो सेलानी ॥ ए देसी ॥ नमि जिन भजले भाईरे मुक्त निशानी ॥ ए आं. ॥ मात तो प्रभुजी केरी वीप्रा जो रानी ॥ वीजे नृप तात जिनको जिनघर ज्यानीरे ॥ न. ॥ श्रावण कृष्ण अष्टमी जन्मेहें सवामी ॥ देश तो विदेह कहिये मथुरा महमानीरे ॥ न. ॥ नरनारी इंद्र देवा हर्खे सुग्यानी ॥ छपन कुंवारी मंगल गावे मधुर वानीरे ॥ न. ॥ देह प्रभुजी केरी पंद्रह धनुपांनी ॥ राज पंच सहस वर्षां किनो

अंतरजामीरे ॥ न. ॥ दिक्षा तो लिनी प्रभुजी छांडे कुटंब रानी ॥ वर्षी तो दान दिनो सवी अंतरजामीरे ॥ न. ॥ बकुल वृक्ष नीचे आयेहें स्वामी ॥ माघ इग्या-रस सुक्क थये पंचग्यानीरे ॥ न. ॥ सतरा तो गणधर जिनके गुणकी जोखानी ॥ संत तो वीस सहस्त्र सत्या एक चालीरे ॥ न. ॥ वेशाख कृष्ण दसमी स्वाम नि-र्वानी ॥ लिखमो प्रभुनें ध्यावे घनमेरे स्वामीरे ॥ न. ॥ इति ॥

॥ अथ रिष्टनेम जिन स्तवन ॥

तुम नेमनाथ भगवाना, अब कृपा मोपे लाना ॥ कर कंचन पार लंघाना ॥ तु. ॥

मात सिवादे जाया, कोइ तात समुद्रविजे राय ॥ सोरीपूर नगर सुहाना ॥ तु. ॥ श्रावण सुदि पंचमहमाना, जन्म्या जिन जग हुलसाना ॥ आये इंद्र देव और दाना ॥ तु. ॥ नरनारी वजंतर बजावे, गपन कुंवारी मंगल गावे ॥ सब हर्खत बालक स्याना ॥ तु. ॥ संख लंछन प्रभु केरो, में दास थयो प्रभु तेरो ॥ में बालक हुं नादाना ॥ तु. ॥ रंग स्याह प्रभुकेरो, वल रूप अनंतो तेरो ॥ धन्य स्याम मेरे सु-ग्याना ॥ तु. ॥ संसारना सुख विसारा, प्रभु लाग्या थानें खारा ॥ संयम ले गिर-र जाना ॥ तु. ॥ वेडसह्रम निचे आया,

अमावस्या दिवस सवाया ॥ आसोजा पं-
चम ग्याना ॥ तु. ॥ इग्यारह गणधर सोहे,
मुनी अठारे सहस मन सोहे ॥ महागु-
णकी खान सुजाना ॥ तु. ॥ जिन आप
थये निर्वाणों, श्रावण सुदि पक्ष प्रमाणो ॥
आठुंनें मोक्ष सिधाना ॥ तु. ॥ सब सर्ण
तुम्हारी चावे, लिखमों प्रभुका गुण गावे ॥
मेरी नाथा ओर निभाना ॥ तु. ॥ इति ॥

॥ अथ पार्श्व जिन स्तवन ॥

मत म्हीडो बिगाडे मेंहुं मथुराकी
कानां गुजरी ॥ ए देशी ॥ मत दिवस
गमावे पार्श्वजिन भजले पार उतारसी
॥ ए आं. ॥ मात वामादे तात अश्वसेन,

जन्म लियो जिनराई ॥ मन मोयल ॥ जन्म. ॥ देव इंद्र और देवी तो आइ मोछव करणें तांईजी ॥ मत. ॥ छपन कुवारी मंगल गावेजी, हर्खत सब नरनारी ॥ मन. ॥ ह. ॥ बणारसी नगरी अतिय सुहामणीहे देश काशीके माहीजी ॥ म. ॥ हस्त नवकी देह प्रभुजीकी बलतो अनंत अथाय ॥ म. ॥ व. ॥ रूप अनंतो नील वर्णहे वंश इक्ष्वांकु मांहीजी ॥ मत. ॥ पोष कृष्ण दसमीकुं संयम, आदारियो जिनराइ ॥ म. ॥ आ. ॥ चार ग्यान संयमकी वेल्या सब जिनवरके मांहीजी ॥ मत. ॥ धातकी द्रुम चैत्र कृष्णपक्ष, चोथ तिथि-

के माही ॥ म. ॥ चो. ॥ पांचु ग्यान निधान थये जिन महा मोटा जिनराइजी ॥ मत. ॥ दस गणधर प्रभुजीके तो आगल, बंदत हर्ख अथाई ॥ म. ॥ वं. ॥ सोला सहस्र संत जिनंदतणा वंदु मन चितलाइजी ॥ मत. ॥ मात पीता महेंद्र गतिमें, देव योनीके माही ॥ मन. ॥ दे ॥ सावण शुक्क अस्टमीके दिवसे आप थये निर्वाणीजी ॥ मत. ॥ लिखमो सुराणों ओस वंसमें, घर बैठे गुणगाये ॥ मन. ॥ घ. ॥ हाथ जोड पुज्य डालके सर्णे निवो सिस निवाईजी ॥ मत. ॥ इति ॥

॥ अथ बर्द्धमान जिन स्तवन ॥

काल्हे सखी ईन ठोर वंसुरी भुल वि-सारी ॥ ए देशी ॥ तात सिधार्थ राय मात त्रशलादे तिहारी ॥ चैत्र कृष्ण पक्ष मांह जन्म जो लिनो मुरारी ॥ नाम है वीर जिनंदनों प्यारे २ ॥ सबकोइ करते सेव ॥ कुंडलपूर पूर्व देशमें प्यारे २ ॥ जन्में हैंगे जिनेस ॥ वीनती मानिये हो जगनाथ ॥ ए ग्रां. ॥ इंद्र देव सब ग्राय महोछव किने जो भारी ॥ छपन कुंवारी नरनार मंगल गावत हर्ख धारी ॥ हर्ख करत तीहुं लोकमें प्यारे २ ॥ बांटे व-धाइ देव ॥ चोवीसमें जगनाथकी प्यारे २

॥ नित्य उठ करजो सेव ॥ वी. ॥ लं-
छन सिंघको जान रूप अनंत अपारी ॥
अनंत बली जगनाथ देह रंग सुवर्ण वारी
॥ हस्त सातकी देहीहै प्यारे २ ॥ वंदो नित
हमेश ॥ संसार असारही जानके प्रभु २
॥ संयम लियो जिनेस ॥ वी. ॥ साल
द्रुम निचे आय पंच ग्याना जो धारी ॥
वैशाख सुक्क पख दिवस दसमीं सुखकारी ॥
केवल पा मुक्ती गये प्यारे २ ॥ चोवीसमां
महादेव ॥ मात पीता स्वर्ग गये प्यारे २
॥ बारमां देवी देव ॥ वी. ॥ गणधर इ-
ग्यारे गुणखान मुक्त गयेहै निर्वानी ॥
संत चवदा सहस्र आर्जा छतीस हजारी ॥

केइयक मुक्तीमें गये प्यारे २ ॥ केइ और गतिया मांय ॥ रिखभो सुराणो ध्यावता प्रभु २॥ निचो शिश निवाय ॥वी.॥इति ॥

॥ अथ जिन वर्ण सुगण स्तवन ॥

धनष तोरन धर्न भज मन धनष तोरन धर्न ॥ ए देशी ॥ प्रम गुरको सर्न, भज मन प्रम गुरको सर्न ॥ ए आं. ॥ चंन्द्र सुबुधि दोय जिनका, सुक्ल उनका वर्न ॥ भ. ॥ पदम वासुपूज्य जिन तना, रक्त जिनका वरन ॥ भ. ॥ मल्ली पार्श्व नील वर्णो, वंदत जिनका चरन ॥ भ. ॥ मुनी सुव्रत रीष्ट स्याम रंगे, चर्न जिनका वंदन ॥ भ. ॥ सेस सोले नित्य वंदु, देह

कंचन वर्न ॥ भ. ॥ चोवीस जिनकी करत पूजा, भाव पूजा करन ॥ भ. ॥ सिध और आचारज उपाध्या, सर्व साधु वंदन ॥ भ. ॥ भिक्षु भारी रिष जै जस, मधव मांतीक वंदन ॥ भ. ॥ डाल गणी सोभै जिनंद जिम, लिखमो करता वंदन ॥ भ. ॥ इति ॥

॥ अथ उपदेसकी ढाल लिख्यते ॥

तुंही तुंही याद आवै दर्दमै ॥ ए देशी ॥

युंही २ कर्म बंधावे मुफतमें ॥ युं ॥ ॥ ए आं. ॥ वीर जनेसर भीन २ भाषी, साचा हाल सुनाया गोयमसे ॥ युंही. ॥ धर्म हेत जोय जीव हणै वे, नीच गतिकुं

जावे कर्मसे ॥ युं. ॥ पथर मंगाय तामीर करावे, जिव हणावे मंदिरसे ॥ युं. ॥ पृथ्वीकाय हण प्रतमा बणावे, केसर घसी लगावे चंदनसे॥ युंही. ॥ अपकाय हण सनान करावे, अछा तरह नुहावे जलनसें ॥ युंही. ॥तेउ काय हण धुपज खेवे, पीछे भोग लगावे फुलनसे ॥ युंही. ॥ खुले मुखवै तवन पढेवे, बाउ काय हणावै जिभनसे ॥ युही. ॥ छउं कायाका चुर करैया, मुर्ख पुजा रचावै दर्व्यनसे ॥ युही. ॥ लिखमा कहे सत गुरके सणॉं, साचा हाल सुनावे मित्रनसे ॥ युंही. ॥ इति ॥

॥ अथ उपदेशकी ढाल दुजी लिख्यते ॥
हंसारे ओलख्यो नहीं जिन धर्म अग्यानी तुं रह्योजीरे ॥ हंसारे अवही गुरू सर्णो पाय कछु नहीं बिगडयोजीरे ॥ हंसारे पांच प्रमेश्वर नाम भज्या मुक्ती लहेजीरे ॥ हंसारे आठुं दे फोज खपाय गुरारे साजसुंजीरे ॥ हंसारे पांचु बैरी जीत मुक्तफल पावसीजीरे ॥ हंसारे सुगुरूनी अग्या पाल सिद्ध सिधायसीजीरे ॥ हंसारे लिखमो भाषे एम वीर अग्या चालीयेजीरे ॥ हंसारे मात तात अरू नाह सज्जन कोइ नहीजीरे ॥ हंसारे सज्जनहै जिनधर्म सिद्ध मिलायसीजीरे ॥ हं-

सारे चेत सकैतो चेत एहवी बिधतो मि-
लीजीरे ॥ हंसारे उतम गुर सुध जात
सुद्ध संगत मिलीजीरे ॥ इति ॥

॥ अथ पुज्य डालचंदजी महाराजके ॥
॥ गुणांकी ढाल लिख्यते ॥

मुर्ज थाने पुजसा भर मोतीयनको
थाल ॥ जराक मोडा उगजो ॥ कंथ
दिसावर जायवो ॥ आज मेरो कं. ॥
संग चलुंगी मेरी ज्यान वो पिया तोरे
संग चलुंगीरे ॥ ए देशी ॥ थाहारे दर्सको
चाय, वो सतगुर मोनें थाहारे दर्सको
चाय ॥ ए आ. ॥ सहेर लाडनूं आपहो
में हुं राजगढ माहे ॥ अंतरायके वसथकी

कैसे दर्स होजाय ॥ वो सत. ॥ सतगु-
रको दर्सन भलो साचा जिनका वैन ॥
सतगुरके दर्सन वीना घरी परै नहीं चैन
॥ वो सत. ॥ सुभनितीकी रीतहै थ्हांसें
भ्रन विनाह ॥ थें जिन सांसण सेहरा
महा मोटा सुनीराय ॥ वो सत. ॥ सास-
ण भ्राधिको दिपतो संत बहु बुद्धवान ॥
पंच महाव्रत पालवै सबही गुणाकी खान
॥ वो. ॥ सहेर उजीण मालवै भ्रोस वंस
श्रीकार ॥ जात पिपाडा द्रिपती तुम सां-
सणके सिणगार ॥ वो. ॥ डालचंद भिक्षु
तणै सप्तम वैठे पाट ॥ संत सत्यां बहु
विनवे धर्म ध्यानका ठाठ ॥ वो. ॥ लिखमो

सुराणो विनवें निचो सिस निवाय ॥ जे थाहारा दर्सन होवैतो लुल २ लागुं पाय ॥ वो सत. ॥ इति ॥

॥ अथ डालचंदजी महाराजके गुणांकी ॥
॥ ढाल दुजी लिख्यते ॥

डालगणी नित वंदसांजी वंदत होत आनंद श्रो महारा सतगुरजी ॥ १ ॥ जन सासणमें दिपतारे सोभता जेम जिनंद श्रो महारा सतगुरजी ॥ २ ॥ संत सत्यांबीच दिपतारे जेम देवांबीच इंद श्रो महारा सतगुरुजी ॥ ३ ॥ ध्यानधरे नित थाहरोरे करसी वे खेवो पार श्रो महारा सतगुरूजी ॥ ४ ॥ पंच महाव्रत पालवेरे

छेकायानां पिहर ओ महारा सतगुरुजी ॥ ५ ॥ बारह भेदे तपस्या करेरे ऊतरे संयम सार ओ महारा सतगुरुजी ॥ ६ ॥ परीसह सहण समर्थछेरे सत्तावीस गुणकी खान ओ महारा सतगुरुजी ॥ ७ ॥ त्रियालीस दोस टालीयनेरे अहार पानीरा लेणहार ओ महारा सतगुरुजी ॥ ८ ॥ बावन अणाचार टालवैरे ॥ सांसण अतिय सोभाय ओ महारा सतगुरुजी ॥९॥ निरलोभी निरलालचीरे नुतोडा नही जाय ओ महारा सतगुरुजी ॥ १० ॥ मोल लियो लेवे नहीरे सामर्थ तारणहार ओ महारा सतगुरुजी ॥ ११ ॥ नव वाडा

सहितहीरे पालेछे ब्रम्हचार ओ महारा सतगुरुजी ॥ १२ ॥ गूण अनंतही सोभतारे वर्ण्यां न मोसुं जाय ओ महारा सतगुरुजी ॥ १३ ॥ लिखमो सुराणो विनवेरे लुललुल लागूं पाय ओ महारा सतगुरुजी ॥ १४ ॥ फागण वदि एकादसीरे दर्वाजै ॐ मांह ओ महारा सतगुरुजी ॥ १५ ॥ गिरवांका गुण गावियारे मनमें हर्ख अथाय ओ महारा सतगुरुजी ॥ १६ ॥ इति ॥

॥ अथ श्री श्री महाराजधिराज पुज्य ॥

॥ उ.लचंदजीनो स्तवन लिख्यते ॥

मेरे घटकी घघरया रंगसे भरी ॥ ए देशी ॥ प्रभु थाहारे दर्सकी चाह

लगीरे ॥ प्र. ॥ ओस बंस अरू नगर उज्जी-
णी २ ॥ पिपाडो प्रभु जात खरीरे ॥ प्र. ॥
॥ १ ॥ नवकी साल प्रभु जन्म तुम्हारो २ ॥
सुभ तिथी अरू सुभ वार घरीरे ॥ प्र. ॥
२ ॥ साल तेवीसकी संयम आदरयो २ ॥
सुभ मन दिल वैराग धरीरे ॥ प्र. ॥ ३ ॥ साल
चोपन के पाट विराजे २ ॥ गणनायक सिर-
ताज सहीरे ॥ प्र. ॥ ४ ॥ छतीस गुण करी
अतिसय सोभे २ ॥ सुभ गुणवान भंडार
भरीरे ॥ प्र. ॥ ५ ॥ ब्रह्मचार नव वाडीसु पाले
२ ॥ वाल जती वुधवान सहीरे ॥ प्र. ॥ ६ ॥
पंच आचार पलावे अरू पाले २ ॥ पांचु इंद्री
दमी जो सहीरे ॥ प्र. ॥ ७ ॥ पंच महाव्रत

॥ध्या. ॥ अवदधी त्यारोजी ॥ सु० ॥ ॥ म. ॥ अ. ॥ हो. ॥ संत सत्या सिरमोड ॥ सु. ॥ म. ॥ अ. ॥ दर्सण दिज्योजी ॥ सु. ॥ म. ॥ द. ॥ होजी थांरी सेव कर सुर इंद्र ॥ सु. ॥ म. ॥ द. ॥ नीत उठ ध्याउंजी ॥ सु. ॥ थांने ॥ नी. ॥ हो. ॥ तिरण तारणरा जहाज ॥ सु. ॥ थां. ॥ नी. ॥ गुण अति भारीजी ॥ सु. ॥ थांरा ॥ गुणहो ॥ मुक्ती पंथ दातार ॥ सु. ॥ थांरा ॥ गु. ॥ लिखमो ध्यावेजी ॥ सुग्यानी थांने ॥ सीस निवावेजी ॥ हो. ॥ सासणरा सिणगार ॥ सुग्यानी हुतो ॥ सीस निवाउंजी ॥ इति ॥

॥ समाप्त ॥

तीर्थेश्वर–महिमा

दोहा

श्रीगुरु चरण मनाय के, गणपति को शिरनाय ।
सरस्वती जननी मेरी, बेठो हिरदे आय ॥ १ ॥
भीषमजी की बुद्धि को, नहीं है पारावार ।
एक पंथकूं भूलके, तेरे दिये निकार ॥ २ ॥
मैं तो बुद्धिहीन हूं, इनके ग्रन्थ अपार ।
तटही लखि मैंने लिख्यो, इनको अत्याचार ॥ ३ ॥
बाल-वृद्ध-विद्वद्सभा, सबको नावों सीस ।
कपटि कुटिल मैं बहुत हूं, जडहूं बिस्वा बीस ॥४॥
पुनि कविता आवे नहीं, सब मिलि करो सहाय ।
भूल चूक जो कहीं पढ़ो, दीजो सबे बनाय ॥५॥

कवित्त

जीव कहीं मारे तो पाप एक लागे सही,
　　मरते कों वचावे तो अठारे का फेरा है;
दान शाला खोले तो छकाय की हत्या लगे,
　　प्रतिमा की पूजा में ही आन पाप घेरा है।
मान-क्रोध राग द्वेष निर्दयता भरी खूव,
　　जैसे कोई चारेसुं भरत भुसेरा है;
कावुल के काका जमाई सारी सिन्धही के,
　　महावीर स्वामी प्रभु पंथ एक तेरा है ॥१॥

भजन (१)

सुनो तुम तेरा पंथी भाइ,
　　क्यों जीव दया विसराई ! (टेर)
सूत्र सपत्ते तुम नहीं मानों,
　　टीका निर्युक्ति नहीं जानो;
पहिले जीव का भेद वखानो,
　　पीछे पुद्गलकूं पहिचानो।

सबकी प्रलय समझलो पहिले,
फिर कीजो चतुराई
नाहि, पोल सभी खुलजाई, क्यों० ॥१॥
स्वास प्रलय पहिले समझाओ,
पीछे मिनट प्रलय पै आओ;
घड़ी प्रलय का रस्ता लाओ,
घंटे की सीधी दिखलाओ;
पहर प्रलय का करो खुलासा,
नहीं तो पढ़लो आई ।
सब अकड़ देऊ बिसराई ॥ क्यों० ॥२॥
दिवस प्रलय का होना जानो,
पीछे दिवस रात्रि को मानो;
इसी तरह सब युग कर मानो,
फिर सबकी योनि पहिचानो;
फिर आयु योनि ते बांधो,
ये सब करो उपाई ।
क्यों मरे जाओ इतराई ॥ क्यों० ॥

जीव सबों में रहता कैसे ?
उसका पालन होता कैसे ?
पुद्गल करे जीव की रक्षा,
जीव करे के पुद्गल की रक्षा;
जीव जीए के पुद्गल जीए,
ये सब सीखो जाई ।
नहीं सरम तुम्हें कछु आई ॥ क्यों० ॥४॥

भजन (२)

सुनो तुम तेरापंथी साधो,
क्यों पोट पाप की बांधो ? (टेर)
जीव ले जीव जीव को रचता,
जीव बिन जीव कोई नहीं बचता;
तुमरी अकल गई सब मारी,
तुम से तो अच्छी है नारी;
बिना बात क्यों अकड़ो भैया,
साधपना कछु साधो ।
क्यों पोट पाप की बांधो ॥ १ ॥

जो अनादि का चलता गेला,
उसमें तुमने दिया झमेला;
तुम से, भला कसाई जानो,
जिसका खास यही है वानो;
जिभे करावे पास ओर के,
पैसा देता आधो ।
क्यों पोट पाप की बांधो ॥ २ ॥
इतनी दया उसे भी आवे,
नहीं आप तलवार चलावे;
निबल जीव को पिटता देखे,
न्याव सभी उसका वो पेखे;
छुडा देय उसको जलदी से,
नहीं घंटा लगता आधो ।
क्यों पोट पाप की बांधो ॥ ३ ॥
तुमने उसको घात किया है,
ये रस्ता कैसा लीया है,

मरते को बचाना पाप समझते,
जीव दया से बिलकुल हटते;
सोच समझकर अपने दिल में,
दया धरम को साधो।
क्यों पोट पाप की बांधो ॥ ४ ॥

ख्याल (२)

थली के तेरे पंथी साधु, जीव दया को नहीं माने,
बने हैं जैनी जैनकी मर्यादा कछु नहीं जाने। (टेर)
नहीं सूत्र से काम कछु भी, ठुपरी खूब उड़ाते हैं।
मरते को बचाना पाप समझते, मनमानी धुन गाते हैं॥१॥
प्रतिमा पूजा लिखी सूत्र में, उनको नहीं सुनाते हैं।
उलटी सीधी बात बनाकर, दुनिया खूब रिझाते हैं ॥२॥

शेर

जाके पूछे जो कोई, सब सूत्र के आधार से;
शास्त्र की बातों को उलटी, कर दिखाते प्यार से।

प्रतिमा पूजा, जीव दया के, नामसे नफरत उन्हें;
'घणी खमा' और 'पूज्यता' को ईश्वर बनके सुने
शंका करता जो कोई जाकर,
उस पर ओघा वे ताने। बने हैं जैनी० ॥ १ ॥
साधु होकर झूंठ बोलना, किसी शास्त्र की नहीं सलाह
सूत्रों का कुल अर्थ पलट दिया,
झूंठ सरासर देखो मलाह।
पत्थर को तो नाव बना कर, बैठे हैं साधुजी मल्लाह;
साधु जी कहे पार लगी अब,
श्रावक लोग कहें जलदी लगाह ॥

शेर

संसार सिन्धु अपार है, यहां धर्म से लगती सही;
वहां पाप का बोझा भरा, और नाव पत्थर की वही।
मल्लाह को दीखे नहीं, फिर दंभ की विजया लही;
ये नाव तो के दिन तिरेगी? अब न डूबी अब सही।
जिस जिस को ये लेकर डूबे, जो कोई इनकी माने।
बने हैं जैनी० ॥ २ ॥

जिस साधुमें राग द्वेष हो, उस साधु का क्या हे पता?
साधमार्ग से प्रीति करते, औरो में रहे खोट वता।
जो ये नाम भूल के रक्खा, तो मंजूर करो अपनी खता,
दर्शन करने आप चलो और, श्रावकों को सव दीजे वता॥

शेर

मरते हुए को वचाने में, धर्म गर कुछ समझते;
शास्त्र को नहीं उलटते, फिर ना किसी से अटकते।
शास्त्र में जो समझते तो, धर्म से क्यों सटकते?
मोक्ष सीधी होइ जाती, नरक में क्यों लटकते?
सीधी गेल वताते हमतो, माने चाहे नहि माने।
वने हैं जैनी० ॥ ३ ॥

ये लड्डु दो दिन के भैया, आखिर रोटी खानी है;
सीधी रोटी ऊपर पानी, येही मोक्ष निशानी है।
राग द्वेष को जल्दी छोडो, प्रेमप्रीत मन लानी है;
झूठ का विलकुल त्याग वताते, साधुजन सुज्ञानी है॥

शेर

जो कहा डर के कहा और थोड़े लफ्ज़ो में कहा;
झूठ अक्षर कुछ नहीं, फिर सच भी थोड़ा कहा।
डर तो है मरने का मुझको, मारने से डर रहा;
वे धर्म को समझे नहीं कुछ, पाप घटमें अड रहा।
मालमस्त अन्धे क्या ज़ाने, जाके लागी सो जाने ॥
बने हैं जैनी० ॥ ४ ॥

ख्याल (५)

घर छोड़ा और मुंड मुड़ाया, साधुपना कुछ साधो तुम;
सभी को छोड़ो राग और द्वेष झूठ सच त्यागो तुम।
शास्त्र गुरू कोई जरूर करलो, येही सलाह हमारी है;
ये मत समझो कि लोक में, इज्जत जाय हमारी है ॥
'चैत्य' शब्द के आप कहो कि, सो सो अर्थ बताते हैं?
कोश बताओ, नहीं तो झूठी क्यों फर्माते हैं ॥

शेर

नाम 'ढूंढक' जो तुम पाया, नहीं ये सूत्र में देखा;
जैन के नाम पर तुमने, लगादीनी है ये रेखा।

जैन के नाम से नफरत, करी ये क्या गजब किया ?
साध मारग बना लिया, हक असली उठा दिया।
सीख मानलो यही हमारी, क्यों सब जन्म गमाते तुम।
सबी को छोड़ो० ॥ १ ॥

जैनशास्त्रका जो कुछ रस्ता, वो सब भूल गए भैया;
मुंको बांधा पेटनें चल रहा इंजन का पैया।
धर्म कर्म सब कूं खो बेठे, नाचे हैं ताता थैया;
कपटका बोझा भरा बहुत है, अब नहीं तिरनेकी नैया॥

शेर

निशीथ के चोथे उदेसे दंड रखना लिख रहा;
तुम पे ये दीखे नहीं पाखंड ये कीया कहा ?
आज्ञा में धर्म है सो तुम नहीं चलते कभी;
जैन का क्या धर्म है ? घरकी खबर लीजो कभी।
जो कुछ आज्ञा दी है जैनमें, नहीं मानी बिलकुल भीखम
सबी को छोडो० ॥ २ ॥

बार गुणे अरिहंत विराजे, पाठ कहां तुम दरसाया;
मन कल्पित सब पंथ चलाया, वक्ते हो मन का भाया।

भाष्य चूर्णि निर्युक्ति टीका, अर्थ से चित्त चुराया है;
चोरी कीनी देव गुरु की, ये सब धव्वा खाया है ॥

शेर

मुँह तो पाटे से बँधा और कान में डोरा दिया;
दैत्य का सा रूप कीया, खास वाना धर दिया।
प्रतिमा से नफरत तुम्हें, तसवीर क्यों खिचवा रहे;
तसवीर को खिचवा रहे, ये क्या गजब करवा रहे?
जैन शास्त्रका रस्ता छोड़ा, न्यारा झंडा गाड़ा तुम।
सभी को छोडो० ॥ ३ ॥

भगवती सूत्र का शतक वीसमा
जंघाचारण ओर विद्याचारण;
करी वंदणा उन प्रतिमा की, दोनों लीनी जाके सरण।
जीवाभिगम में विजयदेव ने, पूजा प्रतिमा की कीनी;
विजयदेव के अधिकार में, सतरह तरिया से कीनी ॥

शेर

विजयदेव के पूछने पर देवतों ने ये कहा:—
'तुमने जो पूजा करी कल्याणमंगल ले रहा।

प्रश्नव्याकरण के पाठ में 'पूजा' अहिंसा नाम है;
पूजा अहिंसा जब कही फिर, हिंसा का क्या काम
और बहुत से प्रमाण देखो, सोच समझ हठ छोड़ो तु
सर्वी को छोड़ो० ॥ ४ ॥

गजल (५)

देख सतजुग निबल राजा
जंग कलजुग ने ठानी है;
हुआ है पंथ इक ऐसा,
दया बिलकुल न मानी है (टेर)
बने हैं पात्र साधुजी,
देवो जो सब हमें दीजो;
नहीं देना किसी को कुछ,
यही एक बात ठानी है ॥ १ ॥
अगर मारे कसाई जो,
कहीं बकरे को आकरके;
बचाओ मत कहीं उसको,
यही उनकी कहानी है ॥ २ ॥

अगर गैया जलै घर में,
किसी के, जलने दो उसको;
अठारह पाप जो सेवे,
जिसे गैया बचानी है ॥ ३ ॥

खायेगी घास और पानी
करे मैथुन की तैय्यारी;
जने बच्चा कहीं बच्ची,
वे भी ले घास पानी है ॥ ४ ॥

लगेगा पाप उसही को,
कि जो इसको बचायेगा;
तेरेपंथी का ये मत है,
यही उनकी निशानी है ॥५॥

नहीं कुछ शास्त्र में समझे,
लिफाफा कोरा है बिलकुल;
दया से है उन्हें नफरत,
पाप में देह सानी है ॥ ६ ॥

समझलो बात सब उनकी,
कि क्या विद्या कमाई है;
असल रस्ते को खो बैठे,
नरक की बात ठानी है ॥ ७ ॥

गजल (६)

तेरापंथी के साधुजी,
ये क्या तुम बात गाते हो ?
बनाये सूत्र जिन आगम,
उन्हें चूका बताते हो (टेर)
दिया था दान बरसी का,
अगर कोई भी आजावे;
लिनी दीक्षा व जंगल में,
चले जाना बताते हो ॥ १ ॥
विप्र वन में भी जा पहुँचा,
वस्त्र आधा उसे दिया;

इसीसे दुःख उन पाया,
और चूका दिखाते हो ॥ २ ॥
करी सूर्याभने पूजा,
तरह सतरे से प्रतिमा की;
भवान्तर मोक्ष बतलाई,
लिखी जब क्यों छिपाते हो ? ॥३॥
करी द्रौपदि ने जो पूजा,
कहो मिथ्याती तुम उसको;
लिया समकित कहां उसने,
उसे क्यों नहीं बताते हो ॥ ४ ॥
अगर गाड़ा चला आवे,
निचे बचा जो मरता हो;
कहो साधु बचावे नहीं,
ये क्या तुम गीत गाते हो ? ॥ ५ ॥
दरद श्रावक के चलता हो,
कि साधु हाथ नहीं फेरे;

नजीर दीनी है जो तुमने,
ये दिन में रात लाते हो ॥ ६ ॥

रोग सबही को लगता है,
कि साधु साफ ही कहदे;
जहांपर वैद बैठा हो,
वहां तुम क्यों न जाते हो ? ॥

मगर बच्चा है लावारिस,
जभी गाडे से जो मरता;
बचाना तुम मना करते,
वहां क्या पाप लाते हो ? ॥ ७ ॥

लगाते हो यही फिक्रा,
हमें क्या गर्ज दुनिया से ?
लिखी होगी जैसी जिसकी,
वैसी तुम मोत गाते हो ॥ ८ ॥

पूछे हैं अब तुम्ही से ये,
लगे कोई रोग जब तुमको;

यही फिक्रा पढ़ो हरदम,
दवा क्योंकर कराते हो ? ॥ ९ ॥
जीव अपना सा सब देखो,
नहीं दीखे तो हमसे कहो;
दीया हम दिनमें जोरेंगे,
आप चश्मा लगाते हो ॥१०॥

गजल (७)

गुरु कपटी करे कोई,
नरक पहिले समझलेना;
धर्म ओर कर्म सब छोड़े,
दया का कुछ पता है ना (टेर)
मजब तो बहुत से देखे,
मगर ये आज ही देखा,
पता लगता नहीं इसका,
कि इसको क्या मजब कहना ॥ १ ॥
रहम रखते नहीं कुछ भी,
बने जल्लाद ही बैठे,

कथा सब क़त्ल की गावे,
सुनो तो जाके सुनलेना ॥ २ ॥

अगर मारे कोई किसको,
उसे जाकर बचावे जो,
उसे ही पाप लागेंगे,
अठारे को समझ लेना ॥ ३ ॥

अगर गरदन किसी की पे,
चले तलवार चलने दो;
जले जो आग में कोई,
इन्हें कोई मत बचा लेना ॥ ४ ॥

मती भूखों को दो भोजन,
मती दाने कबूतर को,
मती प्यासे को दो पानी,
देओ जो सब हमें देना ॥ ५ ॥

मती गायों को दो चारा,
मती नंगों को दो कपड़ा,

अगर दोगे क़र्हीं जो तुम,
हमारा हुक्म है कि ना ॥ ६ ॥
क़र्हीं देना पड़े दबके,
दबावट से किसी की से,
'तस्स मिच्छामि और दुक्कडं'
यही इक मंत्र पढ़देना ॥ ७ ॥
गती नीचीको पायेंगे,
संग भक्तों को लीने हैं,
चलो भाई संग सब श्रावक,
हमें कुछ रोटी दे देना ॥ ८ ॥
खबर ये कुछ नहीं उनको,
कि क्या रोटी व्हां रक्खी है !
दीया हो यहां किसीको कुछ,
तो व्हाँ जा करके लेलेना ॥ ९ ॥

दोहा।

तेरापंथी साधजी, रिस मत हूजो देख।
जैसी पोथी आपकी, वैसो कीनो लेख॥
ये तो थोड़ी सी बनी, आगे बनरही और।
भोजन थारी भर रही, कीनो पेलो कोर॥

JAINISM-IN EUROPE

Alexander Gorden's opinion
General precepts,

BY

TAPSIWIJI SRI KEWAL RISHIJI AND MUNI

SRI AMOLAKH RISIHJI

"Quoted from Jain Hitechhu."

PUBLISHED BY,

LALA MAMCHAND PRAGRAJ DADRIWALA,

Secunderabad Deccan,

Palton No. 6.

Printed at the Ambika Press,

Gowliguda, Hyderabad Deccan.

यूरोपमें-जैन धर्म

तपस्वीजी श्री केवल ऋषिजी और
बालब्रह्मचारी मुनिश्री अमोलख ऋषि
जी के सद्बोधसे-

'जैनहितेच्छु' मासिक पुस्तकसे ग्रहणकर

सिकन्दराबाद (दक्षिण हैदराबाद)
पलटन नं० ६ निवासी
लाला-मामचंद परागराज दादरीवालेने
प्रसिद्ध किया
मूल्य-जैनास्विकार
वी० २४४१, विक्रम १९७१, इस्वी १९१४

श्री अंबिका प्रेस, गौळीगुडा, हैदराबाद (दक्षिण)

प्रस्तावना

"सत्यमेवजयते"

जोसच्चा होताहै वो सदा सच्चाही बना रहता
,और वो सत्य प्रेमीजनों को प्राप्तभी होताहै
से वो प्राणोंसे भी अधिक प्यारा कर अङ्गीकार
रतेहैं, कदापि कोइ उसे असत्य के परदेसे छि-
पै तो वो छिपता नहींहैं, थोडेही काल बाद स
प्रेमी सज्जनो उस परदे को अलग कर सत्यकी
यं प्रकाशी रश्मिको सर्व के दृष्टिगत करतेहैं-
ससे वोसत्यसदा जयवन्त बनाही रहताहै, इ
आर्य्य भूमन्डलमें पराचीन कालमें जैनधर्म
पमान्य तों क्या? परन्तु सर्वमान्य अद्विती-
ान रहाथा, वो अर्वाचीन (मध्यकाल)में का-

लादि के प्रभावसे मन्द प्रकाशी होने लगाथा,
से पुनःसत्यप्रेमी जनोंने प्रकाश में लाने जो त
हा मन से पर्यत्न किया तो वो अभि पहिले की
तरहही प्रकाश मय होने लगाहै, यह देख मुझे
बडाही हर्ष होताहै कि सत्यहै-'सत्यमेवजयते

इस समय में इस हिन्दभूमी से भी अधिक
प्रकाश विद्याका युरोपादि क्षेत्रों मे होताहुवा
प्रत्यक्ष जाना जाताहै,पश्चिमत्य विद्वानों सत्यके
शोकीन बन जोजोविशेष सत्यमय उनको जान
नेमे आताहै उसे बडेही प्रेमपुर्वक स्वीकार करने
लगेहैं: जिसका एकपूरावा अमदावादनिवासी
भाइवाडीलाल मोतीलालशाह कीतरफसे प्रसि
द्ध होता'जैन हितेच्छु" मासिक पुस्तक के १५वे
वर्ष के १२वे अंक में मेरेदृष्टि गोचर होने से मैं

रा मन वडाही हार्षितहुवा, और इसका विशेष मतार लाभका कारण जाण गुजराती भाषा में छपेहुवे अर्थकों हिन्दी भाषा मेंबना कर प्रसिद्ध करने केलिये दिल्लीजिल्लेके दादरीग्राम के निवासी धर्मप्रेमी लाला सामचन्द परागराज कि जो अभी सिकन्द्राब की छटे नंबर कि पलटन में कारकूनहैं उनके सुपरत किया, उनोंने इसे सभार स्वीकार छपवाकर सत्य धर्मार्थियों को जो अमूल्य लाभदिया है, इस केलिये उन्हे धन्यवाध दिया जाताहै.

अमोलखऋषि

अँलेकझान्डर गॉर्डन, नाम के एक पाश्चात्य विद्वान महाशय जैनधर्म का स्वीकारकर जैनधर्म के सम्बन्ध में कटाक्ष लिखखनेवाले "मेन्चेस्टर गार्डी अन" पत्र के एक लेखकने "धीवेजीटेरीअनमेसेन्जर अेन्ड हॅल्थ रिव्यु"नामके पत्रद्वारा एक बहुतही गंभीर और बोधकर्ता जवाव प्रगट कियाहै वो अक्षरसः यहां प्रगट करनेमे आतहै.

वाडीलाल मोतीलाल शाह

The Jains of india as Vegetarian

By Alexander Gorden.

हिन्दके जैनो वनस्पत्याहारी तरीके

लिखनेवाले-ॲलेकझानुर गॉर्डन

A short time ago reference was made
Manchester Guardian's "Miscellany." co
to the Jains of India, who are described
"heretical and ultra-humanitarian sect of H
ism," and also that "its founder was cont
rary with Buddha.

थोडेदिन पहिले 'मेन्चेस्टर गॉर्डीअन' प
परचुरण विषयोंमें हिन्द के जैनों के सम्बन

इसारा कियाथा,और जैनो कों पाखण्ड मनवाले तथा जीवदया के सिद्धान्त को हदसे ज्यादा तान के लेजानेवाली हिन्दु धर्म की एक शाखा रुप बतायेथे, और ऐसालिखाथाकि-जैनधर्म के स्थापक बुद्धके समकाल में हुवेहैं.

These words suggest a most adverse criticism, particularly from the Vegetarian point of view, which is my reason for sending this article to the Vegetarian Messenger.

इन शब्दो में बहुत वे वाजवी टीका करने मे आइ है, खासकर के वेजीटरीयन दृष्टिविन्दु से तो यह टीका बहुतही विपरीत है, और इसके लियेही मेरा यह लेख वेजीटेरीअन मेसेन्जर मे भेजाहै

Regarding the statement, "its founder was

contemporary with Buddha" it will perhaps interest some of the many Messenger readers to know that Jainism was thoroughly established as a religious and philosophical system many years before the advent of Buddha. According to the teachings of the Jains, the universe is for the evolution of all living beings, and consequently all forms of life are regarded as sacred by them—"live and let live' being their guiding principle. The ideal of the Jain philosophy is the physical, mental, moral and spiritual perfection of man This is the essential goal of every living being, hence the Jain's great respect for all manifested forms of life, and such an ideal is embodied in one of their greatest sayings "Ahimsa Paramo Dharmah"—"Noninjury to life is the highest religion." "Ahimsa (not to kill) is the first of the five principles of morality in Jainism Compassion is the root of all virtue to the Jains consequently all their affairs of life are based on the principle of "Daya' (love.) They

have an intense detestation towards any form of blood—shedding, because any such degrading action disturbs the conditions to ensure the right progress of the soul in the course of its spiritual evolution.

"जैनधर्म के स्थापकों बुद्धके वक्तमेंथे" इस कथन के सम्बन्ध में इस पत्र के कितनेक बांचनेवालों को वाकेफ करना अच्छा होगाकि-बुद्धके बहुत वर्षों पहिले जैनधर्म और जैनदर्शन सम्पूर्ण तोरसे जमाहुवा था, जैनधर्म का शिक्षण ऐसा है कि-इस विश्वके सर्वजीवों की उत्क्रान्ति (उंच दिशा प्रसकरने) केलियेही है, और इससे जैनधर्मी सबजाति के जीवों को पवित्र समझते हैं, और उनका मुद्रालेख "तुम जीतेरहो और दूसरों को जीनेदौ" ऐसाहै, शारीरिक, मानासिक, नैतिक औ

र अध्यात्मिक सम्पूर्णता येही जैनफीलसुफी की उत्कृष्ठ भावनाहै, हरेकजीवों का खास लक्षविन्दू भी येही मानागयाहै, और इसी सेही जैनों तमाम व्यक्तजीवों को वडी मान दृष्ठि से देखतेहैं, और "अहिंसा परमो धर्मः" ऐसे उनके महान् सूत्रमें यह भावना रक्खीगइहै, किसी भी जीतेहुवे प्राणी को मारनेसे के इजा करनसे हिंसा होतीहै, क्रोध लोभ काम गर्व और प्रमाद (वेफिकरी)के कराण से मनुष्य दूसरे जीवोंकी हिंसा कर डालताहै,परन्तु जोवो आपनी आत्मा पर ऐसा अंकुश रक्खोकि आर्थात् जो ऐसी तरहका 'संयम' करेकि-जिससे बिकारों उसपर कीसी प्रकार की असर कर सकेंनहीं, तो वो अहिंसा को प्राप्त करता है,

To kill or injure any living being is to commit "Himsa" When man is governed by wrats, greed, lust, pride and carelessness he is prone to k ll other living beings, which, from the Jain standpoint is committing "Himsa," but if man controls himself so that he is not dominated by passions, he embraces "Ahimsa." The Jains teach that the spiritual evolution of man is utterly impossible whilst he kills, or ever injures other living beings; thus they strongly assert that those who injure others injure themselves also. To the Jains it is, therefore, obvious that when a man kills another being and eats its flesh he spiritually generates heartlessness before he kilis the other lving being

जैनों कहतेहैं कि-दूसरे जीतेहुवे प्राणी को मारना किंवा इजाकरना जहां तक चलुरहेगा वहां तक मनुष्यकी आत्मिक उत्क्रान्ति (SPIRI-TURL EVOBUTION)होना बिलकूलही असक्य

है;और इसशिक्षण केआधारसे वोनजन देकरकह तेहैं कि-जोदूसरों को इजा करताहै वो उसके द्वारा अपनको भी इजा करता है, जैनों को यहवान स्पष्ट-खुल्ली समझ मे आतीहै-जो मनुष्य दूसरे प्राणी को मारता है, और उसका मांसखाता है उस मनुष्यका आत्मा निर्दय होजाताहै!

Those who argue that man is superior to the animals, because of a mistaken belief that they are for his sole use, make a tragic mistake they are not aware of the fact that through thinking such actions which involve the killing of animals for the purpose of gratifying a depraved sense of taste, they are generating most harmful conditions which retard not only the spiritual development of the victim, but their own spiritual evolution. All flesh eaters, by their very sense of taste, literally regard soul and matter as one because the eating of a dead body cannot in the

slightest degree benefit man's souls. An attribute belonging to a matter cannot be converted into an attribute of soul, and vice versa, for tangibility, taste, smell, colour, are attributes of matter and cannot become attributes of soul. Hence the jain's practise Vegetarianism in a very strict sense, even to the point of not unnecessarily killing, with intent, any insect. Extreme as this ideal may be to the Western mind, I understand the late James Allen, of Ilfracombe, founded a brotherhood the members of which literally carried out this principle as strictly as possible.

"जानवरों मनुष्यों केलियेही हैं" ऐसी भूल से भरीहुइ मानता के आधार से जो ऐसी दलील करतेहैं कि-मनुष्य जानवरों से श्रेष्ठहै, वो एकक रुणा उत्पन्न होवे ऐसीभूलकरतेहैं, उनको इससत्य का भान नहीं है-उनके कल्पित जिभ्याके स्वाद केलिये प्राणीयों को मारने का विचार मात्रकरने

से भी वो ऐसा घातिकी संयोग उत्पन्न करतेहैं
कि-वो संयोगो उनके भोगमें आतोहुवे प्राणी की
तैसेही आपकी आत्मिक उत्क्रान्ति को दखल क
रतेहैं,सब मांस आहारीओं जिभ्या सवादके का
रण से आत्मा को और जडपदार्थों को एक रूप
मे मानतेहैं; परन्तु जडपदार्थों का गुण कभी जी
व का गुण बन शक्ताही नहीं है, और जीवका-
गुण सो जडपदार्थ का गुण बनशक्तानहीं है, का
रण कि-स्पर्श, गन्ध,रस, रंग, सब जडके गुणोंहैं
और वो गुणों कभी आत्माके गुणबनशक्ते नहीं
हैं, इसलिये जैनों चुस्त वनस्प त्याहारी पना पा
लतेहैं, यहां तककि-वो किसीछोटेसे प्राणीको भी
खास कारण सिवाय और इरादा पूर्वक मारते

नहीं हैं, यह भावना भलांहि पश्चिम के लोको कों हदसे ज्यादा मालुम होवो परन्तु में जानताहूंकी इल्फ्राकोम्ब के वतनी स्वर्गस्थ जेइम्स अलने स्था पन कियाहूवा "बन्धुसामज" के सभासदों येही सिद्धान्त बनलके उतनी चीवट-खांतसे पालतेथे-

The Jains teach that the killing of animal involves the hindering of the evolution of th killer and killed on the path of the spiritua progress of all souls. Such is the foundatio of the Jain religion, and to its true follower no morality, no religion, his higher than the precepts of Ahimsa, therefore the rightly claim to be absolute believers in the universal Brotherhood of all Living Beings. "Thou shalt not kill" is found in almost every known religion, an when its full import is acknowledged and applied to all living beings in the sense of the term "Do unto others as you would that they shoul

do to you," there will be found the Jaina Doct-
rine of Ahimsa, which is the bases of all religi-
ous ideals on account of its being the root cause
of all good in the world, and which also com-
prises all virtuous actions and moral principles
of all the religions of the world. Thus, in prac-
tising the Jain principle of Ahimsa, all Vege-
tarians pay homage to this Highest and Purest
Principle of Virtue.

जैनधर्म ऐसा शिक्षण देताहै कि प्राणियों को मार
नेसेमारनेवाला और मरनेवाला दोनोंकी आत्मिक
उन्नति में दखल पहोंचताहै, जैनधर्म का पाया
नीम) ऐसा है, और इस धर्म के अनुयायि-
यों अहिंसा व्रत करते किसी भी नीति या कि
सी भी धर्म को महान् गिनते नहीं हैं, इसलिये
प्राणी मात्र के सर्वजनिक 'बन्धु मन्डल के सचे
सचे मान ने वाले तरीके का उनका दावा वाज-

वीहै. 'तू हिंसा करना मत' ऐसा (बाइबलका) शिक्षावचन प्रायः सब प्रसिद्ध धर्मों में देखने में आताहै, और जिसवक्त इस शिक्षावचन का गुप्त-रहस्य स्वीकारने में आताहै और सब प्राणियोंपर लगाने में आताहै उसवक्त, "जो चलन तुमारे लिये होता हुवा देखने को तुमचहातेहो, वैसाही चलन दूसरे के साथ करो" ऐसे (क्रिश्चियन धर्मके महावाक्यमें जैनधर्मका 'अहिंसा' शिक्षण छिपाहुवा मालुम पडताहै 'यह अहिंसा शिक्षण ही सब धर्मिक भावना का पायाहै. कारण कि—दुनिया के सब अच्छेकाम इससेही होते हैं. और दुनिया के तमाम धर्मके सब नैतिक सिद्धान्तों तथा सद्गुणी कृतव्यों का इसीमे समावेस होताहै. इस से समझ में आवेगा कि जैनोंके अ-

हिंसा सिद्धान्तके पालन करने में सब वजीटेरी अनो [वनस्पति आहारिओं] मात्र सर्वोत्तम और पवित्र में पवित्र सद्गुणों के सिद्धान्तों कोही पूजतेहैं.

A well-known doctrine to be found in the religions of the East is that of re-birth, and it is also found in the philosophy of the Jains. in order that man may continue to live he is obliged to destroy life, but the less and lower manifest ations of life he destroys, the less harmful Karms he creates. This is the foundation of the very strict Vegetarian rules of the Jains who teach that there are eight clases of energies [karmas] unnatural to the pure soul. To reduce the activities connected with these karmic energies is the Jain's object in life, and following up

the principle of Ahimsa, hospitals for old and maimed animals have been erected in many towns and cities in India for these creature to be fed and carefully tended until the time of their natural death

पहिले के धर्मों में पुनर्जन्मों का सिद्धान्त प्रसिद्ध है, और यह सिद्धान्त जैन फीलसूफी में भी है. जीवन निभाने के लिये मनुष्यों से एक या दूसरे जीवोंकी हिंसातो होजाती है, परन्तु जितने कमी प्रमाण में हिंसाहोवै, और ज्योंकमी इन्द्रियों वालेजीव की हिंसा से चलासकें तैसेकमी नुकशान कारक कर्म बन्ध को कर्ता होताहै. जैनों के चुस्त वेजीटेरीअन कानूनो का पाया यह हैं, वो ऐसा शिक्षण देतेहैं कि-आठप्रकार के कर्म हैं वो शुद्धात्मा को लगते नहींहैं, जिससे क-

संबन्ध होवै ऐसी प्रवृत्ति जैसें बने वैसे करनी करनी, येही जैन जीवन का आशयहै. अहिंसाके सिद्धान्त को अनुसरके-जैनोंने हिन्दके बहुत से शहरोंमें बुड्ढे और अपङ्ग जानवरों केलिये पींजरापोलों का स्थापन कियाहै. वहां ऐसे जानवरों को खान पान कराने में आताहै और कुदरती रीत से मृत्यु आवे वहां तक उनकी बरोबर वरदास उठाने मे आतीहै.

Also, their institutions, manners, customs, worship and ceremonial are based upon the absolute recognition of the fact that non-injury is the highest religion, with the result that Vegetarianism in the strictest sense of the word is one of the chief tenets of Jainism, which is primarily a religion of the heart. It is clear that this religion

of the Jains is built up upon love, and it can truly be said of them that they have fully realised the practical way of leaving the "Christ-like" life as presented to the Western world in the great seer Swedenborg's statement—

इतनाही नहीं परंतु जैनों कि विविध संस्थाओं रीवाजों रीत भाँत पूजाविधि और दूसरी विधियों सब अहिंसा येही परम धर्महै.एसे सिद्धान्त के पाये के ऊपरही रचाहुवाहै, इसके परिणाम से चुस्त वेजीटेरीअन पना यह जैनधर्म का मुख्य सिद्धान्त होगयाहै, और येही धर्मप्रेम के पाये परबन्धाहुवा है, और उनके सम्बन्ध में सत्यतासे कहसक्ते हैं कि –"क्राइस्ट जैसा जीवन, पश्चिम के लोकों को महान् गुप्तदृष्टा स्वीडनबोर्ग ने इन शब्दों में चेताया था.

" जीवन का धर्म यहहै कि सबका भलाकरना"

VEGETARIANISM AND TENDER-HEARTENDNESS

Towards Living Beings.

AUM.

अहिंसा उपदेश के दाखले

1 Man is to treat the dumb animals with kindness: "A righteous man regardeth the life * of his beast." (Bible: Prov. xii: 10)

(१) अर्थात्-मनुष्यों को उचित है कि अवाचक (मुके) प्राणीयों के साथ दयालुता का वरताव करना चाहिये, नेक अच्छे मनुष्यों को अपने पाले हुवे पशु का भी ख्याल रहता है. [बाइबल]

2 Animals are not to be slighted. (Bible Eccles. iii: 18, 19, 20, and 21.)

(२) अर्थत्-जीवों की हिंसा नहीं होना चाहिये [बाइबल)

3 "Thou shalt not kill." (Bible: Ex. xx: 13)

(३) अर्थात्—तूं हिंसा मत कर (बाइबल)

4 "Ma himsyat sarva bhutani" *i. e.* Torture not any living being. (Veda Sruti.)

(४)—"माहिंसात् सर्व भूतानि" किसी भी प्राणी को मारो मत (वेदश्रुति)

5 'Atmavat sarva bhutani yah pasyati sa pasyati' *i. e.* He who looks upon all living beings like himself, sees God. (Veda Sruti.)

(५)"आत्मवत् सर्व भूतानि पश्यति सः पश्यति" अर्थात्-अपनी आत्मा समान सब जीवोंको जो देखताहै. वोही आँखोंवालाहै [वेदश्रुति]

6 "Ahimsa paramo dharmah" *i.e.* Cessation from torture (to living beings) is highest religion (of man)—(Upanishad.)

(६) "अहिंसा परमो धर्म्मः" अर्थात् परमधर्म

वोही है कि जहां किंचित मात्र हिंसानहो.

7 "Prana danat param danam na bhutam na bhavishyati" *i.e.* There has not been nor will be a greater gift than the gift of life *(Bhishmacharya: Mahabharat)

(७) प्राण दानत् परम दानम् । न भूतो न भविष्यति, अर्थात्-प्राणदान देने के जैसा दान और नहुवा और नहोगा [भीष्माचार्य-महाभारत]

8 "I observe the precept to refrain from destroying the life* of beings." BudahistDharma

(८) अर्थात्-हिंसा नहीं करने की शिक्षा को में मनन करताहूं। (बौध धर्म)

9 Intoxicating liquors and drugs are prohibited. Ilobserve the precept to abstain from using intoxicants." (Buddh st Dharma)

(९) अर्थात्-नशा पेदा करने वाला पानी औ-

र दवाइ कि मनाहै नशा नहीं करने, कीशिक्षा में मनन करताहूं [बौध धर्म]

10 Love and do good to all mankind alike without difference of caste, colour or creed. All are equally loved by God." A new commandment I give unto you, that ye love one another; as I have loved you, that ye also love one another. Bible: St. John xiii. 34.)

(१०) अर्थात्–सर्व मनुष्यों के साथ प्रेम और मेहरवानी का वरतावा कर, जात रङ्ग इत्यादि का भेद नरक्ख कर इश्वरका सबोंपर एकसा प्यारहै यह उमदा हुकम में तुझेदेताहूं कि तूं सबके साथ प्यार कर, जैसामें तेरेसे प्यार करताहूं ऐसीतरह तूंभी सब के साथ प्यारकर.

And when you spread forth your hands, I will hind my eyes from you, yes, when ye make many prayers, I will not hear your hands are full of blood -[HUSIA.]

अर्थात्ईश्वरकहतेहै जिसवक्त तुम[विनंति करने के लिये तुमारे हाथ ऊंचे करोगे उसवक्तमें मेरी आँखों तुमारी तरफ से दूसरी तरफ फिरा लेवुंगा और विनंति पर मेरी विनंति करोगे तो भी मैं ध्यान न देऊंगा, क्योंकि-तुमारे हाथ (जीवों को मारने से] रक्त-लोही से भरे हुवेहैं (हुसीया शास्त्रका आठवा अध्याय)

The true spirit of religion comforts as well as comprises the soul.

अर्थात्-सच्चे धार्मिष्ट पन से आत्मा को दिलासा और शान्ति मिलती है पामर.

Religion what treasures untold, reside in that heavenly word

More precious than silver and golder all this earth can afford.

अर्थात्—"धर्म" इस स्वर्गीय शब्द में कित
अकथ्य खजाना समायां हुवाहै, सोना रुपा
दि पृथवी के सर्व पदार्थों से भी बहुत मुल्यवा
है.

It is better to be unborn than untaught; f
ignorence is the root of all evils

अर्थात्—नहीं पढने से नहीं जन्मनाही अच्छ
है, क्योंकि—अज्ञानताही दुःखों का मूलहै.

Our passions play the tyrants in our breast
pers.

अर्थात्—हमारे मनोविकारका हमारे दिलों प
साम्राज्य रहता है.

Have your conscience as your guide.

तुह्मारी सद् असद् बिवेक बुद्धि को अपनी
रहबर बनाओ.

Do unto others as you would be done tha
others should do.

दूसरोंके साथ ऐसा बरताव करो जैसा के तु
तुह्मारे साथ दूसरोंका बरताव हुवा चाहते हो.